## AA Jhgfj% AA

# o’kk[k&dkfrd&ek?k& ekl&ekgkRE;

॥ श्रीहरिः ॥

# विषय-सूची

## वैशाख-माहात्म्य ( पद्मपुराणके अनुसार )


विषय — पृष्ठ-संख्या

१- भगवद्भक्तिके लक्षण तथा वैशाख-स्नानकी महिमा ........................ १
२- वैशाख-माहात्म्य ........................ ७
३- वैशाख-स्नानसे पाँच प्रेतोंका उद्धार तथा 'पाप-प्रशमन' नामक स्तोत्रका वर्णन ........................ १२
४- वैशाखमासमें स्नान, तर्पण और श्रीमाधव-पूजनकी विधि एवं महिमा ........................ २१
५- यम-ब्राह्मण-संवाद—नरक तथा स्वर्गमें ले जानेवाले कर्मोंका वर्णन ........................ ३१
६- तुलसीदल और अश्वत्थकी महिमा तथा वैशाख-माहात्म्यके सम्बन्धमें तीन प्रेतोंके उद्धारकी कथा ........................ ३६
७- वैशाख-माहात्म्यके प्रसङ्गमें राजा महीरथकी कथा और यम-ब्राह्मण-संवादका उपसंहार ........................ ४४


## वैशाख-माहात्म्य ( स्कन्दपुराणके अनुसार )


१- वैशाखमासकी श्रेष्ठता; उसमें जल, व्यजन, छत्र, पादुका और अन्न आदि दानोंकी महिमा ........................ ५७
२- वैशाखमासमें विविध वस्तुओंके दानका महत्त्व तथा वैशाखस्नानके नियम ........................ ६०
३- वैशाखमासमें छत्रदानसे हेमकान्तका उद्धार ........................ ६४
४- महर्षि वसिष्ठके उपदेशसे राजा कीर्तिमान्का अपने राज्यमें वैशाखमासके धर्मका पालन कराना और यमराजका ब्रह्माजीसे राजाके लिये शिकायत करना ........................ ६८
५- ब्रह्माजीका यमराजको समझाना और भगवान् विष्णुका उन्हें वैशाखमासमें भाग दिलाना ........................ ७४
६- भगवत्कथाके श्रवण और कीर्तनका महत्त्व तथा वैशाख-मासके धर्मोंके अनुष्ठानसे राजा पुरुयशाका सङ्कटसे उद्धार ............ ७८
७- राजा पुरुयशाको भगवान्का दर्शन, उनके द्वारा भगवत्स्तुति और भगवान्के वरदानसे राजाकी सायुज्य मुक्ति ........................ ८३

८- शङ्ख-व्याध-संवाद, व्याधके पूर्वजन्मका वृत्तान्त ...................... ८७
९- भगवान् विष्णुके स्वरूपका विवेचन, प्राणकी श्रेष्ठता, जीवोंके विभिन्न स्वभावों और कर्मोंका कारण तथा भागवतधर्म ................ ९२
१०- वैशाखमासके माहात्म्य-श्रवणसे एक सर्पका उद्धार और वैशाखधर्मके पालन तथा रामनाम-जपसे व्याधका वाल्मीकि होना ............ १००
११- धर्मवर्णकी कथा, कलिकी अवस्थाका वर्णन, धर्मवर्ण और पितरोंका संवाद एवं वैशाखकी अमावास्याकी श्रेष्ठता ................ १०५
१२- वैशाखकी अक्षय तृतीया और द्वादशीकी महत्ता, द्वादशीके पुण्यदानसे एक कुतियाका उद्धार ...................... १११
१३- वैशाखमासकी अन्तिम तीन तिथियोंकी महत्ता तथा ग्रन्थका उपसंहार ......... ११६

## कार्तिक-माहात्म्य (स्कन्दपुराणके अनुसार)

१- कार्तिकमासकी श्रेष्ठता तथा उसमें करनेयोग्य स्नान, दान, भगवत्पूजन आदि धर्मोंका महत्त्व ...................... ११९
२- विभिन्न देवताओंके संतोषके लिये कार्तिकस्नानकी विधि तथा स्नानके लिये श्रेष्ठ तीर्थोंका वर्णन ...................... १२४
३- कार्तिकव्रत करनेवाले मनुष्यके लिये पालनीय नियम .................. १३०
४- कार्तिकव्रतसे एक पतित ब्राह्मणीका उद्धार तथा दीपदान एवं आकाशदीपकी महिमा ...................... १३४
५- कार्तिकमें तुलसी-वृक्षके आरोपण और पूजन आदिकी महिमा ..... १३८
६- त्रयोदशीसे लेकर दीपावलीतकके उत्सवकृत्यका वर्णन ................ १४२
७- कार्तिक शुक्ला प्रतिपदा और यमद्वितीयाके कृत्य तथा बहिनके घरमें भोजनका महत्त्व ...................... १४६
८- आँवलेके वृक्षकी उत्पत्ति और उसका माहात्म्य ...................... १५०
९- गुणवतीका कार्तिकव्रतके पुण्यसे सत्यभामाके रूपमें अवतार तथा भगवान्के द्वारा शङ्खासुरका वध और वेदोंका उद्धार ............ १५४
१०- कार्तिकव्रतके पुण्यदानसे एक राक्षसीका उद्धार ...................... १५८
११- भक्तिके प्रभावसे विष्णुदास और राजा चोलका भगवान्के पार्षद होना ......... १६२
१२- जय-विजयका चरित्र ...................... १६७
१३- सांसर्गिक पुण्यसे धनेश्वरका उद्धार, दूसरोंके पुण्य और पापकी आंशिक प्राप्तिके कारण तथा मासोपवास-व्रतकी संक्षिप्त विधि ...... १७०
१४- तुलसीविवाह और भीष्मपञ्चक-व्रतकी विधि एवं महिमा ............ १७४

विषय　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　पृष्ठ-संख्या


१५- एकादशीको भगवान्‌के जगानेकी विधि, कार्तिकव्रतका उद्यापन और अन्तिम तीन तिथियोंकी महिमाके साथ ग्रन्थका उपसंहार ..... १८०


## कार्तिक-माहात्म्य ( पद्मपुराणके अनुसार )


१- कार्तिक-व्रतका माहात्म्य—गुणवतीको कार्तिक-व्रतके पुण्यसे भगवान्‌की प्राप्ति .................... १८५

२- कार्तिककी श्रेष्ठताके प्रसङ्गमें शङ्खासुरके वध, वेदोंके उद्धार तथा 'तीर्थराज' के उत्कर्षकी कथा .................... १८९

३- कार्तिकमासमें स्नान और पूजनकी विधि .................... १९३

४- कार्तिक-व्रतके नियम और उद्यापनकी विधि .................... २००

५- कार्तिक-व्रतके पुण्य-दानसे एक राक्षसीका उद्धार .................... २०७

६- कार्तिक-माहात्म्यके प्रसङ्गमें राजा चोल और विष्णुदासकी कथा ... २११

७- पुण्यात्माओंके संसर्गसे पुण्यकी प्राप्तिके प्रसङ्गमें धनेश्वर ब्राह्मणकी कथा ....... २१८

८- अशक्तावस्थामें कार्तिक-व्रतके निर्वाहका उपाय .................... २२६

९- कार्तिकमासका माहात्म्य और उसमें पालन करनेयोग्य नियम....... २२८

१०- शूकरक्षेत्रका माहात्म्य तथा मासोपवास-व्रतकी विधिका वर्णन....... २३३

११- शालग्रामशिलाके पूजनका माहात्म्य .................... २३६

१२- भगवत्पूजन, दीपदान, यमतर्पण, दीपावली-कृत्य गोवर्धन-पूजा और यमद्वितीयाके दिन करने योग्य कृत्योंका वर्णन.................... २३९

१३- प्रबोधिनी एकादशी और उसके जागरणका महत्त्व तथा भीष्मपञ्चक-व्रतकी विधि एवं महिमा .................... २४३


## माघ-माहात्म्य ( पद्मपुराणके अनुसार )


१- वसिष्ठजीका दिलीपसे तथा भृगुजीका विद्याधरसे माघस्नानकी महिमा बताना तथा माघस्नानसे विद्याधरकी कुरूपताका दूर होना... २४९

२- मृगशृङ्ग मुनिका भगवान्‌से वरदान प्राप्त करके अपने घर लौटना .. २५६

३- मृगशृङ्ग मुनिके द्वारा माघके पुण्यसे एक हाथीका उद्धार तथा मरी हुई कन्याओंका जीवित होना .................... २६२

४- यमलोकसे लौटी हुई कन्याओंके द्वारा वहाँकी अनुभूत बातोंका वर्णन ..........२७२

५- महात्मा पुष्करके द्वारा नरकमें पड़े हुए जीवोंका उद्धार............... २८४

६- माघस्नानके लिये मुख्य-मुख्य तीर्थ और नियम .................... २८९

७- माघमासके स्नानसे सुव्रतको दिव्यलोककी प्राप्ति .................... २९३

# वैशाख-माहात्म्य

## भगवद्भक्तिके लक्षण तथा वैशाख-स्नानकी महिमा

**अम्बरीष बोले**—मुनिश्रेष्ठ! आपने बड़ी अच्छी बात बतायी, इसके लिये आपको धन्यवाद है! आप सम्पूर्ण लोकोंपर अनुग्रह करनेवाले हैं। आपने भगवान् विष्णुके सगुण एवं निर्गुण ध्यानका वर्णन किया; अब आप भक्तिका लक्षण बतलाइये। साधुओंपर कृपा करनेवाले महर्षे! मुझे यह समझाइये कि किस मनुष्यको कब, कहाँ, कैसी और किस प्रकार भक्ति करनी चाहिये।

**सूतजी कहते हैं**—राजाओंमें श्रेष्ठ महाराज अम्बरीषके ये वचन सुनकर देवर्षि नारदजीको बड़ी प्रसन्नता हुई। वे उनसे बोले—राजन्! सुनो—भगवान्की भक्ति समस्त पापोंका नाश करनेवाली है, मैं तुमसे उस भक्तिका भलीभाँति वर्णन करता हूँ। भक्ति अनेकों प्रकारकी बतायी गयी है—मानसी, वाचिकी, कायिकी, लौकिकी, वैदिकी तथा आध्यात्मिकी। ध्यान, धारणा, बुद्धि तथा वेदार्थके चिन्तनद्वारा जो विष्णुको प्रसन्न करनेवाली भक्ति की जाती है, उसे 'मानसी' भक्ति कहते हैं। दिन-रात अविश्रान्त भावसे वेदमन्त्रोंके उच्चारण, जप तथा आरण्यक आदिके पाठद्वारा जो भगवान्की प्रसन्नताका सम्पादन किया जाता है, उसका नाम 'वाचिकी' भक्ति है। व्रत, उपवास और नियमोंके पालन तथा पाँचों इन्द्रियोंके संयमद्वारा की जानेवाली आराधना [शरीरसे साध्य होनेके कारण] 'कायिकी' भक्ति कही गयी है; यह सब प्रकारकी सिद्धियोंका सम्पादन करनेवाली है। पाद्य, अर्घ्य आदि उपचार, नृत्य, वाद्य, गीत, जागरण तथा पूजन आदिके द्वारा जो

भगवान्‌की सेवा की जाती है, उसे लौकिकी भक्ति कहते हैं। ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेदके जप, संहिताओंके अध्ययन आदि तथा हविष्यकी आहुति—यज्ञ-यागादिके द्वारा की जानेवाली उपासनाका नाम 'वैदिकी' भक्ति है। विज्ञ पुरुषोंने अमावस्या, पूर्णिमा तथा विषुव[1] (तुला और मेषकी संक्रान्ति) आदिके दिन जो याग करनेका आदेश दिया है, वह वैदिकी भक्तिका साधक है।

अब मैं योगजन्य आध्यात्मिकी भक्तिका भी वर्णन करता हूँ, सुनो। योगज भक्तिका साधक सदा अपनी इन्द्रियोंको संयममें रखकर प्राणायामपूर्वक ध्यान किया करता है। विषयोंसे अलग रहता है। वह ध्यानमें देखता है—भगवान्‌का मुख अनन्त तेजसे उद्दीप्त हो रहा है, उनकी कटिके ऊपरी भागतक लटका हुआ यज्ञोपवीत शोभा पा रहा है। उनका शुक्ल वर्ण है, चार भुजाएँ हैं। उनके हाथोंमें वरद एवं अभयकी मुद्राएँ हैं। वे पीत वस्त्र धारण किये हुए हैं तथा उनके नेत्र अत्यन्त सुन्दर हैं। वे प्रसन्नतासे परिपूर्ण दिखायी देते हैं। राजन्! इस प्रकार योगयुक्त पुरुष अपने हृदयमें परमेश्वरका ध्यान करता है।

जैसे प्रज्वलित अग्नि काष्ठको भस्म कर डालती है, उसी प्रकार भगवान्‌की भक्ति मनुष्यके पापोंको तत्काल दग्ध कर देती है। भगवान् श्रीविष्णुकी भक्ति साक्षात् सुधाका रस है, सम्पूर्ण रसोंका एकमात्र सार है। इस पृथ्वीपर मनुष्य जबतक उस भक्तिका श्रवण नहीं करता—उसका आश्रय नहीं लेता, तभीतक उसे सैकड़ों बार जन्म, मृत्यु और जराके आघातसे होनेवाले नाना प्रकारके दैहिक दुःख प्राप्त होते हैं। यदि महान् प्रभावशाली भगवान् अनन्तका कीर्तन और स्मरण किया जाय तो वे समस्त पापोंका नाश कर देते हैं, ठीक उसी तरह, जैसे वायु मेघका तथा सूर्यदेव अन्धकारका विनाश कर डालते हैं।

१-जब दिन और रात बराबर हों, उस दिन विषुवयोग होता है।

राजन्! देवपूजा, यज्ञ, तीर्थ-स्नान, व्रतानुष्ठान, तपस्या और नाना प्रकारके कर्मोंसे भी अन्तःकरणकी वैसी शुद्धि नहीं होती, जैसी भगवान् अनन्तका ध्यान करनेसे होती है।* नरनाथ! जिनमें पवित्र यशवाले तथा अपने भक्तोंको भक्ति प्रदान करनेवाले विशुद्धस्वरूप भगवान् श्रीविष्णुका कीर्तन होता है, वे ही कथाएँ शुद्ध हैं तथा वे ही यथार्थ, वे ही लाभ पहुँचानेवाली और वे ही हरिभक्तोंके कहने-सुनने योग्य होती हैं। भूमण्डलके राज्यका भार सम्हालनेवाले धीरचित्त महाराज अम्बरीष! तुम धन्य हो; क्योंकि तुम्हारा हृदय पुरुषोत्तमके ध्यानमें एकतान हो रहा है तथा सौभाग्यलक्ष्मीसे सुशोभित होनेवाली तुम्हारी नैष्ठिक बुद्धि श्रीकृष्णचन्द्रकी पुण्यमयी लीलाओंके श्रवणमें प्रवृत्त हो रही है। भूपते! भक्तोंको वरदान देनेवाले अविनाशी भगवान् श्रीविष्णुकी भक्तिपूर्वक आराधना किये बिना अहङ्कारवश अपनेको ही बड़ा माननेवाले पुरुषका कल्याण कैसे होगा। भगवान् मायाके जन्मदाता हैं, उनपर मायाका प्रभाव नहीं पड़ता। साधु पुरुष उन्हें भक्तिके द्वारा ही प्राप्त करते हैं, इस बातको तुम भी जानते हो। राजन्! धर्मका कोई भी तत्त्व ऐसा नहीं है, जो तुम्हें ज्ञात न हो। फिर भी जिनके चरण ही तीर्थ हैं, उन भगवान्की चर्चाका प्रसङ्ग उठाकर जो तुम उनकी सरस कथाको मुझसे विस्तारके साथ पूछ रहे हो— उसमें यही कारण है कि तुम वैष्णवोंका गौरव बढ़ाना चाहते हो— मुझ-जैसे लोगोंको आदर दे रहे हो। साधु-संत जो एक-दूसरेसे मिलनेपर अधिक श्रद्धाके साथ भगवान् अनन्तके कल्याणमय गुणोंका कीर्तन और श्रवण करते हैं, इससे बढ़कर परम संतोषकी बात तथा

---

* न भूप देवार्चनयज्ञतीर्थस्नानव्रताचारक्रियातपोभिः।
तथा विशुद्धिं लभतेऽन्तरात्मा यथा हृदिस्थे भगवत्यनन्ते॥ (८५। २८)

समुचित पुण्य मुझे और किसी कार्यमें नहीं दिखायी देता। ब्राह्मण, गौ, सत्य, श्रद्धा, यज्ञ, तपस्या, श्रुति, स्मृति, दया, दीक्षा और संतोष—ये सब श्रीहरिके स्वरूप हैं। सूर्य, चन्द्रमा, वायु, पृथ्वी, जल, आकाश, दिशाएँ, ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र तथा सम्पूर्ण प्राणी उस परमेश्वरके ही स्वरूप हैं। इस चराचर जगत्को उत्पन्न करनेकी शक्ति रखनेवाले वे विश्वरूप भगवान् स्वयं ही ब्राह्मणके शरीरमें प्रवेश करके सदा उन्हें खिलाया जानेवाला अन्न भोजन करते हैं; इसलिये जिनकी चरण-रेणु तीर्थके समान है, भगवान् अनन्त ही जिनके आधार हैं, जो सम्पूर्ण प्राणियोंके आत्मा तथा पुण्यमयी लक्ष्मीके सर्वस्व हैं, उन ब्राह्मणोंका आदरपूर्वक पूजन करो। जो विद्वान् ब्राह्मणको विष्णुबुद्धिसे देखता है, वही सच्चा वैष्णव है तथा वही अपने धर्ममें भलीभाँति स्थित माना जाता है। तुमने भक्तिके लक्षण सुननेके लिये प्रार्थना की थी, सो सब मैंने तुम्हें सुना दिया। अब गङ्गा-स्नान करनेके लिये जा रहा हूँ।

'यह वैशाखका महीना उपस्थित है, जो भगवान् लक्ष्मीपतिको अत्यन्त प्रिय है। इसकी भी आज शुक्ला सप्तमी है; इसमें गङ्गाका स्नान अत्यन्त दुर्लभ है। पूर्वकालमें राजा जह्नुने वैशाख शुक्ला सप्तमीको क्रोधमें आकर गङ्गाजीको पी लिया था और फिर अपने दाहिने कानके छिद्रसे उन्हें बाहर निकाला था; अतः जह्नुकी कन्या होनेके कारण गङ्गाको 'जाह्नवी' कहते हैं। इस तिथिको स्नान करके जो आकाशकी मेखलाभूत गङ्गादेवीका उत्तम विधानके साथ पूजन करता है, वह मनुष्य धन्य एवं पुण्यात्मा है। जो वैशाख शुक्ला सप्तमीको विधिपूर्वक गङ्गामें देवताओं और पितरोंका तर्पण करता है, उसे गङ्गादेवी कृपा-दृष्टिसे देखती हैं तथा वह स्नानके पश्चात् सब पापोंसे मुक्त हो जाता है। वैशाखके समान कोई मास नहीं है तथा गङ्गाके

सदृश दूसरी कोई नदी नहीं है। इन दोनोंका संयोग दुर्लभ है। भगवान्‌की भक्तिसे ही ऐसा सुयोग प्राप्त होता है। गङ्गाजीका प्रादुर्भाव भगवान् श्रीविष्णुके चरणोंसे हुआ है। वे ब्रह्मलोकसे आकर भगवान् शङ्करके जटा-जूटमें निवास करती हैं। गङ्गा समस्त दुःखोंका नाश करनेवाली हैं। वे अपने तीन स्रोतोंसे निरन्तर प्रवाहित होकर तीनों लोकोंको पवित्र करती रहती हैं। उन्हें स्वर्गपर चढ़नेके लिये सीढ़ी माना गया है। वे सदा आनन्द देनेवाली, नाना प्रकारके पापोंको हरनेवाली, संकटसे तारनेवाली, भक्तजनोंके अन्तःकरणमें दिव्य प्रकाश फैलानेकी लीलासे सुशोभित होनेवाली, सगरके पुत्रोंको मोक्ष प्रदान करनेवाली, धर्म-मार्गमें लगानेवाली तथा तीन मार्गोंसे प्रवाहित होनेवाली हैं। गङ्गादेवी तीनों लोकोंका शृङ्गार हैं। वे अपने दर्शन, स्पर्श, स्नान, कीर्तन, ध्यान और सेवनसे हजारों पवित्र तथा अपवित्र पुरुषोंको पावन बनाती रहती हैं। जो लोग दूर रहकर भी तीनों समय 'गङ्गा, गङ्गा, गङ्गा' इस प्रकार उच्चारण करते हैं, उनके तीन जन्मोंका पाप गङ्गाजी नष्ट कर देती हैं। जो मनुष्य हजार योजन दूरसे भी गङ्गाका स्मरण करता है, वह पापी होनेपर भी उत्तम गतिको प्राप्त होता है।

'राजन्! वैशाख शुक्ला सप्तमीको गङ्गाजीका दर्शन विशेष दुर्लभ है। भगवान् श्रीविष्णु और ब्राह्मणोंकी कृपासे ही उस दिन उनकी प्राप्ति होती है। माधव (वैशाख)-के समान महीना और माधव (विष्णु)-के समान कोई देवता नहीं है; क्योंकि पापके समुद्रमें डूबते हुए मनुष्यके लिये माधव ही जहाजका काम देते हैं। माधवमासमें जो भक्तिपूर्वक दान, जप, हवन और स्नान आदि शुभ कर्म किये जाते हैं, उनका पुण्य अक्षय तथा सौ करोड़गुना अधिक होता है। जिस प्रकार देवताओंमें विश्वात्मा भगवान् नारायणदेव श्रेष्ठ हैं, जैसे जप करनेयोग्य मन्त्रोंमें गायत्री सबसे उत्कृष्ट है, उसी प्रकार नदियोंमें

गङ्गाजीका स्थान सबसे ऊँचा है। जैसे सम्पूर्ण स्त्रियोंमें पार्वती, तपनेवालोंमें सूर्य, लाभोंमें आरोग्यलाभ, मनुष्योंमें ब्राह्मण, पुण्योंमें परोपकार, विद्याओंमें वेद, मन्त्रोंमें प्रणव, ध्यानोंमें आत्मचिन्तन, तपस्याओंमें सत्य और स्वधर्म-पालन, शुद्धियोंमें आत्मशुद्धि, दानोंमें अभयदान तथा गुणोंमें लोभका त्याग ही सबसे प्रधान माना गया है, उसी प्रकार सब मासोंमें वैशाखमास अत्यन्त श्रेष्ठ हैं। पापोंका अन्त वैशाखमासमें प्रातःस्नान करनेसे होता है। अन्धकारका अन्त सूर्यके उदयसे तथा पुण्योंका अन्त दूसरोंकी बुराई और चुगली करनेसे होता है। राजन्! कार्तिकमासमें जब सूर्य तुलाराशिपर स्थित हों, उस समय जो स्नान-दान आदि पुण्यकार्य किया जाता है, उसका पुण्य परार्धगुना[१] अधिक होता है। माघमासमें जब मकरराशिपर सूर्य हों तो कार्तिककी अपेक्षा भी हजारगुना उत्तम फल होता है और वैशाखमासमें मेषकी संक्रान्ति होनेपर माघसे भी सौगुना अधिक पुण्य होता है। वे ही मनुष्य पुण्यात्मा और धन्य हैं, जो वैशाखमासमें प्रातःकाल स्नान करके विधि-विधानसे भगवान् लक्ष्मीपतिकी पूजा करते हैं। वैशाखमासमें सबेरेका स्नान, यज्ञ, दान, उपवास, हविष्य-भक्षण तथा ब्रह्मचर्यका पालन—ये महान् पातकोंका नाश करनेवाले हैं। राजन्! कलियुगमें वैशाखकी महिमा गुप्त नहीं रहने पायगी; क्योंकि उस समय वैशाख-स्नानका माहात्म्य अश्वमेध-यज्ञके अनुष्ठानसे भी बढ़कर है। कलियुगमें परमपावन अश्वमेध-यज्ञका अनुष्ठान नहीं हो सकता। उस समय वैशाखमासका स्नान ही अश्वमेध-यज्ञके समान विहित है। कलियुगके अधिकांश मनुष्य पापी होंगे। उनकी बुद्धि पापमें ही आसक्त होगी; अतः वे अश्वमेधके पुण्यको, जो स्वर्ग और

१. संख्याकी पराकाष्ठाका नाम 'परार्ध' है। आधुनिक गणनाके अनुसार यह संख्या 'शङ्ख' या 'महाशङ्ख' कहलाती है।

मोक्षरूप फल प्रदान करनेवाला है, नहीं जान सकेंगे। उस समयके लोग अपने पापोंके कारण नरकमें पड़ेंगे। अतएव कलियुगके लिये अश्वमेधका प्रचार कम कर दिया गया [और उसके स्थानपर वैशाखमासके स्नानका विधान किया गया]।

## वैशाख-माहात्म्य

**सूतजी कहते हैं**—महात्मा नारदके ये वचन सुनकर राजर्षि अम्बरीषने विस्मित होकर कहा—'महामुने! आप मार्गशीर्ष (अगहन) आदि पवित्र महीनोंको छोड़कर वैशाखमासकी ही इतनी प्रशंसा क्यों करते हैं? उसीको सब मासोंमें श्रेष्ठ क्यों बतलाते हैं? यदि माधव-मास सबसे श्रेष्ठ और भगवान् लक्ष्मीपतिको अधिक प्रिय है तो उस समय स्नान करनेकी क्या विधि है? वैशाखमासमें किस वस्तुका दान, कौन-सी तपस्या तथा किस देवताका पूजन करना चाहिये? कृपानिधे! उस समय किये जानेवाले पुण्यकर्मका आप मुझे उपदेश कीजिये। सद्गुरुके मुखसे उपदेशकी प्राप्ति दुर्लभ होती है। उत्तम देश और कालका मिलना भी बड़ा कठिन होता है। राज्य-प्राप्ति आदि दूसरे कोई भी भाव हमारे हृदयको इतनी शीतलता नहीं प्रदान करते, जितनी कि आपका यह समागम।

**नारदजीने कहा**—राजन्! सुनो, मैं संसारके हितके लिये तुमसे माधवमासकी विधिका वर्णन करता हूँ। जैसा कि पूर्वकालमें ब्रह्माजीने बतलाया था। पहले तो जीवका भारतवर्षमें जन्म होना ही दुर्लभ है, उससे भी अधिक दुर्लभ है—वहाँ मनुष्यकी योनिमें जन्म। मनुष्य होनेपर भी अपने-अपने धर्मके पालनमें प्रवृत्ति होनी तो और भी कठिन है। उससे भी अत्यन्त दुर्लभ है—भगवान् वासुदेवमें भक्ति

और उसके होनेपर भी माधवमासमें स्नान आदिका सुयोग मिलना तो और भी कठिन है। माधवमास माधव (लक्ष्मीपति)-को बहुत प्रिय है। माधव (वैशाख)-मासको पाकर जो विधिपूर्वक स्नान, दान तथा जप आदिका अनुष्ठान करते हैं, वे ही मनुष्य धन्य एवं कृतकृत्य हैं। उनके दर्शनमात्रसे पापियोंके भी पाप दूर हो जाते हैं और वे भगवद्भावसे भावित होकर धर्माचरणके अभिलाषी बन जाते हैं। वैशाखमासके जो एकादशीसे लेकर पूर्णिमातक अन्तिम पाँच दिन हैं, वे समूचे महीनेके समान महत्त्व रखते हैं। राजेन्द्र! जिन लोगोंने वैशाखमासमें भाँति-भाँतिके उपचारोंद्वारा मधु दैत्यके मारनेवाले भगवान् लक्ष्मीपतिका पूजन कर लिया, उन्होंने अपने जन्मका फल पा लिया। भला, कौन-सी ऐसी अत्यन्त दुर्लभ वस्तु है जो वैशाखके स्नान तथा विधिपूर्वक भगवान्‌के पूजनसे नहीं प्राप्त होती। जिन्होंने दान, होम, जप, तीर्थमें प्राणत्याग तथा सम्पूर्ण पापोंका नाश करनेवाले भगवान् श्रीनारायणका ध्यान नहीं किया, उन मनुष्योंका जन्म इस संसारमें व्यर्थ ही समझना चाहिये। जो धनके रहते हुए भी कंजूसी करता है, दान आदि किये बिना ही मर जाता है, उसका धन व्यर्थ है।

राजन्! उत्तम कुलमें जन्म, अच्छी मृत्यु, श्रेष्ठ भोग, सुख, सदा दान करनेमें अधिक प्रसन्नता, उदारता तथा उत्तम धैर्य—ये सब कुछ भगवान् श्रीविष्णुकी कृपासे ही प्राप्त होते हैं। महात्मा नारायणके अनुग्रहसे ही मनोवाञ्छित सिद्धियाँ मिलती हैं। जो कार्तिकमें, माघमें तथा माधवको प्रिय लगनेवाले वैशाखमासमें स्नान करके मधुहन्ता लक्ष्मीपति दामोदरकी विशेष विधिके साथ भक्तिपूर्वक पूजा करता है और अपनी शक्तिके अनुसार दान देता है, वह मनुष्य इस लोकका सुख भोगकर अन्तमें श्रीहरिके पदको प्राप्त होता है। भूप! जैसे सूर्योदय होनेपर अन्धकार नष्ट हो जाता है, उसी प्रकार वैशाखमासमें प्रातःस्नान

करनेसे अनेक जन्मोंकी उपार्जित पापराशि नष्ट हो जाती है। यह बात ब्रह्माजीने मुझे बतायी थी। भगवान् श्रीविष्णुने माधवमासकी महिमाका विशेष प्रचार किया है। अतः इस महीनेके आनेपर मनुष्योंको पवित्र करनेवाले पुण्यजलसे परिपूर्ण गङ्गातीर्थ, नर्मदातीर्थ, यमुनातीर्थ अथवा सरस्वतीतीर्थमें सूर्योदयके पहले स्नान करके भगवान् मुकुन्दकी पूजा करनी चाहिये। इससे तपस्याका फल भोगनेके पश्चात् अक्षय स्वर्गकी प्राप्ति होती है। भगवान् श्रीनारायण अनामय—रोग-व्याधिसे रहित हैं, उन गोविन्ददेवकी आराधना करके तुम भगवान्का पद प्राप्त कर लोगे। राजन्! देवाधिदेव लक्ष्मीपति पापोंका नाश करनेवाले हैं, उन्हें नमस्कार करके चैत्रकी पूर्णिमाको इस व्रतका आरम्भ करना चाहिये। व्रत लेनेवाला पुरुष यमनियमोंका पालन करे, शक्तिके अनुसार कुछ दान दे, हविष्यान्न भोजन करे, भूमिपर सोये, ब्रह्मचर्यव्रतमें दृढ़तापूर्वक स्थित रहे तथा हृदयमें भगवान् श्रीनारायणका ध्यान करते हुए कृच्छ्र आदि तपस्याओंके द्वारा शरीरको सुखाये। इस प्रकार नियमसे रहकर जब वैशाखकी पूर्णिमा आये, उस दिन मधु तथा तिल आदिका दान करे, श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको भक्तिपूर्वक भोजन कराये, उन्हें दक्षिणासहित धेनु-दान दे तथा वैशाख-स्नानके व्रतमें जो कुछ त्रुटि हुई हो उसकी पूर्णताके लिये ब्राह्मणोंसे प्रार्थना करे। भूपाल! जिस प्रकार लक्ष्मीजी जगदीश्वर माधवकी प्रिया हैं, उसी प्रकार माधव-मास भी मधुसूदनको बहुत प्रिय है। इस तरह उपर्युक्त नियमोंके पालनपूर्वक बारह वर्षोंतक वैशाख-स्नान करके अन्तमें मधुसूदनकी प्रसन्नताके लिये अपनी शक्तिके अनुसार व्रतका उद्यापन करे। अम्बरीष! पूर्वकालमें ब्रह्माजीके मुखसे मैंने जो कुछ सुना था, वह सब वैशाखमासका माहात्म्य तुम्हें बता दिया।

**अम्बरीषने पूछा**—मुने! स्नानमें परिश्रम तो बहुत थोड़ा है, फिर

भी उससे अत्यन्त दुर्लभ फलकी प्राप्ति होती है—मुझे इसपर विश्वास क्यों नहीं होता? मुझे मोह क्यों हो रहा है?

**नारदजीने कहा**—राजन्! तुम्हारा संदेह ठीक है। थोड़े-से परिश्रमके द्वारा महान् फलकी प्राप्ति असम्भव-सी बात है; तथापि इसपर विश्वास करो, क्योंकि यह ब्रह्माजीकी बतायी हुई बात है। धर्मकी गति सूक्ष्म होती है, उसे समझनेमें बड़े-बड़े पुरुषोंको भी कठिनाई होती है। श्रीहरिकी शक्ति अचिन्त्य है, उनकी कृतिमें विद्वानोंको भी मोह हो जाता है। विश्वामित्र आदि क्षत्रिय थे, किन्तु धर्मका अधिक अनुष्ठान करनेके कारण वे ब्राह्मणत्वको प्राप्त हो गये; अतः धर्मकी गति अत्यन्त सूक्ष्म है। भूपाल! तुमने सुना होगा, अजामिल अपनी धर्मपत्नीका परित्याग करके सदा पापके मार्गपर ही चलता था। तथापि मृत्युके समय उसने केवल पुत्रके स्नेहवश 'नारायण' कहकर पुकारा—पुत्रका चिन्तन करके 'नारायण' का नाम लिया; किन्तु इतनेसे ही उसको अत्यन्त दुर्लभ पदकी प्राप्ति हुई। जैसे अनिच्छापूर्वक भी यदि आगका स्पर्श किया जाय तो वह शरीरको जलाती ही है, उसी प्रकार किसी दूसरे निमित्तसे भी यदि श्रीगोविन्दका नामोच्चारण किया जाय तो वह पापराशिको भस्म कर डालता है।* जीव विचित्र हैं, जीवोंकी भावनाएँ विचित्र हैं, कर्म विचित्र है तथा कर्मोंकी शक्तियाँ भी विचित्र हैं। शास्त्रमें जिसका महान् फल बताया गया हो, वही कर्म महान् है [फिर वह अल्प परिश्रम-साध्य हो या अधिक परिश्रम-साध्य]। छोटी-सी वस्तुसे भी बड़ी-से-बड़ी वस्तुका नाश होता देखा जाता है। जरा-सी चिनगारीसे बोझ-के-बोझ तिनके स्वाहा हो जाते हैं। जो श्रीकृष्णके भक्त हैं, उनके अनजानमें

* अनिच्छयापि दहति स्पृष्टो हुतवहो यथा। तथा दहति गोविन्दनाम व्याजादपीरितम्॥
(८७। ८)

किये हुए हजारों हत्याओंसे युक्त भयङ्कर पातक तथा चोरी आदि पाप भी नष्ट हो जाते हैं। वीर! जिसके हृदयमें भगवान् श्रीविष्णुकी भक्ति है वह विद्वान् पुरुष यदि थोड़ा-सा भी पुण्य-कार्य करता है तो वह अक्षय फल देनेवाला होता है। अतः माधवमासमें माधवकी भक्तिपूर्वक आराधना करके मनुष्य अपनी मनोवाञ्छित कामनाओंको प्राप्त कर लेता है—इस विषयमें संदेह नहीं करना चाहिये। शास्त्रोक्त विधिसे किया जानेवाला छोटे-से-छोटा कर्म क्यों न हो, उसके द्वारा बड़े-से-बड़े पापका भी क्षय हो जाता है तथा उत्तम कर्मकी वृद्धि होने लगती है। राजन्! भाव तथा भक्ति दोनोंकी अधिकतासे फलमें अधिकता होती है। धर्मकी गति सूक्ष्म है, वह कई प्रकारोंसे जानी जाती है। महाराज! जो भावसे हीन है—जिसके हृदयमें उत्तम भाव एवं भगवान्‌की भक्ति नहीं है, वह अच्छे देश और कालमें जा-जाकर जीवनभर पवित्र गङ्गा-जलसे नहाता और दान देता रहे तो भी कभी शुद्ध नहीं हो सकता—ऐसा मेरा विचार है। अतः अपने हृदय-कमलमें शुद्धभावकी स्थापना करके वैशाखमासमें प्रातःस्नान करनेवाला जो विशुद्धचित्त पुरुष भक्तिपूर्वक भगवान् लक्ष्मीपतिकी पूजा करता है, उसके पुण्यका वर्णन करनेकी शक्ति मुझमें नहीं है। अतः भूपाल! तुम वैशाखमासके फलके विषयमें विश्वास करो। छोटा-सा शुभकर्म भी सैकड़ों पापकर्मोंका नाश करनेवाला होता है। जैसे हरिनामके भयसे राशि-राशि पाप नष्ट हो जाते हैं, उसी प्रकार सूर्यके मेषराशिपर स्थित होनेके समय प्रातःस्नान करनेसे तथा तीर्थमें भगवान्‌की स्तुति करनेसे भी समस्त पापोंका नाश हो जाता है।* जिस प्रकार गरुड़के तेजसे साँप भाग जाते हैं, उसी तरह प्रातःकाल

* यथा हरेर्नामभयेन भूप नश्यन्ति सर्वे दुरितस्य वृन्दाः।
नूनं रवौ मेषगते विभाते स्नानेन तीर्थे च हरिस्तवेन॥ (८। ३४)

वैशाख-स्नान करनेसे पाप पलायन कर जाते हैं—यह निश्चित बात है। जो मनुष्य मेषराशिके सूर्यमें गङ्गा या नर्मदाके जलमें नहाकर एक, दो या तीनों समय भक्तिभावके साथ पाप-प्रशमन नामक स्तोत्रका पाठ करता है, वह सब पापोंसे मुक्त होकर परम पदको प्राप्त होता है। 'अम्बरीष! इस प्रकार मैंने थोड़ेमें यह वैशाख-स्नानका सारा माहात्म्य सुना दिया, अब और क्या सुनना चाहते हो?'

## वैशाख-स्नानसे पाँच प्रेतोंका उद्धार तथा 'पाप-प्रशमन' नामक स्तोत्रका वर्णन

**अम्बरीषने कहा**—मुने! जिसके चिन्तनमात्रसे पापराशिका लय हो जाता है, उस पाप-प्रशमन नामक स्तोत्रको मैं भी सुनना चाहता हूँ। आज मैं धन्य हूँ, अनुगृहीत हूँ; आपने मुझे उस शुभ विधिका श्रवण कराया, जिसके सुननेमात्रसे पापोंका क्षय हो जाता है। वैशाखमासमें जो भगवान् केशवके कल्याणमय नामोंका कीर्तन किया जाता है, उसीको मैं संसारमें सबसे बड़ा पुण्य, पवित्र, मनोरम तथा एकमात्र सुकृतसे ही सुलभ होनेवाला शुभ कर्म मानता हूँ। अहो! जो लोग माधवमासमें भगवान् मधुसूदनके नामोंका स्मरण करते हैं वे धन्य हैं। अतः यदि आप उचित समझें तो मुझे पुनः माधवमासकी ही पवित्र कथा सुनायें।

**सूतजी कहते हैं**—राजाओंमें श्रेष्ठ हरिभक्त अम्बरीषका वचन सुनकर नारद मुनिको बड़ी प्रसन्नता हुई। यद्यपि वे वैशाख-स्नानके लिये जानेको उत्कण्ठित थे, तथापि सत्सङ्गमें आनन्द आनेके कारण रुक गये और राजासे बोले।

**नारदजीने कहा**—महीपाल! मुझे ऐसा जान पड़ता है कि यदि

दो व्यक्तियोंमें परस्पर भगवत्कथा-सम्बन्धी सरस वार्तालाप छिड़ जाय तो वह अत्यन्त विशुद्ध—अन्तःकरणको शुद्ध करनेवाला होता है। आज तुम्हारे साथ जो माधवमासके माहात्म्यकी चर्चा चल रही है, यह वैशाख-स्नानकी अपेक्षा अधिक पुण्य प्रदान करनेवाली है; क्योंकि माधवमासके देवता भगवान् श्रीविष्णु हैं [अतः उसका कीर्तन भगवान्‌का ही कीर्तन है]। जिसका जीवन धर्मके लिये और धर्म भगवान्‌की प्रसन्नताके लिये है तथा जो रातों-दिन पुण्योपार्जनमें ही लगा रहता है, उसीको इस पृथ्वीपर मैं वैष्णव मानता हूँ। राजन्! अब मैं वैशाख-स्नानसे होनेवाले पुण्य-फलका संक्षेपसे वर्णन करता हूँ; विस्तारके साथ सारा वर्णन तो मेरे पिता—ब्रह्माजी भी नहीं कर सकते। वैशाखमें डुबकी लगानेमात्रसे समस्त पाप छूट जाते हैं। पूर्वकालकी बात है, कोई मुनीश्वर तीर्थयात्राके प्रसङ्गसे सर्वत्र घूम रहे थे। उनका नाम था मुनिशर्मा। वे बड़े धर्मात्मा, सत्यवादी, पवित्र तथा शम, दम एवं शान्तिधर्मसे युक्त थे। वे प्रतिदिन पितरोंका तर्पण और श्राद्ध करते थे। उन्हें वेदों और स्मृतियोंके विधानोंका सम्यक् ज्ञान था। वे मधुर वाणी बोलते और भगवान्‌का पूजन करते रहते थे। वैष्णवोंके संसर्गमें ही उनका समय व्यतीत होता था। वे तीनों कालोंके ज्ञाता, मुनि, दयालु, अत्यन्त तेजस्वी, तत्त्वज्ञानी और ब्राह्मणभक्त थे। वैशाखका महीना था, मुनिशर्मा स्नानके लिये नर्मदाके किनारे जा रहे थे। उसी समय उन्होंने अपने सामने पाँच पुरुषोंको देखा, जो भारी दुर्गतिमें फँसे हुए थे। वे अभी-अभी एक-दूसरेसे मिले थे! उनके शरीरका रंग काला था। वे एक बरगदकी छायामें बैठे थे और पापोंके कारण उद्विग्न होकर चारों ओर दृष्टिपात कर रहे थे। उन्हें देखकर द्विजवर मुनिशर्मा बड़े विस्मयमें पड़े और सोचने लगे—इस भयानक वनमें ये मनुष्य कहाँसे आये? इनकी चेष्टा बड़ी

दयनीय हैं, किन्तु इनका आकार बड़ा भयङ्कर दिखायी देता है। ये पापभागी चोर तो नहीं हैं? विप्रवर मुनिशर्माकी बुद्धि बड़ी स्थिर थी, वे ज्यों ही इस प्रकार विचार करने लगे, उसी समय उपर्युक्त पाँचों पुरुष उनके पास आये और हाथ जोड़कर मुनिशर्मासे बोले।

**उन पुरुषोंने कहा**—विप्रवर! हमें आप कल्याणमय पुरुषोत्तम जान पड़ते हैं। हम दुःखी जीव हैं। अपना दुःख विचारकर आपको बताना चाहते हैं। द्विजराज! आप कृपा करके हमारी कष्ट-कथा सुनें। दैववश जिनके पाप प्रकट हो गये हैं, उन दीन-दुःखी प्राणियोंके आधार आप-जैसे संत-महात्मा ही हैं। साधु पुरुष अपनी दृष्टिमात्रसे पीड़ितोंकी पीड़ाएँ हर लेते हैं। [अब उनमेंसे एकने सबका परिचय देना आरम्भ किया—] मैं पञ्चाल देशका क्षत्रिय हूँ, मेरा नाम नरवाहन है। मैंने मार्गमें मोहवश बाणद्वारा एक ब्राह्मणकी हत्या कर डाली। मुझसे ब्रह्म-हत्याका पाप हो गया है। इसलिये शिखा, सूत्र और तिलकसे रहित होकर इस पृथ्वीपर घूमता हूँ और सबसे कहता फिरता हूँ कि 'मैं ब्रह्महत्यारा हूँ।' मुझ महापापी ब्रह्मघातीको आप कृपाकी भिक्षा दें। इस दशामें पड़े-पड़े मुझे एक वर्ष बीत गया। मैं पापसे जल रहा हूँ। मेरा चित्त शोकसे व्याकुल है। तथा ये जो सामने दिखायी देते हैं, इनका नाम चन्द्रशर्मा है। ये जातिके ब्राह्मण हैं। इन्होंने मोहसे मलिन होकर गुरुका वध किया है। मगधदेशके निवासी हैं। इनके स्वजनोंने इनका परित्याग कर दिया है। ये भी घूमते-घामते दैवात् यहाँ आ पहुँचे हैं। इनके भी न शिखा है न सूत्र। ब्राह्मणका कोई भी चिह्न इनके शरीरमें नहीं रह गया है। इनके सिवा जो ये तीसरे व्यक्ति हैं, इनका नाम देवशर्मा है। स्वामिन्! ये भी बड़े कष्टमें हैं। ये भी जातिके ब्राह्मण हैं, किन्तु मोहवश वेश्याकी आसक्तिमें फँसकर शराबी हो गये थे। इन्होंने भी पूछनेपर अपना सारा हाल सच-सच कह सुनाया है। अपने

प्रथम पापाचारको याद करके इनके हृदयमें बड़ा संताप होता है। ये सदा मनस्तापसे पीड़ित रहते हैं। इनको इनकी स्त्रीने, बन्धु-बान्धवोंने तथा गाँवके सब लोगोंने वहाँसे निकाल दिया है। ये अपने उसी पापके साथ भ्रमण करते हुए यहाँ आये हैं। ये चौथे महाशय जातिके वैश्य हैं। इनका नाम विधुर है। ये गुरुपत्नीके साथ समागम करनेवाले हैं। इनकी माता मिथिलामें जाकर वेश्या हो गयी थी। इन्होंने मोहवश तीन महीनोंतक उसीका उपभोग किया है। परन्तु जब असली बातका पता लगा है तो बहुत दुःखी होकर पृथ्वीपर विचरते हुए ये भी यहाँ आ पहुँचे हैं। हममेंसे ये जो पाँचवें दिखायी दे रहे हैं, ये भी वैश्य ही हैं। इनका नाम नन्द है। ये पापियोंका संसर्ग करनेवाले महापापी हैं। इन्होंने प्रतिदिन धनके लालचमें पड़कर बहुत चोरी की है। पातकोंसे आक्रान्त हो जानेपर इन्हें स्वजनोंने त्याग दिया है। तब ये स्वयं भी खिन्न होकर दैवात् यहाँ आ पहुँचे हैं। इस प्रकार हम पाँचों महापापी एक स्थानपर जुट गये हैं। हम सब-के-सब दुःखोंसे घिरे हुए हैं। अनेकों तीर्थोंमें घूम आये, मगर हमारा घोर पातक नहीं मिटता। आपको तेजसे उद्दीप्त देखकर हमलोगोंका मन प्रसन्न हो गया है। आप-जैसे साधु पुरुषके पुण्यमय दर्शनसे हमारे पातकोंके अन्त होनेकी सूचना मिल रही है। स्वामिन्! कोई ऐसा उपाय बताइये, जिससे हमलोगोंके पापोंका नाश हो जाय। प्रभो! आप वेदार्थके ज्ञाता और परम दयालु जान पड़ते हैं; आपसे हमें अपने उद्धारकी बड़ी आशा है।

**मुनिशर्माने कहा**—तुमलोगोंने अज्ञानवश पाप किया, किन्तु इसके लिये तुम्हारे हृदयमें अनुताप है तथा तुम सब-के-सब सत्य बोल रहे हो; इस कारण तुम्हारे ऊपर अनुग्रह करना मेरा कर्तव्य है। मैं अपनी भुजा ऊपर उठाकर कहता हूँ, मेरी सत्य बातें सुनो। पूर्वकालमें जब मुनियोंका समुदाय एकत्रित हुआ था, उस समय मैंने

महर्षि अङ्गिराके मुखसे जो कुछ सुना था, वही वेद-शास्त्रोंमें भी देखा; वह सबके लिये विश्वास करनेयोग्य है। मेरी आराधनासे संतुष्ट हुए स्वयं भगवान् विष्णुने भी पहले ऐसी ही बात बतायी थी। वह इस प्रकार है। भोजनसे बढ़कर दूसरा कोई तृप्तिका साधन नहीं है। पितासे बढ़कर कोई गुरु नहीं है। ब्राह्मणोंसे उत्तम दूसरा कोई पात्र नहीं है तथा भगवान् विष्णुसे श्रेष्ठ दूसरा कोई देवता नहीं है। गङ्गाकी समानता करनेवाला कोई तीर्थ, गोदानकी तुलना करनेवाला कोई दान, गायत्रीके समान जप, एकादशीके तुल्य व्रत, भार्याके सदृश मित्र, दयाके समान धर्म तथा स्वतन्त्रताके समान सुख नहीं है। गार्हस्थ्यसे बढ़कर आश्रम और सत्यसे बढ़कर सदाचार नहीं है। इसी प्रकार संतोषके समान सुख तथा वैशाखमासके समान महान् पापोंका अपहरण करनेवाला दूसरा कोई मास नहीं है। वैशाखमास भगवान् मधुसूदनको बहुत ही प्रिय है। गङ्गा आदि तीर्थोंमें तो वैशाख-स्नानका सुयोग अत्यन्त दुर्लभ है। उस समय गङ्गा, यमुना तथा नर्मदाकी प्राप्ति कठिन होती है। जो शुद्ध हृदयवाला मनुष्य भगवान्के भजनमें तत्पर हो पूरे वैशाखभर प्रातःकाल गङ्गास्नान करता है, वह सब पापोंसे मुक्त होकर परम गतिको प्राप्त होता है।

इसलिये पुण्यके सारभूत इस वैशाखमासमें तुम सभी पातकी मेरे साथ नर्मदा-तटपर चलो और उसमें गोते लगाओ। नर्मदाके जलका मुनिलोग भी सेवन करते हैं, वह समस्त पापोंके भयका नाश करनेवाला है। मुनिके यों कहनेपर वे सब पापी उनके साथ अद्भुत पुण्य प्रदान करनेवाली नर्मदाकी प्रशंसा करते हुए उसके तटपर गये। किनारे पहुँचकर ब्राह्मणश्रेष्ठ मुनिशर्माका चित्त प्रसन्न हो गया। उन्होंने वेदोक्त विधिके अनुसार नर्मदाके जलमें प्रातःस्नान किया। उपर्युक्त पाँचों पापियोंने भी ब्राह्मणके कहनेसे ज्यों ही नर्मदामें डुबकी लगायी, त्यों

ही उनके शरीरका रंग बदल गया; वे तत्काल सुवर्णके समान कान्तिमान् हो गये। फिर मुनिशर्माने सब लोगोंके सामने उन्हें पाप-प्रशमन नामक स्तोत्र सुनाया।

भूपाल! अब तुम पाप-प्रशमन नामक स्तोत्र सुनो। इसका भक्तिपूर्वक श्रवण करके भी मनुष्य पापराशिसे मुक्त हो जाता है। इसके चिन्तनमात्रसे बहुतेरे पापी शुद्ध हो चुके हैं। इसके सिवा, और भी बहुत-से मनुष्य इस स्तोत्रका सहारा लेकर अज्ञानजनित पापसे मुक्त हो गये हैं। जब मनुष्योंका चित्त परायी स्त्री, पराये धन तथा जीव-हिंसा आदिकी ओर जाय तो इस प्रायश्चित्तरूपा स्तुतिकी शरण लेनी चाहिये। यह स्तुति इस प्रकार है—

**विष्णवे विष्णवे नित्यं विष्णवे विष्णवे नमः।**
**नमामि विष्णुं चित्तस्थमहङ्कारगतं हरिम्॥**
**चित्तस्थमीशमव्यक्तमनन्तमपराजितम्।**
**विष्णुमीड्यमशेषाणामनादिनिधनं हरिम्॥**

सम्पूर्ण विश्वमें व्यापक भगवान् श्रीविष्णुको सर्वदा नमस्कार है। विष्णुको बारम्बार प्रणाम है। मैं अपने चित्तमें विराजमान विष्णुको नमस्कार करता हूँ। अपने अहङ्कारमें व्याप्त श्रीहरिको मस्तक झुकाता हूँ। श्रीविष्णु चित्तमें विराजमान ईश्वर (मन और इन्द्रियोंके शासक), अव्यक्त, अनन्त, अपराजित, सबके द्वारा स्तवन करनेयोग्य तथा आदि-अन्तसे रहित हैं; ऐसे श्रीहरिको मैं नित्य-निरन्तर प्रणाम करता हूँ।

**विष्णुश्चित्तगतो यन्मे विष्णुर्बुद्धिगतश्च यत्।**
**योऽहङ्कारगतो विष्णुर्यो विष्णुर्मयि संस्थितः॥**
**करोति कर्तृभूतोऽसौ स्थावरस्य चरस्य च।**
**तत्पापं नाशमायाति तस्मिन् विष्णौ विचिन्तिते॥**

जो विष्णु मेरे चित्तमें विराजमान हैं, जो विष्णु मेरी बुद्धिमें

स्थित हैं, जो विष्णु मेरे अहङ्कारमें व्याप्त हैं तथा जो विष्णु सदा मेरे स्वरूपमें स्थित हैं, वे ही कर्ता होकर सब कुछ करते हैं। उन विष्णुभगवान्‌का चिन्तन करनेपर चराचर प्राणियोंका सारा पाप नष्ट हो जाता है।

**ध्यातो हरति यः पापं स्वप्ने दृष्टश्च पापिनाम्।**
**तमुपेन्द्रमहं विष्णुं नमामि प्रणतप्रियम्॥**

जो ध्यान करने और स्वप्नमें दीख जानेपर भी पापियोंके पाप हर लेते हैं तथा चरणोंमें पड़े हुए शरणागत भक्त जिन्हें अत्यन्त प्रिय हैं, उन वामनरूपधारी भगवान् श्रीविष्णुको नमस्कार करता हूँ।

**जगत्यस्मिन्निरालम्बे ह्यजमक्षरमव्ययम्।**
**हस्तावलम्बनं स्तोत्रं विष्णुं वन्दे सनातनम्॥**

जो अजन्मा, अक्षर और अविनाशी हैं तथा इस अवलम्बशून्य संसारमें हाथका सहारा देनेवाले हैं, स्तोत्रोंद्वारा जिनकी स्तुति की जाती है, उन सनातन श्रीविष्णुको मैं प्रणाम करता हूँ।

**सर्वेश्वरेश्वर विभो परमात्मन्नधोक्षज।**
**हृषीकेश हृषीकेश हृषीकेश नमोऽस्तु ते॥**

हे सर्वेश्वर! हे ईश्वर! हे व्यापक परमात्मन्! हे अधोक्षज! हे इन्द्रियोंका शासन करनेवाले अन्तर्यामी हृषीकेश! आपको बारम्बार नमस्कार है।

**नृसिंहानन्त गोविन्द भूतभावन केशव।**
**दुरुक्तं दुष्कृतं ध्यातं शमयाशु जनार्दन॥**

हे नृसिंह! हे अनन्त! हे गोविन्द! हे भूतभावन! हे केशव! हे जनार्दन! मेरे दुर्वचन, दुष्कर्म और दुश्चिन्तनको शीघ्र नष्ट कीजिये।

**यन्मया चिन्तितं दुष्टं स्वचित्तवशवर्तिना।**
**आकर्णय महाबाहो तच्छमं नय केशव॥**

महाबाहो! मेरी प्रार्थना सुनिये—अपने चित्तके वशमें होकर मैंने जो कुछ बुरा चिन्तन किया हो, उसको शान्त कर दीजिये।

**ब्रह्मण्यदेव गोविन्द परमार्थपरायण।**
**जगन्नाथ जगद्धातः पापं शमय मेऽच्युत॥**

ब्राह्मणोंका हित साधन करनेवाले देवता गोविन्द! परमार्थमें तत्पर रहनेवाले जगन्नाथ! जगत्को धारण करनेवाले अच्युत! मेरे पापोंका नाश कीजिये।

**यच्चापराह्णे सायाह्ने मध्याह्ने च तथा निशि।**
**कायेन मनसा वाचा कृतं पापमजानता॥**
**जानता च हृषीकेश पुण्डरीकाक्ष माधव।**
**नामत्रयोच्चारणतः सर्वं यातु मम क्षयम्॥**

मैंने पूर्वाह्न, सायाह्न, मध्याह्न तथा रात्रिके समय शरीर, मन और वाणीके द्वारा, जानकर या अनजानमें जो कुछ पाप किया हो, वह सब 'हृषीकेश, पुण्डरीकाक्ष और माधव'—इन तीन नामोंके उच्चारणसे नष्ट हो जाय।

**शारीरं मे हृषीकेश पुण्डरीकाक्ष मानसम्।**
**पापं प्रशममायातु वाक्कृतं मम माधव॥**

हृषीकेश! आपके नामोच्चारणसे मेरा शारीरिक पाप नष्ट हो जाय, पुण्डरीकाक्ष! आपके स्मरणसे मेरा मानस पाप शान्त हो जाय तथा माधव! आपके नाम-कीर्तनसे मेरे वाचिक पापका नाश हो जाय।

**यद् भुञ्जानः पिबंस्तिष्ठन् स्वपञ्जाग्रद् यदा स्थितः।**
**अकार्षं पापमर्थार्थं कायेन मनसा गिरा॥**
**महदल्पं च यत्पापं दुर्योनिनरकावहम्।**
**तत्सर्वं विलयं यातु वासुदेवस्य कीर्तनात्॥**

मैंने खाते, पीते, खड़े होते, सोते, जागते तथा ठहरते समय मन, वाणी और शरीरसे, स्वार्थ या धनके लिये जो कुत्सित योनियों

और नरकोंकी प्राप्ति करानेवाला महान् या थोड़ा पाप किया है, वह सब भगवान् वासुदेवका नामोच्चारण करनेसे नष्ट हो जाय।

**परं ब्रह्म परं धाम पवित्रं परमं च यत्।**
**अस्मिन् सङ्कीर्तिते विष्णौ यत् पापं तत् प्रणश्यतु॥**

जिसे परब्रह्म, परम धाम और परम पवित्र कहते हैं, वह तत्त्व भगवान् विष्णु ही हैं; इन श्रीविष्णुभगवान्का कीर्तन करनेसे मेरे जो भी पाप हों, वे नष्ट हो जायँ।

**यत्प्राप्य न निवर्तन्ते गन्धस्पर्शविवर्जितम्।**
**सूरयस्तत्पदं विष्णोस्तत्सर्वं मे भवत्वलम्॥**

जो गन्ध और स्पर्शसे रहित है, ज्ञानी पुरुष जिसे पाकर पुनः इस संसारमें नहीं लौटते, वह श्रीविष्णुका ही परम पद है। वह सब मुझे पूर्णरूपसे प्राप्त हो जाय।

**पापप्रशमनं स्तोत्रं यः पठेच्छृणुयान्नरः।**
**शारीरैर्मानसैर्वाचा कृतैः पापैः प्रमुच्यते॥**
**मुक्तः पापग्रहादिभ्यो याति विष्णोः परं पदम्।**
**तस्मात्सर्वप्रयत्नेन स्तोत्रं सर्वाघनाशनम्॥**
**प्रायश्चित्तमघौघानां पठितव्यं नरोत्तमैः।***

यह 'पाप-प्रशमन' नामक स्तोत्र है। जो मनुष्य इसे पढ़ता और सुनता है, वह शरीर, मन और वाणीद्वारा किये हुए पापोंसे मुक्त हो जाता है। इतना ही नहीं, वह पापग्रह आदिके भयसे भी मुक्त होकर विष्णुके परम पदको प्राप्त होता है। यह स्तोत्र सब पापोंका नाशक तथा पापराशिका प्रायश्चित्त है; इसलिये श्रेष्ठ मनुष्योंको पूर्ण प्रयत्न करके इस स्तोत्रका पाठ करना चाहिये।

राजन्! इस स्तोत्रके श्रवणमात्रसे पूर्वजन्म तथा इस जन्मके किये हुए पाप भी तत्काल नष्ट हो जाते हैं। यह स्तोत्र पापरूपी

* अध्याय ८८, श्लोक ७२ से ९१ तक।

वृक्षके लिये कुठार और पापमय ईंधनके लिये दावानल है। पापराशिरूपी अन्धकार-समूहका नाश करनेके लिये यह स्तोत्र सूर्यके समान है। मैंने सम्पूर्ण जगत्पर अनुग्रह करनेके लिये इसे तुम्हारे सामने प्रकाशित किया है। इसके पुण्यमय माहात्म्यका वर्णन करनेमें स्वयं श्रीहरि भी समर्थ नहीं हैं।

## वैशाखमासमें स्नान, तर्पण और श्रीमाधव-पूजनकी विधि एवं महिमा

**अम्बरीषने पूछा**—मुने! वैशाखमासके व्रतका क्या विधान है! इसमें किस तपस्याका अनुष्ठान करना पड़ता है? क्या दान होता है? कैसे स्नान किया जाता है और किस प्रकार भगवान् केशवकी पूजा की जाती है? ब्रह्मर्षे! आप श्रीहरिके प्रिय भक्त तथा सर्वज्ञ हैं; अतः कृपा करके मुझे ये सब बातें बताइये।

**नारदजीने कहा**—साधुश्रेष्ठ! सुनो—वैशाखमासमें जब सूर्य मेषराशिपर चले जायँ तो किसी बड़ी नदीमें, नदीरूप तीर्थमें, नदमें, सरोवरमें, झरनेमें, देवकुण्डमें, स्वतः प्राप्त हुए किसी भी जलाशयमें, बावड़ीमें अथवा कुएँ आदिपर जाकर नियमपूर्वक भगवान् श्रीविष्णुका स्मरण करते हुए स्नान करना चाहिये। स्नानके पहले निम्नाङ्कित श्लोकका उच्चारण करना चाहिये—

**यथा ते माधवो मासो वल्लभो मधुसूदन।**
**प्रातःस्नानेन मे तस्मिन् फलदः पापहा भव॥**

(८९। ११)

'मधुसूदन! माधव (वैशाख)-मास आपको विशेष प्रिय है, इसलिये इसमें प्रातःस्नान करनेसे आप शास्त्रोक्त फलके देनेवाले हों

और मेरे पापोंका नाश कर दें।

इस प्रकार कहकर मौनभावसे उस तीर्थके किनारे अपने दोनों पैर धो ले; फिर भगवान् नारायणका स्मरण करते हुए विधिपूर्वक स्नान करे। स्नानकी विधि इस प्रकार है—विद्वान् पुरुषको मूल-मन्त्र पढ़कर तीर्थकी कल्पना कर लेनी चाहिये। '**ॐ नमो नारायणाय**' यह मन्त्र ही मूल-मन्त्र कहा गया है। पहले हाथमें कुश लेकर विधिपूर्वक आचमन करे तथा मन और इन्द्रियोंको संयममें रखते हुए बाहर-भीतरसे पवित्र रहे। फिर चार हाथका चौकोर मण्डल बनाकर उसमें निम्नाङ्कित मन्त्रोंद्वारा भगवती श्रीगङ्गाजीका आवाहन करे।

**विष्णुपादप्रसूतासि वैष्णवी विष्णुदेवता॥**
**त्राहि नस्त्वेनसस्तस्मादाजन्ममरणान्तिकात्।**
**तिस्रः कोट्योऽर्धकोटी च तीर्थानां वायुरब्रवीत्॥**
**दिवि भुव्यन्तरिक्षे च तानि ते सन्ति जाह्नवि।**
**नन्दिनीति च ते नाम देवेषु नलिनीति च॥**
**दक्षा पृथ्वी वियद्गङ्गा विश्वकाया शिवामृता।**
**विद्याधरी महादेवी तथा लोकप्रसादिनी॥**
**क्षेमङ्करी जाह्नवी च शान्ता शान्तिप्रदायिनी।**

(८९। १५—१९)

'गङ्गे! तुम भगवान् श्रीविष्णुके चरणोंसे प्रकट हुई हो। श्रीविष्णु ही तुम्हारे देवता हैं; इसीलिये तुम्हें वैष्णवी कहते हैं। देवि! तुम जन्मसे लेकर मृत्युतक समस्त पापोंसे मेरी रक्षा करो। स्वर्ग, पृथ्वी और अन्तरिक्षमें कुल साढ़े तीन करोड़ तीर्थ हैं—ऐसा वायु देवताका कथन है। माता जाह्नवी! वे सभी तीर्थ तुम्हारे अंदर मौजूद हैं। देवलोकमें तुम्हारा नाम नन्दिनी और नलिनी है। इनके सिवा दक्षा, पृथ्वी, वियद्गङ्गा, विश्वकाया, शिवा, अमृता, विद्याधरी, महादेवी,

लोकप्रसादिनी क्षेमङ्करी, जाह्नवी, शान्ता और शान्तिप्रदायिनी आदि तुम्हारे अनेकों नाम हैं।'

स्नानके समय इन पवित्र नामोंका कीर्तन करना चाहिये; इससे त्रिपथगामिनी भगवती गङ्गा उपस्थित हो जाती हैं। सात बार उपर्युक्त नामोंका जप करके संपुटके आकारमें दोनों हाथोंको जोड़कर उनमें जल ले और चार, छः या सात बार मस्तकपर डाले। इस प्रकार स्नान करके पूर्ववत् मृत्तिकाको भी विधिवत् अभिमन्त्रित करे और उसे शरीरमें लगाकर नहा ले। मृत्तिकाको अभिमन्त्रित करनेका मन्त्र इस प्रकार है—

**अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णुक्रान्ते वसुन्धरे।**
**मृत्तिके हर मे पापं यन्मया दुष्कृतं कृतम्॥**
**उद्धृतासि वराहेण कृष्णेन शतबाहुना।**
**नमस्ते सर्वलोकानां प्रभवारणि सुव्रते॥**

(८९। २२-२३)

'वसुन्धरे! तुम्हारे ऊपर अश्व और रथ चला करते हैं। भगवान् श्रीविष्णुने भी वामन-अवतार धारण करके तुम्हें एक पैरसे नापा था। मृत्तिके! मैंने जो बुरे कर्म किये हों, मेरे उन सब पापोंको तुम हर लो। देवि! सैकड़ों भुजाओंवाले भगवान् श्रीविष्णुने वराहका रूप धारण करके तुम्हें जलसे बाहर निकाला था। तुम सम्पूर्ण लोकोंकी उत्पत्तिके लिये अरणीके समान हो—अर्थात् जैसे अरणी-काष्ठसे आग प्रकट होती है, उसी प्रकार तुमसे सम्पूर्ण लोक उत्पन्न होते हैं। सुव्रते! तुम्हें मेरा नमस्कार है।'

इस प्रकार स्नान करनेके पश्चात् विधिपूर्वक आचमन करके जलसे बाहर निकले और दो शुद्ध श्वेत वस्त्र—धोती-चादर धारण करे। तदनन्तर त्रिलोकीको तृप्त करनेके लिये तर्पण करे। सबसे पहले

श्रीब्रह्माका तर्पण करे; फिर श्रीविष्णु, श्रीरुद्र और प्रजापतिका। तत्पश्चात् 'देवता, यक्ष, नाग, गन्धर्व, अप्सरा, असुरगण, क्रूर सर्प, गरुड, वृक्ष, जीव-जन्तु, पक्षी, विद्याधर, मेघ, आकाशचारी जीव, निराधार जीव, पापी जीव तथा धर्मपरायण जीवोंको तृप्त करनेके लिये मैं उन्हें जल अर्पण करता हूँ।' यह कहकर उन सबको जलाञ्जलि दे। देवताओंका तर्पण करते समय यज्ञोपवीतको बायें कंधेपर डाले रहे। तत्पश्चात् उसे गलेमें मालाकी भाँति कर ले और दिव्य मनुष्यों, ऋषि-पुत्रों तथा ऋषियोंका भक्तिपूर्वक तर्पण करे। सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार—ये दिव्य मनुष्य हैं। कपिल, आसुरि, बोढु तथा पञ्चशिख—ये प्रधान ऋषिपुत्र हैं। 'ये सभी मेरे दिये हुए जलसे तृप्त हों' ऐसा कहकर इन्हें जल दे। इसी प्रकार मरीचि, अत्रि, अङ्गिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, प्रचेता, वसिष्ठ, नारद तथा अन्यान्य देवर्षियों एवं ब्रह्मर्षियोंका अक्षतसहित जलके द्वारा तर्पण करे।

इस प्रकार ऋषि-तर्पण करनेके पश्चात् यज्ञोपवीतको दायें कंधेपर करके बायें घुटनेको पृथ्वीपर टेककर बैठे। फिर अग्निष्वात्त, सौम्य, हविष्मान्, उष्मप, कव्यवाट् अनल, बर्हिषद्, पिता-पितामह आदि तथा मातामह आदि सब लोगोंका विधिवत् तर्पण करके निम्नाङ्कित मन्त्रका उच्चारण करे—

**येऽबान्धवा बान्धवा ये येऽन्यजन्मनि बान्धवाः।**
**ते तृप्तिमखिला यान्तु येऽप्यस्मत्तोयकाङ्क्षिणः॥**

(८९। ३५)

'जो लोग मेरे बान्धव न हों, जो मेरे बान्धव हों तथा जो दूसरे किसी जन्ममें मेरे बान्धव रहे हों, वे सब मेरे दिये हुए जलसे तृप्त हों। उनके सिवा और भी जो कोई प्राणी मुझसे जलकी अभिलाषा रखते हों, वे भी तृप्ति लाभ करें।'

यों कहकर उनकी तृप्तिके उद्देश्यसे जल गिराना चाहिये। तत्पश्चात् विधिपूर्वक आचमन करके अपने आगे कमलकी आकृति बनावे और सूर्यदेवके नामोंका उच्चारण करते हुए अक्षत, फूल, लाल चन्दन और जलके द्वारा उन्हें यत्नपूर्वक अर्घ्य दे। अर्घ्यदानका मन्त्र इस प्रकार है—

**नमस्ते विश्वरूपाय नमस्ते ब्रह्मरूपिणे॥**
**सहस्त्ररश्मये नित्यं नमस्ते सर्वतेजसे।**
**नमस्ते रुद्रवपुषे नमस्ते भक्तवत्सल॥**
**पद्मनाभ नमस्तेऽस्तु कुण्डलाङ्गदभूषित।**
**नमस्ते सर्वलोकानां सुप्तानामुपबोधन॥**
**सुकृतं दुष्कृतं चैव सर्वं पश्यसि सर्वदा।**
**सत्यदेव नमस्तेऽस्तु प्रसीद मम भास्कर॥**
**दिवाकर नमस्तेऽस्तु प्रभाकर नमोऽस्तु ते।**

(८९। ३७—४१)

'भगवान् सूर्य! आप विश्वरूप और ब्रह्मस्वरूप हैं। इन दोनों रूपोंमें आपको नमस्कार है। आप सहस्रों किरणोंसे सुशोभित और सबके तेजरूप हैं, आपको सदा नमस्कार है। भक्तवत्सल! रुद्ररूपधारी आप परमेश्वरको बारम्बार नमस्कार है। कुण्डल और अङ्गद आदि आभूषणोंसे विभूषित पद्मनाभ! आपको नमस्कार है। भगवन्! आप सोये हुए सम्पूर्ण लोकोंको जगानेवाले हैं; आपको मेरा प्रणाम है। आप सदा सबके पाप-पुण्यको देखा करते हैं। सत्यदेव! आपको नमस्कार है। भास्कर! मुझपर प्रसन्न होइये। दिवाकर! आपको नमस्कार है। प्रभाकर! आपको नमस्कार है।'

इस प्रकार सूर्यदेवको नमस्कार करके सात बार उनकी प्रदक्षिणा करे। फिर द्विज, गौ और सुवर्णका स्पर्श करके अपने घरमें जाय। वहाँ आश्रमवासी अतिथियोंका सत्कार तथा भगवान्‌की प्रतिमाका पूजन

करे। राजन्! घरमें पहले भक्तिपूर्वक जितेन्द्रियभावसे भगवान् गोविन्दकी विधिवत् पूजा करनी चाहिये। विशेषत: वैशाखके महीनेमें जो श्रीमधुसूदनका पूजन करता है, उसके द्वारा पूरे एक वर्षतक श्रीमाधवकी पूजा सम्पन्न हो जाती है। वैशाखमास आनेपर जब सूर्यदेव मेषराशिपर स्थित हों तो श्रीकेशवकी प्रसन्नताके लिये उनके व्रतोंका सञ्चय करना चाहिये। अपने अभीष्टकी सिद्धिके लिये अन्न, जल, शक्कर, धेनु तथा तिलकी धेनु आदिका दान करना चाहिये; इस कार्यमें धनकी कंजूसी उचित नहीं है। जो समूचे वैशाखभर प्रतिदिन सबेरे स्नान करता, जितेन्द्रियभावसे रहता, भगवान्‌के नाम जपता और हविष्य भोजन करता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो जाता है।

जो वैशाखमासमें आलस्य त्यागकर एकभुक्त (चौबीस घंटेमें एक बार भोजन), नक्तव्रत (केवल रातमें एक बार भोजन) अथवा अयाचितव्रत (बिना माँगे मिले हुए अन्नका एक समय भोजन) करता है, वह अपनी सम्पूर्ण अभीष्ट वस्तुओंको प्राप्त कर लेता है। वैशाख-मासमें प्रतिदिन दो बार गाँवसे बाहर नदीके जलमें स्नान करना, हविष्य खाकर रहना, ब्रह्मचर्यका पालन करना, पृथ्वीपर सोना, नियमपूर्वक रहना, व्रत, दान, जप, होम और भगवान् मधुसूदनकी पूजा करना—ये नियम हजारों जन्मोंके भयंकर पापको भी हर लेते हैं। जैसे भगवान् माधव ध्यान करनेपर सारे पाप नष्ट कर देते हैं, उसी प्रकार नियमपूर्वक किया हुआ माधवमासका स्नान भी समस्त पापोंको दूर कर देता है। प्रतिदिन तीर्थ-स्नान, तिलोंद्वारा पितरोंका तर्पण, धर्मघट आदिका दान और श्रीमधुसूदनका पूजन—ये भगवान्‌को संतोष प्रदान करनेवाले हैं; वैशाखमासमें इनका पालन अवश्य करना चाहिये। वैशाखमें तिल, जल, सुवर्ण, अन्न, शक्कर, वस्त्र, गौ, जूता, छाता, कमल या शङ्ख तथा घड़े—इन वस्तुओंका ब्राह्मणोंको दान

करे। तीनों सन्ध्याओंके समय एकाग्रचित्त हो विमलस्वरूपा साक्षात् भगवती लक्ष्मीके साथ परमेश्वर श्रीविष्णुका भक्तिपूर्वक पूजन करना चाहिये। सामयिक फूलों और फलोंसे भक्तिपूर्वक श्रीहरिका पूजन करनेके पश्चात् यथाशक्ति ब्राह्मणोंकी भी पूजा करनी चाहिये। पाखण्डियोंसे वार्तालाप नहीं करना चाहिये। जो फूलोंद्वारा विधिवत् अर्चन करके श्रीमधुसूदनकी आराधना करता है; वह सब पापोंसे मुक्त हो परम पदको प्राप्त होता है!

**श्रीनारदजी कहते हैं**—राजेन्द्र! सुनो मैं संक्षेपसे माधवके पूजनकी विधि बतला रहा हूँ। महाराज! जिनका कहीं अन्त नहीं है, जो अनन्त और अपार हैं, उन भगवान् अनन्तकी पूजा-विधिका अन्त नहीं है। श्रीविष्णुका पूजन तीन प्रकारका होता है—वैदिक, तान्त्रिक तथा मिश्र। तीनोंके ही बताये हुए विधानसे श्रीहरिका पूजन करना चाहिये। वैदिक और मिश्र पूजनकी विधि ब्राह्मण आदि तीन वर्णोंके ही लिये बतायी गयी है, किन्तु तान्त्रिक पूजन विष्णुभक्त शूद्रके लिये भी विहित है। साधक पुरुषको उचित है कि शास्त्रोक्त विधिका ज्ञान प्राप्त करके एकाग्रचित्त हो ब्रह्मचर्य-पालन करते हुए श्रीविष्णुका विधिवत् पूजन करे। भगवान्‌की प्रतिमा आठ प्रकारकी मानी गयी है—शिलामयी, धातुमयी, लोहेकी बनी हुई, लीपनेयोग्य मिट्टीकी बनी हुई, चित्रमयी, बालूकी बनायी हुई, मनोमयी तथा मणिमयी। इन प्रतिमाओंकी प्रतिष्ठा (स्थापना) दो प्रकारकी होती है—एक चल प्रतिष्ठा और दूसरी अचल प्रतिष्ठा।

राजन्! भक्त पुरुषको चाहिये कि वह जो कुछ भी सामग्री प्राप्त हो, उसीसे भक्तिभावके साथ पूजन करे। प्रतिमा-पूजनमें स्नान और अलंकार ही अभीष्ट हैं अर्थात् भगवद्विग्रहको स्नान कराकर पुष्प आदिसे शृङ्गार कर देना ही प्रधान सेवा है। श्रीकृष्णमें भक्ति रखनेवाला

मनुष्य यदि केवल जल भी भगवान्‌को अर्पण करे तो वह उनकी दृष्टिमें श्रेष्ठ है; फिर गन्ध, धूप, पुष्प, दीप और अन्न आदिका नैवेद्य अर्पण करनेपर तो कहना ही क्या है। पवित्रतापूर्वक पूजनकी सारी सामग्री एकत्रित करके पूर्वाग्र कुशोंका आसन बिछाकर उसपर बैठे; पूजन करनेवालेका मुख उत्तर दिशाकी ओर या प्रतिमाके सामने हो। फिर पाद्य, अर्घ्य, स्नान तथा अर्हण आदि उपचारोंकी व्यवस्था करे। उसके बाद कर्णिका और केसरसे सुशोभित अष्टदल कमल बनावे और उसके ऊपर श्रीहरिके लिये आसन रखे। तदनन्तर चन्दन, उशीर (खस) कपूर, केसर तथा अरगजासे सुवासित जलके द्वारा मन्त्रपाठपूर्वक श्रीहरिको स्नान कराये। वैभव हो तो प्रतिदिन इस तरहकी व्यवस्था करनी चाहिये। 'स्वर्णधर्म' नामक अनुवाक, महापुरुष-विद्या, 'सहस्रशीर्षा आदि पुरुषसूक्त तथा सामवेदोक्त नीराजना आदि मन्त्रोंद्वारा श्रीहरिको स्नान कराये। तत्पश्चात् विष्णुभक्त पुरुष वस्त्र, यज्ञोपवीत, आभूषण, हार, गन्ध तथा अनुलेपनके द्वारा प्रेमपूर्वक भगवान्‌का यथायोग्य शृङ्गार करे। पुजारीको उचित है कि वह श्रद्धापूर्वक पाद्य, आचमनीय, गन्ध, पुष्प, अक्षत तथा धूप आदि उपहार अर्पण करे। उसके बाद गुड़, खीर, घी, पूड़ी, मालपूआ, लड्डू, दूध और दही आदि नाना प्रकारके नैवेद्य निवेदन करे। पर्वके अवसरोंपर अङ्गराग लगाना, दर्पण दिखाना, दन्तधावन कराना, अभिषेक करना, अन्न आदिके बने हुए पदार्थ भोग लगाना, कीर्तन करते हुए नृत्य करना और गीत गाना आदि सेवाएँ भी करनी चाहिये। सम्भव हो तो प्रतिदिन ऐसी ही व्यवस्था रखनी चाहिये।

पूजनके पश्चात् इस प्रकार ध्यान करे—भगवान् श्रीविष्णुका श्रीविग्रह श्यामवर्ण एवं तपाये हुए जाम्बूनद नामक सुवर्णके समान तेजस्वी है; भगवान्‌के शङ्ख, चक्र, गदा और पद्मसे सुशोभित चार

भुजाएँ हैं; उनकी आकृति शान्त है, उनका वस्त्र, कमलके केसरके समान पीले रंगका है; वे मस्तकपर किरीट, दोनों हाथोंमें कड़े, गलेमें यज्ञोपवीत तथा अँगुलियोंमें अँगूठी धारण किये हुए हैं; उनके वक्षःस्थलमें श्रीवत्सका चिह्न है, कौस्तुभमणि उनकी शोभा बढ़ाता है तथा वे वनमाला धारण किये हुए हैं।

इस प्रकार ध्यान करते हुए पूजन समाप्त करके घीमें डुबोयी हुई समिधाओं तथा हविष्यद्वारा अग्निमें हवन करे। 'आज्यभाग' तथा 'आघार' नामक आहुतियाँ देनेके पश्चात् घृतपूर्ण हविष्यका होम करे। तदनन्तर पुनः भगवान्‌का पूजन करके उन्हें प्रणाम करे और पार्षदोंको नैवेद्य अर्पण करे। उसके बाद मुख-शुद्धिके लिये सुगन्धित द्रव्योंसे युक्त ताम्बूल निवेदन करना चाहिये। फिर छोटे-बड़े पौराणिक तथा अर्वाचीन स्तोत्रोंद्वारा भगवान्‌की स्तुति करके **'भगवन्! प्रसीद'** (भगवन्! प्रसन्न होइये) यों कहकर प्रतिदिन दण्डवत् प्रणाम करे। अपना मस्तक भगवान्‌के चरणोंमें रखकर दोनों भुजाओंको फैलाकर परस्पर मिला दे और इस प्रकार कहे—'परमेश्वर! मैं मृत्युरूपी ग्रह तथा समुद्रसे भयभीत होकर आपकी शरणमें आया हूँ; आप मेरी रक्षा कीजिये।'

तदनन्तर भगवान्‌को अर्पण की हुई प्रसाद-माला आदिको आदरपूर्वक सिरपर चढ़ाये तथा यदि मूर्ति विसर्जन करनेयोग्य हो तो उसका विसर्जन भी करे। ईश्वरीय ज्योतिको आत्म-ज्योतिमें स्थापित कर ले। प्रतिमा आदिमें जहाँ भगवान्‌का चरण हो, वहीं श्रद्धापूर्वक पूजन करना चाहिये तथा मनमें यह विश्वास रखना चाहिये कि 'जो सम्पूर्ण भूतोंमें तथा मेरे आत्मामें भी रम रहे हैं, वे ही सर्वात्मा परमेश्वर इस मूर्तिमें विराजमान हैं।'

इस प्रकार वैदिक तथा तान्त्रिक क्रियायोगके मार्गसे जो

भगवान्‌की पूजा करता है, वह सब ओरसे अभीष्ट सिद्धिको प्राप्त होता है। श्रीविष्णु-प्रतिमाकी स्थापना करके उसके लिये सुदृढ़ मन्दिर बनवाना चाहिये तथा पूजाकर्मकी सुव्यवस्थाके लिये सुन्दर फुलवाड़ी भी लगवानी चाहिये। बड़े-बड़े पर्वोंपर तथा प्रतिदिन पूजाकार्यका भलीभाँति निर्वाह होता रहे, इसके लिये भगवान्‌के नामसे खेत, बाजार, कसबा और गाँव आदि भी लगा देने चाहिये। यों करनेसे मनुष्य भगवान्‌के सायुज्यको प्राप्त होता है। भगवद्विग्रहकी स्थापना करनेसे सार्वभौम (सम्राट्) के पदको, मन्दिर बनवानेसे तीनों लोकोंके राज्यको, पूजा आदिकी व्यवस्था करनेसे ब्रह्मलोकको तथा इन तीनों कार्योंके अनुष्ठानसे मनुष्य भगवत्सायुज्यको प्राप्त कर लेता है। केवल अश्वमेध यज्ञ करनेसे किसीको भक्तियोगकी प्राप्ति नहीं होती; भक्तियोगको तो वही प्राप्त करता है, जो पूर्वोक्त रीतिसे प्रतिदिन श्रीहरिकी पूजा करता है।

राजन्! वही शरीर शुभ-कल्याणका साधक है, जो भगवान् श्रीकृष्णको साष्टाङ्ग प्रणाम करनेके कारण धूलि-धूसरित हो रहा है; नेत्र भी वे ही अत्यन्त सुन्दर और तपःशक्तिसे सम्पन्न हैं, जिनके द्वारा श्रीहरिका दर्शन होता है; वही बुद्धि निर्मल और चन्द्रमा तथा शङ्खके समान उज्ज्वल है, जो सदा श्रीलक्ष्मीपतिके चिन्तनमें संलग्न रहती है तथा वही जिह्वा मधुरभाषिणी है, जो बारम्बार भगवान् नारायणका स्तवन किया करती है।*

स्त्री और शूद्रोंको भी मूलमन्त्रके द्वारा श्रीहरिका पूजन करना चाहिये तथा अन्यान्य वैष्णवजनोंको भी गुरुकी बतायी हुई पद्धतिसे श्रद्धापूर्वक भगवान्‌की पूजा करनी उचित है। राजन्! यह सब प्रसङ्ग

* यत्कृष्णप्रणिपातधूलिधवलं तद्वर्ष्म तद्वच्छुभं नेत्रे चेत्तपसोर्जिते सुरुचिरे याभ्यां हरिर्दृश्यते।
सा बुद्धिर्विमलेन्दुशङ्खधवला या माधवव्यापिनी सा जिह्वा मृदुभाषिणी नृप मुहुर्या स्तौति नारायणम्॥
(९०। ४७)

मैंने तुम्हें बता दिया। श्रीमाधवका पूजन परम पावन है। विशेषतः वैशाखमासमें तुम इस प्रकार पूजन अवश्य करना।

**सूतजी कहते हैं**—महर्षिगण! इस प्रकार पत्नीसहित मन्त्रवेत्ता महाराज अम्बरीषको उपदेश दे, उनसे पूजित हो, विदा लेकर देवर्षि नारदजी वैशाखमासमें गङ्गा-स्नान करनेके लिये चले गये। लोकमें जिनका पावन सुयश फैला हुआ था, उन राजा अम्बरीषने भी मुनिकी बतायी हुई वैशाखमासकी विधिका पुण्यबुद्धिसे पत्नीसहित पालन किया।

## यम-ब्राह्मण-संवाद—नरक तथा स्वर्गमें ले जानेवाले कर्मोंका वर्णन

**ऋषियोंने कहा**—सूतजी! इस विषयको पुनः विस्तारके साथ कहिये। आपके उत्तम वचनामृतोंका पान करते-करते हमें तृप्ति नहीं होती है।

**सूतजी बोले**—महर्षियो! इस विषयमें एक प्राचीन इतिहास कहा करते हैं, जिसमें एक ब्राह्मण और महात्मा धर्मराजके संवादका वर्णन है।

**ब्राह्मणने पूछा**—धर्मराज! धर्म और अधर्मके निर्णयमें आप सबके लिये प्रमाणस्वरूप हैं; अतः बताइये, मनुष्य किस कर्मसे नरकमें पड़ते हैं? तथा किस कर्मके अनुष्ठानसे वे स्वर्गमें जाते हैं? कृपा करके इन सब बातोंका वर्णन कीजिये।

**यमराज बोले**—ब्रह्मन्! जो मनुष्य मन, वाणी तथा क्रियाद्वारा धर्मसे विमुख और श्रीविष्णुभक्तिसे रहित हैं; जो ब्रह्मा, शिव तथा विष्णुको भेदबुद्धिसे देखते हैं; जिनके हृदयमें विष्णु-विद्यासे विरक्ति है; जो दूसरोंके खेत, जीविका, घर, प्रीति तथा आशाका उच्छेद

करते हैं, वे नरकोंमें जाते हैं। जो मूर्ख जीविकाका कष्ट भोगनेवाले ब्राह्मणोंको भोजनकी इच्छासे दरवाजेपर आते देख उनकी परीक्षा करने लगता है—उन्हें तुरंत भोजन नहीं देता, उसे नरकका अतिथि समझना चाहिये। जो मूढ़ अनाथ, वैष्णव, दीन, रोगातुर तथा वृद्ध मनुष्यपर दया नहीं करता तथा जो पहले कोई नियम लेकर पीछे अजितेन्द्रियताके कारण उसे छोड़ देता है, वह निश्चय ही नरकका पात्र है।

जो सब पापोंको हरनेवाले दिव्यस्वरूप, व्यापक, विजयी, सनातन, अजन्मा, चतुर्भुज, अच्युत, विष्णुरूप, दिव्य पुरुष श्रीनारायणदेवका पूजन, ध्यान और स्मरण करते हैं, वे श्रीहरिके परम धामको प्राप्त होते हैं—यह सनातन श्रुति है। भगवान् दामोदरके गुणोंका कीर्तन ही मङ्गलमय है, वही धनका उपार्जन है तथा वही इस जीवनका फल है। अमिततेजस्वी देवाधिदेव श्रीविष्णुके कीर्तनसे सब पाप उसी प्रकार नष्ट हो जाते हैं, जैसे दिन निकलनेपर अन्धकार। जो प्रतिदिन श्रद्धापूर्वक भगवान् श्रीविष्णुकी यशोगाथाका गान करते और सदा स्वाध्यायमें लगे रहते हैं, वे मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं। विप्रवर! भगवान् वासुदेवके नाम-जपमें लगे हुए मनुष्य पहलेके पापी रहे हों तो भी भयानक यमदूत उनके पास नहीं फटकने पाते। द्विजश्रेष्ठ! हरिकीर्तनको छोड़कर दूसरा कोई ऐसा साधन मैं नहीं देखता, जो जीवोंके सम्पूर्ण पापोंका नाश करनेवाला प्रायश्चित्त हो।*

जो माँगनेपर प्रसन्न होते हैं, देकर प्रिय वचन बोलते हैं तथा जिन्होंने दानके फलका परित्याग कर दिया है, वे मनुष्य स्वर्गमें जाते हैं। जो दिनमें सोना छोड़ देते हैं, सब कुछ सहन करते हैं, पर्वके अवसरपर लोगोंको आश्रय देते हैं, अपनेसे द्वेष रखनेवालोंके

---

* येऽर्चयन्ति हरिं देवं विष्णुं जिष्णुं सनातनम् । नारायणमजं देवं विष्णुरूपं चतुर्भुजम्॥
ध्यायन्ति पुरुषं दिव्यमच्युतं ये स्मरन्ति च । लभन्ते ते हरिस्थानं श्रुतिरेषा सनातनी॥

प्रति भी कभी द्वेषवश अहितकारक वचन मुँहसे नहीं निकालते अपितु सबके गुणोंका ही बखान करते हैं, वे मनुष्य स्वर्गमें जाते हैं। जो परायी स्त्रियोंकी ओरसे उदासीन होते हैं और सत्त्वगुणमें स्थित होकर मन, वाणी अथवा क्रियाद्वारा कभी उनमें रमण नहीं करते, वे मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं।

जिस-किसी कुलमें उत्पन्न होकर भी जो दयालु, यशस्वी, उपकारी और सदाचारी होते हैं, वे मनुष्य स्वर्गमें जाते हैं। जो व्रतको क्रोधसे, लक्ष्मीको डाहसे, विद्याको मान और अपमानसे, आत्माको प्रमादसे, बुद्धिको लोभसे, मनको कामसे तथा धर्मको कुसङ्गसे बचाये रखते हैं, वे मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं।* विप्र! जो शुक्ल और कृष्णपक्षमें भी एकादशीको विधिपूर्वक उपवास करते हैं, वे मानव स्वर्गमें जाते हैं। समस्त बालकोंका पालन करनेके लिये जैसे माता बनायी गयी है तथा रोगियोंकी रक्षाके लिये जैसे औषधकी रचना हुई है, उसी प्रकार सम्पूर्ण लोकोंकी रक्षाके निमित्त एकादशी तिथिका निर्माण हुआ है। एकादशीके व्रतके समान पापसे रक्षा करनेवाला दूसरा कोई साधन नहीं है। अतः एकादशीको विधिपूर्वक उपवास करनेसे मनुष्य स्वर्गलोकमें जाते हैं।

---

इदमेव हि माङ्गल्यमिदमेव धनार्जनम्। जीवितस्य फलं चैतद् यद्दामोदरकीर्तनम्॥
कीर्तनाद् देवदेवस्य विष्णोरमिततेजसः। दुरितानि विलीयन्ते तमांसीव दिनोदये॥
गाथां गायन्ति ये नित्यं वैष्णवीं श्रद्धयान्विताः। स्वाध्यायनिरता नित्यं ते नराः स्वर्गगामिनः॥
वासुदेवजपासक्तानपि पापकृतो जनान्। नोपसर्पन्ति तान् विप्र यमदूताः सुदारुणाः॥
नान्यत्पश्यामि जन्तूनां विहाय हरिकीर्तनम्। सर्वपापप्रशमनं प्रायश्चित्तं द्विजोत्तम॥
(९२।१०—१६)

* यस्मिन् कस्मिन् कुले जाता दयावन्तो यशस्विनः। सानुक्रोशः सदाचारास्ते नराः स्वर्गगामिनः॥
व्रतं रक्षन्ति ये कोपाच्छ्रियं रक्षन्ति मत्सरात्। विद्यां मानापमानाभ्यां ह्यात्मानं तु प्रमादतः॥
मतिं रक्षन्ति ये लोभान्मनो रक्षन्ति कामतः। धर्मं रक्षन्ति दुःसङ्गात्ते नराः स्वर्गगामिनः॥
(९२।२१—२३)

अखिल विश्वके नायक भगवान् श्रीनारायणमें जिनकी भक्ति है, वे सत्यसे हीन और रजोगुणसे युक्त होनेपर भी अनन्त पुण्यशाली हैं तथा अन्तमें वे वैकुण्ठधाममें पधारते हैं।* जो वेतसी, यमुना, सीता (गङ्गा) तथा पुण्यसलिला गोदावरीका सेवन और सदाचारका पालन करते हैं; जिनकी स्नान और दानमें सदा प्रवृत्ति है, वे मनुष्य कभी नरकके मार्गका दर्शन नहीं करते।† जो कल्याणदायिनी नर्मदा नदीमें गोते लगाते तथा उसके दर्शनसे प्रसन्न होते हैं, वे पापरहित हो महादेवजीके लोकमें जाते और चिरकालतक वहाँ आनन्द भोगते हैं। जो मनुष्य चर्मण्वती (चम्बल) नदीमें स्नान करके शौचसंतोषादि नियमोंका पालन करते हुए उसके तटपर—विशेषतः व्यासाश्रममें तीन रात निवास करते हैं, वे स्वर्गलोकके अधिकारी माने गये हैं। जो गङ्गाजीके जलमें अथवा प्रयाग, केदारखण्ड, पुष्कर, व्यासाश्रम या प्रभासक्षेत्रमें मृत्युको प्राप्त होते हैं, वे विष्णुलोकमें जाते हैं। जिनकी द्वारका या कुरुक्षेत्रमें मृत्यु हुई है अथवा जो योगाभ्याससे मृत्युको प्राप्त हुए हैं अथवा मृत्युकालमें जिनके मुखसे 'हरि' इन दो अक्षरोंका उच्चारण हुआ है, वे सभी भगवान् श्रीहरिके प्रिय हैं।

विप्र! जो द्वारकापुरीमें तीन रात भी ठहर जाता है, वह अपनी ग्यारह इन्द्रियोंद्वारा किये हुए सारे पापोंको नष्ट करके स्वर्गमें जाता है—ऐसी वहाँकी मर्यादा है। वैष्णवव्रत (एकादशी) के पालनसे होनेवाला धर्म तथा यज्ञादिके अनुष्ठानसे उत्पन्न होनेवाला धर्म—इन दोनोंको

---

* ये भक्तिमन्तो मधुसूदनस्य नारायणस्याखिलनायकस्य।
सत्येन हीना रजसापि युक्ता गच्छन्ति ते नाकमनन्तपुण्याः॥ (९२। २७)

† वेतसीं यमुनां सीतां पुण्यां गोदावरीनदीम्।
सेवन्ते ये शुभाचाराः स्नानदानपरायणाः॥
.............................................।
न ते पश्यन्ति पन्थानं नरकस्य कदाचन॥ (९२। २८-२९)

विधाताने तराजूपर रखकर तोला था, उस समय इनमेंसे पहलेका ही पलड़ा भारी रहा। ब्रह्मन्! जो एकादशीका सेवन करते हैं तथा जो 'अच्युत-अच्युत' कहकर भगवन्नामका कीर्तन करते हैं, उनपर मेरा शासन नहीं चलता। मैं तो स्वयं ही उनसे बहुत डरता हूँ।

जो मनुष्य प्रत्येक मासमें एक दिन—अमावास्याको श्राद्धके नियमका पालन करते हैं और ऐसा करनेके कारण जिनके पितर सदा तृप्त रहते हैं, वे धन्य हैं। वे स्वर्गगामी होते हैं। भोजन तैयार होनेपर जो आदरपूर्वक उसे दूसरोंको परोसते हैं और भोजन देते समय जिनके चेहरेके रंगमें परिवर्तन नहीं होता, वे शिष्ट पुरुष स्वर्गलोकमें जाते हैं। जो मर्त्यलोकके भीतर भगवान् श्रीनर-नारायणके आवासस्थान बदरिकाश्रममें और नन्दा (सरस्वती)के तटपर तीन रात निवास करते हैं, वे धन्यवादके पात्र और भगवान् श्रीविष्णुके प्रिय हैं। ब्रह्मन्! जो भगवान् पुरुषोत्तमके समीप (जगन्नाथपुरीमें) छः मासतक निवास कर चुके हैं, वे अच्युतस्वरूप हैं और दर्शनमात्रसे समस्त पापोंको हर लेनेवाले हैं।

जो अनेक जन्मोंमें उपार्जित पुण्यके प्रभावसे काशीपुरीमें जाकर मणिकर्णिकाके जलमें गोते लगाते और श्रीविश्वनाथजीके चरणोंमें मस्तक झुकाते हैं, वे भी इस लोकमें आनेपर मेरे वन्दनीय होते हैं। जो श्रीहरिकी पूजा करके पृथ्वीपर कुश और तिल बिछाकर चारों ओर तिल बिखेरते और लोहा तथा दूध देनेवाली गौ दान करके विधिपूर्वक मृत्युको प्राप्त होते हैं, वे मनुष्य स्वर्गमें जाते हैं। जो पुत्रोंको उत्पन्न करके उन्हें पिता-पितामहोंके पदपर बिठाकर ममता और अहंकारसे रहित होकर मरते हैं, वे भी स्वर्गलोकके अधिकारी होते हैं। जो चोरी-डकैतीसे दूर रहकर सदा अपने ही धनसे संतुष्ट रहते हैं अथवा अपने भाग्यपर ही निर्भर रहकर जीविका चलाते हैं, वे मनुष्य स्वर्गगामी

होते हैं। जो स्वागत करते हुए शुद्ध पीड़ारहित मधुर तथा पापरहित वाणीका प्रयोग करते हैं, वे लोग स्वर्गमें जाते हैं। जो दान-धर्ममें प्रवृत्त तथा धर्ममार्गके अनुयायी पुरुषोंका उत्साह बढ़ाते हैं, वे चिरकालतक स्वर्गमें आनन्द भोगते हैं। जो हेमन्त-ऋतु (शीतकाल)-में सूखी लकड़ी, गर्मीमें शीतल जल तथा वर्षामें आश्रय प्रदान करता है, वह स्वर्गलोकमें सम्मानित होता है। जो नित्य-नैमित्तिक आदि समस्त पुण्यकालोंमें भक्तिपूर्वक श्राद्ध करता है, वह निश्चय ही देवलोकका भागी होता है। दरिद्रका दान, सामर्थ्यशालीकी क्षमा, नौजवानोंकी तपस्या, ज्ञानियोंका मौन, सुख भोगनेके योग्य पुरुषोंकी सुखेच्छा-निवृत्ति तथा सम्पूर्ण प्राणियोंपर दया—ये सद्गुण स्वर्गमें ले जाते हैं।*

ध्यानयुक्त तप भवसागरसे तारनेवाला है और पापको पतनका कारण बताया गया है; यह बिलकुल सत्य है, इसमें संदेहकी गुंजाइश नहीं है।† ब्रह्मन्! स्वर्गकी राहपर ले जानेवाले समस्त साधनोंका मैंने यहाँ संक्षेपसे वर्णन किया है; अब तुम और क्या सुनना चाहते हो?

## तुलसीदल और अश्वत्थकी महिमा तथा वैशाख-माहात्म्यके सम्बन्धमें तीन प्रेतोंके उद्धारकी कथा

**ब्राह्मणने पूछा**—धर्मराज! वैशाखमासमें प्रातःकाल स्नान करके एकाग्रचित्त हुआ पुरुष भगवान् माधवका पूजन किस प्रकार करे? आप इसकी विधिका वर्णन करें।

---

* दानं दरिद्रस्य विभोः क्षमित्वं यूनां तपो ज्ञानवतां च मौनम्।
इच्छानिवृत्तिश्च सुखोचितानां दया च भूतेषु दिवं नयन्ति॥ (९२। ५८)

† तपो ध्यानसमायुक्तं तारणाय भवाम्बुधेः।
पापं तु पतनायोक्तं सत्यमेव न संशयः॥ (९२। ६०)

**धर्मराजने कहा**—ब्रह्मन्! पत्तोंकी जितनी जातियाँ हैं, उन सबमें तुलसी भगवान् श्रीविष्णुको अधिक प्रिय है। पुष्कर आदि जितने तीर्थ हैं, गङ्गा आदि जितनी नदियाँ हैं तथा वासुदेव आदि जो-जो देवता हैं, वे सभी तुलसीदलमें निवास करते हैं। अतः तुलसी सर्वदा और सब समय भगवान् श्रीविष्णुको प्रिय है। कमल और मालतीका फूल छोड़कर तुलसीका पत्ता ग्रहण करे और उसके द्वारा भक्तिपूर्वक माधवकी पूजा करे। उसके पुण्यफलका पूरा-पूरा वर्णन करनेमें शेष भी समर्थ नहीं हैं। जो बिना स्नान किये ही देवकार्य या पितृकार्यके लिये तुलसीका पत्ता तोड़ता है, उसका सारा कर्म निष्फल हो जाता है तथा वह पञ्चगव्य पान करनेसे शुद्ध होता है। जैसे हर्रे बहुतेरे रोगोंको तत्काल हर लेती है, उसी प्रकार तुलसी दरिद्रता और दुःखभोग आदिसे सम्बन्ध रखनेवाले अधिक-से-अधिक पापोंको भी शीघ्र ही दूर कर देती है।* तुलसी काले रंगके पत्तोंवाली हो या हरे रंगकी, उसके द्वारा श्रीमधुसूदनकी पूजन करनेसे प्रत्येक मनुष्य—विशेषतः भगवान्‌का भक्त नरसे नारायण हो जाता है। जो पूरे वैशाखभर तीनों सन्ध्याओंके समय तुलसीदलसे मधुहन्ता श्रीहरिका पूजन करता है, उसका पुनः इस संसारमें जन्म नहीं होता। फूल और पत्तोंके न मिलनेपर अन्न आदिके द्वारा—धान, गेहूँ, चावल अथवा जौके द्वारा भी सदा श्रीहरिका पूजन करे। तत्पश्चात् सर्वदेवमय भगवान् विष्णुकी प्रदक्षिणा करे। इसके बाद देवताओं, मनुष्यों, पितरों तथा चराचर जगत्‌का तर्पण करना चाहिये।

पीपलको जल देनेसे दरिद्रता, कालकर्णी (एक तरहका रोग), दुःस्वप्न, दुश्चिन्ता तथा सम्पूर्ण दुःख नष्ट हो जाते हैं। जो बुद्धिमान्

* दारिद्र्यदुःखभोगादिपापानि सुबहून्यपि॥ तुलसी हरते क्षिप्रं रोगानिव हरीतकी। (९४। ८-९)

पीपलके पेड़की पूजा करता है, उसने अपने पितरोंको तृप्त कर दिया, भगवान् विष्णुकी आराधना कर ली तथा सम्पूर्ण ग्रहोंका भी पूजन कर लिया। अष्टाङ्गयोगका साधन, स्नान करके पीपलके वृक्षका सिंचन तथा श्रीगोविन्दका पूजन करनेसे मनुष्य कभी दुर्गतिको नहीं प्राप्त होता। जो सब कुछ करनेमें असमर्थ हो, वह स्त्री या पुरुष यदि पूर्वोक्त नियमोंसे युक्त होकर वैशाखकी त्रयोदशी, चतुर्दशी और पूर्णिमा— तीनों दिन भक्तिसे विधिपूर्वक प्रातःस्नान करे तो सब पातकोंसे मुक्त होकर अक्षय स्वर्गका उपभोग करता है। जो वैशाखमासमें प्रसन्नताके साथ भक्तिपूर्वक ब्राह्मणोंको भोजन कराता है तथा तीन राततक प्रातःकाल एक बार भी स्नान करके संयम और शौचका पालन करते हुए श्वेत या काले तिलोंको मधुमें मिलाकर बारह ब्राह्मणोंको दान देता है और उन्हींके द्वारा स्वस्तिवाचन कराता है तथा 'मुझपर धर्मराज प्रसन्न हों' इस उद्देश्यसे देवताओं और पितरोंका तर्पण करता है, उसके जीवनभरके किये हुए पाप तत्काल नष्ट हो जाते हैं। जो वैशाखकी पूर्णिमाको मणिक (मटका), जलके घड़े, पकवान तथा सुवर्णमय दक्षिणा दान करता है, उसे अश्वमेधयज्ञका फल मिलता है।

इस विषयमें एक प्राचीन इतिहास कहा जाता है, जिसमें एक ब्राह्मणका महान् वनके भीतर प्रेतोंके साथ संवाद हुआ था। मध्यदेशमें एक धनशर्मा नामक ब्राह्मण रहता था; उसमें पापका लेशमात्र भी नहीं था। एक दिन वह कुश आदिके लिये वनमें गया। वहाँ उसने एक अद्भुत बात देखी। उसे तीन महाप्रेत दिखायी दिये, जो बड़े ही दुष्ट और भयंकर थे। धनशर्मा उन्हें देखकर डर गया। उन प्रेतोंके केश ऊपरको उठे हुए थे। लाल-लाल आँखें, काले-काले दाँत और सूखा हुआ उनका पेट था।

**धनशर्माने पूछा**—तुमलोग कौन हो? यह नारकी अवस्था तुम्हें

कैसे प्राप्त हुई? मैं भयसे आतुर और दुःखी हूँ, दयाका पात्र हूँ; मेरी रक्षा करो। मैं भगवान् विष्णुका दास हूँ, मेरी रक्षा करनेसे भगवान् तुमलोगोंका भी कल्याण करेंगे। भगवान् विष्णु ब्राह्मणोंके हितैषी हैं, मुझपर दया करनेसे वे तुम्हारे ऊपर संतुष्ट होंगे। श्रीविष्णुका अलसीके पुष्पके समान श्याम वर्ण है, वे पीताम्बरधारी हैं, उनका नाम श्रवण करनेमात्रसे सब पापोंका क्षय हो जाता है। भगवान् आदि और अन्तसे रहित, शङ्ख, चक्र एवं गदा धारण करनेवाले, अविनाशी, कमलके समान नेत्रोंवाले तथा प्रेतोंको मोक्ष प्रदान करनेवाले हैं।

**यमराज कहते हैं**—ब्रह्मन्! भगवान् विष्णुका नाम सुननेमात्रसे वे पिशाच संतुष्ट हो गये। उनका भाव पवित्र हो गया। वे दया और उदारताके वशीभूत हो गये। ब्राह्मणके कहे हुए वचनसे उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई थी। उसके पूछनेपर वे प्रेत इस प्रकार बोले।

**प्रेतोंने कहा**—विप्र! तुम्हारे दर्शनमात्रसे तथा भगवान् श्रीहरिका नाम सुननेसे हम इस समय दूसरे ही भावको प्राप्त हो गये—हमारा भाव बदल गया, हम दयालु हो गये। वैष्णव पुरुषका समागम निश्चय ही पापोंको दूर भगाता, कल्याणसे संयोग कराता तथा शीघ्र ही यशका विस्तार करता है।* अब हमलोगोंका परिचय सुनो। यह पहला 'कृतघ्न' नामका प्रेत है, इस दूसरेका नाम 'विदैवत' है तथा तीसरा मैं हूँ, मेरा नाम 'अवैशाख' है, मैं तीनोंमें अधिक पापी हूँ। इस प्रथम पापीने सदा ही कृतघ्नता की है; अतः इसके कर्मके अनुसार ही इसका 'कृतघ्न' नाम पड़ा है। ब्रह्मन्! यह पूर्वजन्ममें 'सुदास' नामक द्रोही मनुष्य था, सदा कृतघ्नता किया करता था, उसी पापसे यह

* दर्शनेनैव ते विप्र नामश्रवणतो हरेः। भावमन्यमनुप्राप्ता वयं जाता दयालवः॥
अपाकरोति दुरितं श्रेयः संयोजयत्यपि। यशो विस्तारयत्याशु नूनं वैष्णवसङ्गमः॥
(९४। ५४-५५)

इस अवस्थाको पहुँचा है। अत्यन्त पापी, धूर्त तथा गुरु और स्वामीका अहित करनेवाले मनुष्यके लिये भी पापोंसे छूटनेका उपाय है; परन्तु कृतघ्नके लिये कोई प्रायश्चित्त नहीं है।*

इस दूसरे पापीने देवताओंका पूजन किये बिना ही सदा अन्न भोजन किया है, इसने गुरु और ब्राह्मणोंको कभी दान नहीं दिया है; इसीलिये इसका नाम 'विदैवत' हुआ है। यह पूर्वजन्ममें 'हरिवीर' नामसे विख्यात राजा था। दस हजार गाँवोंपर इसका अधिकार था। यह रोष, अहंकार तथा नास्तिकताके कारण गुरुजनोंकी आज्ञाका उल्लङ्घन करनेमें तत्पर रहता था। प्रतिदिन पञ्चमहायज्ञोंका अनुष्ठान किये बिना ही खाता और ब्राह्मणोंकी निन्दा किया करता था। उसी पापकर्मके कारण यह बड़े-बड़े नरकोंका कष्ट भोगकर इस समय 'विदैवत' नामक प्रेत हुआ है।

'अवैशाख' नामक तीसरा प्रेत मैं हूँ। मैं पूर्वजन्ममें ब्राह्मण था। मध्यदेशमें मेरा जन्म हुआ था। मेरा नाम भी गौतम था और गोत्र भी। मैं 'वासपुर' गाँवमें निवास करता था। मैंने वैशाखमासमें भगवान् माधवकी प्रसन्नताके उद्देश्यसे कभी स्नान नहीं किया। दान और हवन भी नहीं किया। विशेषतः वैशाखमाससे सम्बन्ध रखनेवाला कोई कर्म नहीं किया। वैशाखमें भगवान् मधुसूदनका पूजन नहीं किया तथा विद्वान् पुरुषोंको दान आदिसे संतुष्ट नहीं किया। वैशाखमासकी एक भी पूर्णिमाको, जो पूर्ण फल प्रदान करनेवाली है, मैंने स्नान, दान, शुभ कर्म, पूजा तथा पुण्यके द्वारा उसके व्रतका पालन नहीं किया। इससे मेरा सारा वैदिक कर्म निष्फल हो गया। मैं 'अवैशाख' नामक प्रेत होकर सब ओर विचरता हूँ।

* अतिपापिनि धूर्ते च गुरुस्वाम्यहितेऽपि वा। निष्कृतिर्विद्यते विप्र कृतघ्ने नास्ति निष्कृतिः॥ (९४। ६०)

हम तीनोंके प्रेतयोनिमें पड़नेका जो कारण है, वह सब मैंने तुम्हें बता दिया। अब तुम हमलोगोंका पापसे उद्धार करो; क्योंकि तुम विप्र हो। ब्रह्मन्! पुण्यात्मा साधु पुरुष तीर्थोंसे भी बढ़कर हैं। वे शरणमें आये हुए महान् पापियोंको भी नरकसे तार देते हैं। जो मनुष्य सदा गङ्गा आदि सम्पूर्ण तीर्थोंमें स्नान करता है तथा जो केवल साधु पुरुषोंका सङ्ग करता है, उनमें साधु-सङ्ग करनेवाला पुरुष ही श्रेष्ठ है।* अतः तुम मेरा उद्धार करो अथवा मेरा एक पुत्र है, जो धनशर्मा नामसे विख्यात है; स्वामिन्! तुम उसीके पास जाकर ये सब बातें समझाओ। हमारे लिये इतना परिश्रम करो। जो दूसरोंका कार्य उपस्थित होनेपर उसके लिये उद्योग करता है, उसे उसका पूरा फल मिलता है; वह यज्ञ, दान और शुभ कर्मोंसे भी अधिक फलका भागी होता है।

**यमराज कहते हैं**—ब्रह्मन्! उस प्रेतका वचन सुनकर धनशर्माको बड़ा दुःख हुआ। उसने यह जान लिया कि ये मेरे पिता हैं, जो नरकमें पड़े हुए हैं। तब वह सर्वथा अपनी निन्दा करते हुए बोला।

**धनशर्माने कहा**—स्वामिन्! मैं ही गौतमका—आपका पुत्र धनशर्मा हूँ। मैं आपके किसी काम न आया, मेरा जन्म निरर्थक है। जो पुत्र आलस्य छोड़कर अपने पिताका उद्धार नहीं करता, वह अपनेको पवित्र नहीं कर पाता। जो इस लोक और परलोकमें भी सुखका संतान—विस्तार कर सके, वही संतान या तनय माना गया है। इस लोकमें धर्मकी दृष्टिसे पुरुषके दो ही गुरु हैं—पिता और माता। इनमें भी पिता ही श्रेष्ठ है; क्योंकि सर्वत्र बीजकी ही प्रधानता देखी जाती है। पिताजी! क्या करूँ? कहाँ जाऊँ? कैसे आपकी गति होगी? मैं धर्मका

* गङ्गादिसर्वतीर्थेषु यो नरः स्नाति सर्वदा। यः करोति सतां सङ्गं तयोः सत्सङ्गमो वरः॥ (९४। ७६)

तत्त्व नहीं जानता, केवल आपकी आज्ञाका पालन करूँगा।

**प्रेत बोला**—बेटा! घर जाओ और यमुनामें विधिपूर्वक स्नान करो। आजसे पाँचवें दिन वैशाखकी पूर्णिमा आनेवाली है, जो सब प्रकारकी उत्तम गति प्रदान करनेवाली तथा देवता और पितरोंके पूजनके लिये उपयुक्त है। उस दिन पितरोंके निमित्त भक्तिपूर्वक तिलमिश्रित जल, जलका घड़ा, अन्न और फल दान करना चाहिये। उस दिन जो श्राद्ध किया जाता है, वह पितरोंको हजार वर्षोंतक आनन्द प्रदान करनेवाला होता है। जो वैशाखकी पूर्णिमाको विधिपूर्वक स्नान करके दस ब्राह्मणोंको खीर भोजन कराता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो जाता है। जो धर्मराजकी प्रसन्नताके लिये जलसे भरे हुए सात घड़े दान करता है, वह अपनी सात पीढ़ियोंको तार देता है। बेटा! त्रयोदशी, चतुर्दशी तथा पूर्णिमाको भक्तिपरायण होकर स्नान, जप, दान, होम और श्रीमाधवका पूजन करो और उससे जो फल हो, वह हमलोगोंको समर्पित कर दो। ये दोनों प्रेत भी मेरे परिचित हो गये हैं; अतः इनको इसी अवस्थामें छोड़कर मैं स्वर्गमें नहीं जा सकता। इन दोनोंके पापका भी अन्त आ गया है।

**यमराज कहते हैं**—ब्रह्मन्! 'बहुत अच्छा' कहकर वह श्रेष्ठ ब्राह्मण अपने घर गया और वहाँ जाकर उसने सब कुछ उसी तरह किया। वह प्रसन्नतापूर्वक परम भक्तिके साथ वैशाख-स्नान और दान करने लगा। वैशाखकी पूर्णिमा आनेपर उसने आनन्दपूर्वक भक्तिसे स्नान किया और बहुत-से दान करके उन सबको पृथक्-पृथक् पुण्य प्रदान किया। उस पवित्र दानके संयोगसे वे सब आनन्दमग्न हो विमानपर बैठकर तत्क्षण ही स्वर्गको चले गये।

ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ धनशर्मा भी श्रुति, स्मृति और पुराणोंका ज्ञाता था। वह चिरकालतक उत्तम भोग भोगकर अन्तमें ब्रह्मलोकको प्राप्त

हुआ। अतः यह वैशाखकी पूर्णिमा परम पुण्यमयी और समस्त विश्वको पवित्र करनेवाली है। इसका माहात्म्य बहुत बड़ा है, अतएव मैंने संक्षेपसे तुम्हें इसका महत्त्व बतला दिया है। जो वैशाखमासमें प्रातःकाल स्नान करके नियमोंके पालनसे विशुद्धचित्त हो भगवान् मधुसूदनकी पूजा करते हैं, वे ही पुरुष धन्य हैं, वे ही पुण्यात्मा हैं तथा वे ही संसारमें पुरुषार्थके भागी हैं। जो मनुष्य वैशाखमासमें सबेरे स्नान करके सम्पूर्ण यम-नियमोंसे युक्त हो भगवान् लक्ष्मीपतिकी आराधना करता है, वह निश्चय ही अपने पापोंका नाश कर डालता है। जो प्रातःकाल उठकर श्रीविष्णुकी पूजाके लिये गङ्गाजीके जलमें डुबकी लगाते हैं, उन्हीं पुरुषोंने समयका सदुपयोग किया है, वे ही मनुष्योंमें धन्य तथा पापरहित हैं। वैशाखमासमें प्रातःकाल नियमयुक्त हो मनुष्य जब तीर्थमें स्नान करनेके लिये पैर बढ़ाता है, उस समय श्रीमाधवके स्मरण और नामकीर्तनसे उसका एक-एक पग अश्वमेध-यज्ञके समान पुण्य देनेवाला होता है। श्रीहरिके प्रियतम वैशाखमासके व्रतका यदि पालन किया जाय तो यह मेरुपर्वतके समान बड़े उग्र पापोंको भी जलाकर भस्म कर डालता है। विप्रवर! तुमपर अनुग्रह होनेके कारण मैंने यह प्रसङ्ग संक्षेपसे तुम्हें बता दिया है। जो मेरे कहे हुए इस इतिहासको भक्तिपूर्वक सुनेगा, वह भी सब पापोंसे मुक्त हो जायगा तथा उसे मेरे लोक—यमलोकमें नहीं आना पड़ेगा। वैशाखमासके व्रतका विधिपूर्वक पालन करनेसे अनेकों बारके किये हुए ब्रह्महत्यादि पाप भी नष्ट हो जाते हैं—यह निश्चित बात है। वह पुरुष अपने तीस पीढ़ी पहलेके पूर्वजों और तीस पीढ़ी बादकी संतानोंको भी तार देता है; क्योंकि अनायास ही नाना प्रकारके कर्म करनेवाले भगवान् श्रीहरिको वैशाखमास बहुत ही प्रिय है; अतएव वह सब मासोंमें श्रेष्ठ है।

## वैशाख-माहात्म्यके प्रसङ्गमें राजा महीरथकी कथा और यम-ब्राह्मण-संवादका उपसंहार

**यमराज कहते हैं**—ब्रह्मन्! पूर्वकालकी बात है, महीरथ नामसे विख्यात एक राजा थे। उन्हें अपने पूर्वजन्मके पुण्योंके फलस्वरूप प्रचुर ऐश्वर्य और सम्पत्ति प्राप्त हुई थी। परन्तु राजा राज्यलक्ष्मीका सारा भार मन्त्रीपर रखकर स्वयं विषयभोगमें आसक्त हो रहे थे। वे न प्रजाकी ओर दृष्टि डालते थे, न धनकी ओर। धर्म और अर्थका काम भी कभी नहीं देखते थे। उनकी वाणी तथा उनका मन कामिनियोंकी क्रीड़ामें ही आसक्त था। राजाके पुरोहितका नाम कश्यप था; जब राजाको विषयोंमें रमते हुए बहुत दिन व्यतीत हो गये, तब पुरोहितने मनमें विचार किया—'जो गुरु मोहवश राजाको अधर्मसे नहीं रोकता, वह भी उसके पापका भागी होता है; यदि समझानेपर भी राजा अपने पुरोहितके वचनोंकी अवहेलना करता है तो पुरोहित निर्दोष हो जाता है। उस दशामें राजा ही सारे दोषोंका भागी होता है।' यह सोचकर उन्होंने राजासे धर्मानुकूल वचन कहा।

**कश्यप बोले**—राजन्! मैं तुम्हारा गुरु हूँ, अतः धर्म और अर्थसे युक्त मेरे वचनोंको सुनो। राजाके लिये यही सबसे बड़ा धर्म है कि वह गुरुकी आज्ञामें रहे। गुरुकी आज्ञाका आंशिक पालन भी राजाओंकी आयु, लक्ष्मी तथा सौख्यको बढ़ानेवाला है। तुमने दानके द्वारा कभी ब्राह्मणोंको तृप्त नहीं किया; भगवान् श्रीविष्णुकी आराधना नहीं की; कोई व्रत, तपस्या तथा तीर्थ भी नहीं किया। महाराज! कितने खेदकी बात है कि तुमने कामके अधीन होकर कभी भगवान्के नामका स्मरण नहीं किया। अबलाओंकी संगतिमें पड़कर विद्वानोंकी संगति नहीं की। जिसका मन स्त्रियोंने हर लिया, उसे अपनी विद्या,

तपस्या, त्याग, नीति तथा विवेकशील चित्तसे क्या लाभ हुआ।* एकमात्र धर्म ही सबसे महान् और श्रेष्ठ है, जो मृत्युके बाद भी साथ जाता है। शरीरके उपभोगमें आनेवाली अन्य जितनी वस्तुएँ हैं, वे सब यहीं नष्ट हो जाती हैं। धर्मकी सहायतासे ही मनुष्य दुर्गतिसे पार होता है। राजेन्द्र! क्या तुम नहीं जानते, मनुष्योंके जीवनका विलास जलकी उत्ताल तरङ्गोंके समान चञ्चल एवं अनित्य है। जिनके लिये विनय ही पगड़ी और मुकुट हैं, सत्य और धर्म ही कुण्डल हैं तथा त्याग ही कंगन हैं, उन्हें जड आभूषणोंकी क्या आवश्यकता है। मनुष्यके निर्जीव शरीरको ढेले और काठके समान पृथ्वीपर फेंक, उसके बन्धु-बान्धव मुँह फेरकर चल देते हैं; केवल धर्म ही उसके पीछे-पीछे जाता है। सब कुछ जा रहा है, आयु प्रतिदिन क्षीण हो रही है तथा यह जीवन भी लुप्त होता जा रहा है; ऐसी अवस्थामें भी तुम उठकर भागते क्यों नहीं? स्त्री-पुत्र आदि कुटुम्ब, शरीर तथा द्रव्य-संग्रह—ये सब पराये हैं, अनित्य हैं; किन्तु पुण्य और पाप अपने हैं। जब एक दिन सब कुछ छोड़कर तुम्हें विवशतापूर्वक जाना ही है तो तुम अनर्थमें फँसकर अपने धर्मका अनुष्ठान क्यों नहीं करते? मरनेके बाद उस दुर्गम पथपर अकेले कैसे जा सकोगे, जहाँ न ठहरनेके लिये स्थान, न खानेयोग्य अन्न, न पानी, न राहखर्च और न राह बतानेवाला कोई गुरु ही है। यहाँसे प्रस्थान करनेके बाद तुम्हारे पीछे कुछ भी नहीं जायगा, केवल पाप और पुण्य जाते समय तुम्हारे पीछे-पीछे जायँगे।†

* किं विद्यया किं तपसा किं त्यागेन नयेन वा।
किं विविक्तेन मनसा स्त्रीभिर्यस्य मनो हतम्॥ (९५। १४)

† मृतं शरीरमुत्सृज्य लोष्टकाष्ठसमं भुवि। विमुखा बान्धवा यान्ति धर्मस्तमनुगच्छति॥
गम्यमानेषु सर्वेषु क्षीयमाणे तथायुषि। जीविते लुप्यमाने च किमुत्थाय न धावसि॥

अतः अब तुम आलस्य छोड़कर वेदों तथा स्मृतियोंमें बताये हुए देश और कुलके अनुरूप हितकारक कर्मका अनुष्ठान करो, धर्ममूलक सदाचारका सेवन करो। अर्थ और काम भी यदि धर्मसे रहित हों तो उनका परित्याग कर देना चाहिये। दिन-रात इन्द्रियविजयरूपी योगका अनुष्ठान करना चाहिये; क्योंकि जितेन्द्रिय राजा ही प्रजाको अपने वशमें रख सकता है। लक्ष्मी अत्यन्त प्रगल्भ रमणीके कटाक्षके समान चञ्चल होती है, विनयरूपी गुण धारण करनेसे ही वह राजाओंके पास दीर्घकालतक ठहरती है। जो अत्यन्त कामी और घमण्डी हैं, जिनका सारा कार्य बिना विचारे ही होता है, उन मूढ़चेता राजाओंकी सम्पत्ति उनकी आयुके साथ ही नष्ट हो जाती है। व्यसन और मृत्यु—इनमें व्यसनको ही कष्टदायक बताया गया है। व्यसनमें पड़े हुए राजाकी अधोगति होती है और जो व्यसनसे दूर रहता है, वह स्वर्गलोकमें जाता है।* व्यसन और दुःख विशेषतः कामसे ही उत्पन्न होते हैं; अतः कामका परित्याग करो। पापोंमें फँस जानेपर वैभव एवं भोग स्थिर नहीं रहते; वे शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं। चलते, रुकते, जागते और सोते समय भी जिसका चित्त विचारमें संलग्न नहीं रहता वह जीते-जी भी मरे हुएके ही तुल्य है। विद्वान् पुरुष विषय-चिन्ता छोड़कर समतापूर्ण, स्थिर एवं व्यावहारिक युक्तिसे परमार्थका साधन करते हैं। जीवका चित्त

कुटुम्बं पुत्रदारादि शरीरं द्रव्यसञ्चयः। पारक्यमध्रुवं किन्तु स्वीये सुकृतदुष्कृते॥
यदा सर्वं परित्यज्य गन्तव्यमवशेन ते। अनर्थे किं प्रसक्तस्त्वं स्वधर्मं नानुतिष्ठसि॥
अविश्राममभक्ष्याम्बुमपाथेयमदेशिकम्। मृतः कान्तारमध्वानं कथमेको गमिष्यसि॥
न हि त्वां प्रस्थितं किञ्चित् पृष्ठतोऽनुगमिष्यति। दुष्कृतं सुकृतं च त्वां यास्यन्तमनुयास्यति॥
(९५। १९—२४)

* व्यसनस्य च मृत्योश्च व्यसनं कष्टमुच्यते। व्यसन्यधोऽधो व्रजति स्वर्यात्यव्यसनी नृपः॥
(९५। ३१)

बालककी भाँति चपल होता है; अतः उससे बलपूर्वक काम लेना चाहिये। राजन्! धर्मके तत्त्वदर्शी वृद्ध पुरुषोंकी बुद्धिका सहारा ले पराबुद्धिके द्वारा अपने कुपथगामी चित्तको वशमें करना चाहिये। लौकिक धर्म, मित्र, भाई-बन्धु, हाथ-पैरोंका चलाना, देशान्तरमें जाना, शरीरसे क्लेश उठाना तथा तीर्थके लिये यत्न करना आदि कोई भी परमपदकी प्राप्तिमें सहायता नहीं कर सकते; केवल परमात्मामें मन लगाकर उनका नाम-जप करनेसे ही उस पदकी प्राप्ति होती है।

इसलिये राजन्! विद्वान् पुरुषको उचित है कि वह विषयोंमें प्रवृत्त हुए चित्तको रोकनेके लिये यत्न करे। यत्नसे वह अवश्य ही वशमें हो जाता है। यदि मनुष्य मोहमें पड़ जाय—स्वयं विचार करनेमें असमर्थ हो जाय तो उसे विद्वान् सुहृदोंके पास जाकर प्रश्न करना चाहिये। वे पूछनेपर यथोचित कर्तव्यका उपदेश देते हैं। कल्याणकी इच्छा रखनेवालेको हर एक उपायसे काम और क्रोधका निग्रह करना चाहिये; क्योंकि वे दोनों कल्याणका विघात करनेके लिये उद्यत रहते हैं। राजन्! काम बड़ा बलवान् है; वह शरीरके भीतर रहनेवाला महान् शत्रु है। श्रेयकी अभिलाषा रखनेवाले पुरुषको उसके अधीन नहीं होना चाहिये। अतः विधिपूर्वक पालन किया हुआ धर्म ही सबसे श्रेष्ठ है। इसलिये तुम धैर्य धारण करके धर्मका ही आचरण करो। यह श्वास बड़ा चञ्चल है, जीवन उसीके अधीन है। ऐसी स्थितिमें भी कौन मनुष्य धर्मके आचरणमें विलम्ब करेगा। राजन्! जो वृद्धावस्थाको प्राप्त हो चुका है, उसका चित्त भी इन निषिद्ध विषयोंकी ओरसे नहीं हटता; हाय! यह कितने शोककी बात है। पृथ्वीनाथ! इस कामके मोहमें पड़कर तुम्हारी सारी उम्र व्यर्थ बीत गयी, अब भी तो अपने हित-साधनमें लगो। राजन्! तुम्हारे लिये सर्वोत्तम हितकी बात कहता हूँ; क्योंकि मैं तुम्हारा पुरोहित और

तुम्हारे भले-बुरे कर्मोंका भागी हूँ। मुनीश्वरोंने ब्रह्महत्या, सुरापान, चोरी, गुरुपत्नीगमन आदि महापातक बताये हैं; उनमेंसे मनुष्योंद्वारा मन, वाणी और शरीरसे भी किये हुए जो पाप हैं, उन्हें वैशाखमास नष्ट कर देता है। जैसे सूर्य अन्धकारका नाश करता है, उसी प्रकार वैशाखमास पापरूपी महान् अन्धकारको सर्वथा नष्ट कर डालता है। इसलिये तुम विधिपूर्वक वैशाखव्रतका पालन करो। राजन्! मनुष्य वैशाखमासकी विधिके अनुष्ठानद्वारा होनेवाले पुण्यके प्रभावसे जन्मभरके किये हुए घोर पापोंका परित्याग करके परमधामको प्राप्त होता है। इसलिये महाराज! तुम भी इस वैशाखमासमें प्रातःस्नान करके विधिपूर्वक भगवान् मधुसूदनकी पूजा करो। जिस प्रकार कूटने-छाँटनेकी क्रियासे चावलकी भूसी छूट जाती है, माँजनेसे ताँबेकी कालिख मिट जाती है, उसी प्रकार शुभ कर्मका अनुष्ठान करनेसे पुरुषके अन्तःकरणका मल धुल जाता है।

**राजाने कहा**—सौम्य स्वभाववाले गुरुदेव! आपने मुझे वह अमृत पिलाया, जिसका आविर्भाव समुद्रसे नहीं हुआ है। आपका वचन संसाररूपी रोगका निवारण तथा दुर्व्यसनोंसे मुक्त करनेवाला द्रव्यभिन्न औषध है। आपने कृपा करके मुझे आज इस औषधका पान कराया है। विप्रवर! सत्पुरुषोंका समागम मनुष्योंको हर्ष प्रदान करनेवाली, उनके पापको दूर भगानेवाली तथा जरा-मृत्युका अपहरण करनेवाली संजीवनी बूटी है। इस पृथ्वीपर जो-जो मनोरथ दुर्लभ माने गये हैं, वे सब यहाँ साधु पुरुषोंके सङ्गसे प्राप्त हो जाते हैं। जो पापोंका अपहरण करनेवाली सत्सङ्गकी गङ्गामें स्नान कर चुका है, उसे दान, तीर्थसेवन, तपस्या तथा यज्ञ करनेकी क्या आवश्यकता है।* प्रभो!

* हर्षप्रदो नृणां पापहानिकृज्जीवनौषधम्। जरामृत्युहरो विप्र सद्भिः सह समागमः॥
यानि यानि दुरापानि वाञ्छितानि महीतले। प्राप्यन्ते तानि तान्येव साधुनापीह संगमात्॥

आजके पहले मेरे मनमें जो-जो भाव उठते थे, वे सब केवल काम-सुखके प्रति लोभ उत्पन्न करनेवाले थे; परन्तु आज आपके दर्शनसे तथा वचन सुननेसे उनमें विपरीत भाव आ गया। मूर्ख मनुष्य एक जन्मके सुखके लिये हजारों जन्मोंका सुख नष्ट करता है और विद्वान् पुरुष एक जन्मसे हजारों जन्म बना लेते हैं। हाय! हाय! कितने खेदकी बात है कि मुझ मूर्खने अपने मनको सदा कामजनित रसके आस्वादन-सुखमें ही फँसाये रखनेके कारण कभी कुछ भी आत्म-कल्याणका कार्य नहीं किया। अहो! मेरे मनका कैसा मोह है, जिससे मैंने स्त्रियोंके फेरमें पड़कर अपने आत्माको घोर विपत्तिमें डाल दिया, जिसका भविष्य अत्यन्त दुःखमय है तथा जिससे पार पाना बहुत कठिन है। भगवन्! आपने स्वतः सन्तुष्ट होकर अपनी वाणीसे आज मुझे मेरी स्थितिका बोध करा दिया। अब उपदेश देकर मेरा उद्धार कीजिये। पूर्वजन्ममें मैंने कोई पुण्य किया था, जिससे आपने मुझे बोध कराया है। विशेषतः आपके चरणोंकी धूलिसे आज मैं पवित्र हो गया। वक्ताओंमें श्रेष्ठ! अब आप मुझे वैशाखमासकी विधि बताइये।

**कश्यपजी बोले**—राजन्! बुद्धिमान् पुरुषको चाहिये कि वह बिना पूछे अथवा अन्यायपूर्वक पूछनेपर किसीको उपदेश न दे। लोकमें जानते हुए भी जडवत्—अनजानकी भाँति आचरण करे।* परन्तु विद्वानों, शिष्यों, पुत्रों तथा श्रद्धालु पुरुषोंको उनके हितकी बात कृपापूर्वक बिना पूछे भी बतानी चाहिये।† राजन्! इस समय तुम्हारा

---

यः स्नातः पापहरया साधुसंगमगङ्गया । किं तस्य दानैः किं तीर्थैः किं तपोभिः किमध्वरैः॥
(१६। ३—५)

* नापृष्टः कस्यचिद् ब्रूयान्न चान्यायेन पृच्छतः। जानन्नपि हि मेधावी जडवल्लोक आचरेत्॥
(१६। १७)

† विदुषामथ शिष्याणां पुत्राणां च कृपावता । अपृष्टमपि वक्तव्यं श्रेयः श्रद्धावतां हितम्॥
(१६। १८)

मन धर्ममें स्थित हुआ है, अतः तुम्हें वैशाख-स्नानके उत्तम व्रतका पालन कराऊँगा।

तदनन्तर पुरोहित कश्यपने राजा महीरथसे वैशाखमासमें स्नान, दान और पूजन कराया। शास्त्रमें वैशाख-स्नानकी जैसी विधि उन्होंने देखी थी, उसका पूरा-पूरा पालन कराया। राजा महीरथने भी गुरुकी प्रेरणासे उस समय विधिपूर्वक सब नियमोंका पालन किया तथा माधवमासका जो-जो विधान उन्होंने बताया, वह सब आदरपूर्वक सुना। उन नृपश्रेष्ठने प्रातःकाल स्नान करके भक्तिभावके साथ पाद्य और अर्घ्य आदि देकर श्रीहरिका पूजन किया तथा नैवेद्य भोग लगाया।

**यमराज कहते हैं**—ब्रह्मन्! तत्पश्चात् राजाके ऊपर कालकी दृष्टि पड़ी। अधिक मात्रामें रतिका सेवन करनेसे उन्हें क्षयका रोग हो गया था, जिससे उनका शरीर अत्यन्त दुर्बल हो गया; अन्ततोगत्वा उनकी मृत्यु हो गयी। उस समय मेरे तथा भगवान् विष्णुके दूत भी उन्हें लेने पहुँचे। विष्णुदूतोंने 'ये राजा धर्मात्मा हैं' यों कहकर मेरे सेवकोंको डाँटा और स्वयं राजाको विमानपर बिठाकर वे वैकुण्ठलोकमें ले गये। वैशाखमासमें प्रातःकाल स्नान करनेसे राजाका पातक नष्ट हो चुका था। भगवान् विष्णुके दूत अत्यन्त चतुर होते हैं; वे भगवान्की आज्ञाके अनुसार राजा महीरथको नरकमार्गके निकटसे ले चले। जाते-जाते राजाने नरकमें पकाये जानेके कारण घोर चीत्कार करनेवाले नारकीय जीवोंका आर्तनाद सुना। कड़ाहमें डालकर औंटाये जानेवाले पापियोंका क्रन्दन बड़ा भयंकर था। सुनकर राजाको बड़ा विस्मय हुआ। वे अत्यन्त दुःखी होकर दूतोंसे बोले—'जीवोंके कराहनेकी यह भयंकर आवाज क्यों सुनायी दे रही है? इसमें क्या कारण है? आप लोग सब बातें बतानेकी कृपा करें।'

**विष्णुदूत बोले**—जिन प्राणियोंने धर्मकी मर्यादाका परित्याग

किया है, जो पापाचारी एवं पुण्यहीन हैं, वे तामिस्र आदि भयंकर नरकोंमें डाले गये हैं। पापी मनुष्य प्राण-त्यागके पश्चात् यमलोकके मार्गमें आकर भयानक दुःख भोगते हैं। यमराजके भयंकर दूत उन्हें इधर-उधर घसीटते हैं और वे अन्धकारमें गिर पड़ते हैं। उन्हें आगमें जलाया जाता है। उनके शरीरमें काँटे चुभाये जाते हैं। उनको आरीसे चीरा जाता है तथा वे भूख-प्याससे पीड़ित रहते हैं। पीब और रक्तकी दुर्गन्धके कारण उन्हें बार-बार मूर्च्छा आ जाती है। कहीं वे खौलते हुए तेलमें औंटाये जाते हैं; कहीं उनपर मूसलोंकी मार पड़ती है और कहीं तपाये हुए लोहेकी शिलाओंपर डालकर उन्हें पकाया जाता है। कहीं वमन, कहीं पीब और कहीं रक्त उन्हें खानेको मिलता है। मुर्दोंकी दुर्गन्धसे भरे हुए करोड़ों नरक हैं, जहाँ 'शरपत्र' वन है, 'शिलापात'के स्थान हैं (जहाँ पापी शिलाओंपर पटके जाते हैं) तथा वहाँकी समतल भूमि भी आगसे तपी होती है। इसके सिवा गरम लोहेके, खौलते हुए तेलके, मेदाके, तपे हुए स्तम्भके तथा कूट-शाल्मलि नामके भी नरक हैं। छूरे, काँटे, कील और उग्र ज्वालाके कारण क्षोभ एवं भय उत्पन्न करनेवाले बहुत-से नरक हैं। कहीं तपी हुई वैतरणी नदी है। कहीं पीबसे भरे हुए अनेकों कुण्ड हैं। इन सबमें पृथक्-पृथक् पापियोंको डाला जाता है। कुछ नरक ऐसे हैं, जो जंगलके रूपमें हैं; वहाँके पत्ते तलवारकी धारके समान तीखे हैं। इसीसे उन्हें 'असिपत्रवन' कहते हैं; वहाँ प्रवेश करते ही नर-नारियोंके शरीर कटने और छिलने लगते हैं। कितने ही नरक घोर अन्धकार तथा आगकी लपटोंके कारण अत्यन्त दारुण प्रतीत होते हैं। इनमें बार-बार यातना भोगनेके कारण पापी जीव नाना प्रकारके स्वरोंमें रोते और विलाप करते हैं। राजन्! इस प्रकार ये शास्त्रविरुद्ध कर्म करनेवाले पापी जीव कराहते हुए नरकयातनाका कष्ट भोग रहे हैं। उन्हींका यह क्रन्दन हो रहा है। सभी

प्राणियोंको अपने पूर्वकृत कर्मोंका भोग भोगना पड़ता है। परायी स्त्रियोंका सङ्ग प्रसन्नताके लिये किया जाता है, किन्तु वास्तवमें वह दुःख ही देनेवाला होता है। दो घड़ीतक किया हुआ विषय-सुखका आस्वादन अनेक कल्पोंतक दुःख देनेवाला होता है। राजेन्द्र! तुमने वैशाखमासमें प्रातःस्नान किया है, उसकी विधिका पालन करनेसे तुम्हारा शरीर पावन बन गया है। उससे छूकर बहनेवाली वायुका स्पर्श पाकर ये क्षणभरके लिये सुखी हो गये हैं। तुम्हारे तेजसे इन्हें बड़ी तृप्ति मिल रही है। इसीसे अब ये नरकवर्ती जीव कराहना छोड़कर चुप हो गये हैं। पुण्यवानोंका नाम भी यदि सुना या उच्चारण किया जाय तो वह सुखका साधक होता है तथा उसे छूकर चलनेवाली वायु भी शरीरमें लगनेपर बड़ा सुख देती है।*

**यमराज कहते हैं**—करुणाके सागर राजा महीरथ अद्भुत कर्म करनेवाले भगवान् श्रीविष्णुके दूतोंकी उपर्युक्त बात सुनकर द्रवित हो उठे। निश्चय ही साधु पुरुषोंका हृदय मक्खनके समान होता है। जैसे नवनीत आगकी आँच पाकर पिघल जाता है, उसी प्रकार साधु पुरुषोंका हृदय भी दूसरोंके संतापसे संतप्त होकर द्रवित हो उठता है। उस समय राजाने दूतोंसे कहा।

**राजा बोले**—इन्हें देखकर मुझे बड़ी व्यथा हो रही है। मैं इन व्यथित प्राणियोंको छोड़कर जाना नहीं चाहता। मेरी समझमें सबसे बड़ा पापी वही है, जो समर्थ होते हुए भी वेदनाग्रस्त जीवोंका शोक दूर न कर सके। यदि मेरे शरीरको छूकर बहनेवाली वायुके स्पर्शसे ये जीव सुखी हुए हैं तो आप लोग मुझे उसी स्थानपर ले चलिये; क्योंकि जो चन्दनवृक्षकी भाँति दूसरोंके ताप दूर करके

* नामापि पुण्यशीलानां श्रुतं सौख्याय कीर्तितम्। जायते तद्वपुःस्पर्शवायुः स्पर्शसुखावहः॥ (१७। २७)

उन्हें आह्लादित करते हैं तथा जो परोपकारके लिये स्वयं कष्ट उठाते हैं, वे ही पुण्यात्मा हैं। संसारमें वे ही संत हैं, जो दूसरोंके दुःखोंका नाश करते हैं तथा पीड़ित जीवोंकी पीड़ा दूर करनेके लिये जिन्होंने अपने प्राणोंको तिनकेके समान निछावर कर दिया है। जो मनुष्य सदा दूसरोंकी भलाईके लिये उद्यत रहते हैं, उन्होंने ही इस पृथ्वीको धारण कर रखा है। जहाँ सदा अपने मनको ही सुख मिलता है, वह स्वर्ग भी नरकके ही समान है; अतः साधु पुरुष सदा दूसरोंके सुखसे ही सुखी होते हैं। यहाँ नरकमें गिरना अच्छा, प्राणोंसे वियोग हो जाना भी अच्छा; किन्तु पीड़ित जीवोंकी पीड़ा दूर किये बिना एक क्षण भी सुख भोगना अच्छा नहीं है।*

**दूत बोले**—राजन्! पापी पुरुष अपने कर्मोंका ही फल भोगते हुए भयंकर नरकमें पकाये जाते हैं। जिन्होंने दान, होम अथवा पुण्यतीर्थमें स्नान नहीं किया है; मनुष्योंका उपकार तथा कोई उत्तम पुण्य नहीं किया है; यज्ञ, तपस्या और प्रसन्नतापूर्वक भगवन्नामोंका जप नहीं किया है, वे ही परलोकमें आनेपर घोर नरकोंमें पकाये जाते हैं। जिनका शील-स्वभाव दूषित है, जो दुराचारी, व्यवहारमें निन्दित, दूसरोंकी बुराई करनेवाले एवं पापी हैं, वे ही नरकोंमें पड़ते हैं। जो पापी अपने मर्मभेदी वचनोंसे दूसरोंका हृदय विदीर्ण कर डालते हैं तथा जो परायी स्त्रियोंके साथ विहार करते हैं, वे नरकोंमें पकाये जाते हैं। महाभाग भूपाल! आओ, अब भगवान्‌के धामको

* परतापच्छिदो ये तु चन्दना इव चन्दनाः। परोपकृतये ये तु पीड्यन्ते कृतिनो हि ते॥
सन्त्रस्त एव ये लोके परदुःखविदारणाः। आर्तानामार्तिनाशार्थं प्राणा येषां तृणोपमाः॥
तैरियं धार्यते भूमिर्नरैः परहितोद्यतैः। मनसो यत्सुखं नित्यं स स्वर्गो नरकोपमः॥
तस्मात्परसुखेनैव साधवः सुखिनः सदा। वरं निरयपातोऽत्र वरं प्राणवियोजनम्॥
न पुनः क्षणमार्तानामार्तिनाशमृते सुखम्॥
(९७। ३२—३५)

चलें। तुम पुण्यवान् हो, अतः अब तुम्हारा यहाँ ठहरना उचित नहीं है।

**राजाने कहा**—विष्णुदूतगण! यदि मैं पुण्यात्मा हूँ तो इस महाभयंकर यातनामार्गमें कैसे लाया गया? मैंने कौन-सा पाप किया है तथा किस पुण्यके प्रभावसे मैं विष्णुधामको जाऊँगा? आप लोग मेरे इस संशयका निवारण करें।

**दूत बोले**—राजन्! तुम्हारा मन कामके अधीन हो रहा था; इसलिये तुमने कोई पुण्य, यज्ञानुष्ठान अथवा यज्ञावशिष्ट अन्नका भोजन नहीं किया है। इसीलिये तुम्हें इस मार्गसे लाया गया है। किन्तु लगातार तीन वर्षोंतक तुमने अपने गुरुकी प्रेरणासे वैशाखमासमें विधिपूर्वक प्रातःस्नान किया है तथा महापापों और अतिपापोंकी राशिका विनाश करनेवाले भक्तवत्सल, विश्वेश्वर भगवान् मधुसूदनकी भक्तिपूर्वक पूजा की है। यह सब पुण्योंका सार है। केवल इस एक ही पुण्यसे तुम देवताओंद्वारा पूजित होकर श्रीविष्णुधामको ले जाये जा रहे हो। नरेश्वर! जैसे एक ही चिनगारी पड़ जानेसे तिनकोंकी राशि भस्म हो जाती है, उसी प्रकार वैशाखमें प्रातःस्नान करनेसे पापराशिका विनाश हो जाता है। जो वैशाखमें शास्त्रोक्त नियमोंसे युक्त होकर स्नान करता है, वह हरिभक्त पुरुष अतिपापोंके समूहसे छुटकारा पाकर विष्णुपदको प्राप्त होता है।*

**यमराज कहते हैं**—ब्रह्मन्! तब दयासागर राजाने उन जीवोंके शोकसे पीड़ित हो भगवान् श्रीविष्णुके दूतोंसे विनयपूर्वक कहा—

---

* भक्त्या सम्पूजितो विष्णुर्विश्वेशो मधुसूदनः। महापापातिपापौघनिहन्ता मधुसूदनः॥
सर्वैकसारेण पुनस्तेनैकेन नरेश्वर। नीयसे विष्णुभवनं पूज्यमानो मरुद्गणैः॥
यथैव विस्फुलिङ्गेन ज्वाल्यते तृणसञ्चयः। प्रातःस्नानेन वैशाखे तथाघौघो नरेश्वर॥
वैशाखे मासि यो युक्तो यथोक्तनियमैर्नरः। हरिभक्तोऽतिपापौघैर्मुक्तोऽच्युतपदं व्रजेत्॥
(१७।४६, ४७, ४८, ५०)

'साधु पुरुष प्राप्त हुए ऐश्वर्यका, गुणोंका तथा पुण्यका यही फल मानते हैं कि इनके द्वारा कष्टमें पड़े हुए जीवोंकी रक्षा की जाय। यदि मेरा कुछ पुण्य है तो उसीके प्रभावसे ये नरकमें पड़े हुए जीव निष्पाप होकर स्वर्गको चले जायँ और मैं इनकी जगह नरकमें निवास करूँगा।' राजाके ऐसे वचन सुनकर श्रीविष्णुके मनोहर दूत उनके सत्य और उदारतापर विचार करते हुए इस प्रकार बोले—'राजन्! इस दयारूप धर्मके अनुष्ठानसे तुम्हारे संचित धर्मकी विशेष वृद्धि हुई है। तुमने वैशाखमासमें जो स्नान, दान, जप, होम, तप तथा देवपूजन आदि कर्म किये हैं, वे अक्षय फल देनेवाले हो गये। जो वैशाखमासमें स्नान-दान करके भगवान्‌का पूजन करता है, वह सब कामनाओंको प्राप्त होकर श्रीविष्णुधामको जाता है। एक ओर तप, दान और यज्ञ आदिकी शुभ क्रियाएँ और एक ओर विधिपूर्वक आचरणमें लाया हुआ वैशाखमासका व्रत हो तो यह वैशाखमास ही महान् है। राजन्! वैशाखमासके एक दिनका भी जो पुण्य है, वह तुम्हारे लिये सब दानोंसे बढ़कर है। दयाके समान धर्म, दयाके समान तप, दयाके समान दान और दयाके समान कोई मित्र नहीं है।* पुण्यका दान करनेवाला मनुष्य सदा लाखगुना पुण्य प्राप्त करता है। विशेषतः तुम्हारी दयाके कारण धर्मकी अधिक वृद्धि हुई है। जो मनुष्य दुःखित प्राणियोंका दुःखसे उद्धार करता है, वही संसारमें पुण्यात्मा है। उसे भगवान् नारायणके अंशसे उत्पन्न समझना चाहिये। वीर! वैशाखमासकी पूर्णिमाको तीर्थमें जाकर जो तुमने सब पापोंका नाश करनेवाला स्नान-दान आदि पुण्य किया है, उसे विधिवत् भगवान् श्रीहरिको साक्षी बनाकर तीन बार प्रतिज्ञा करके इन पापियोंके लिये

* न दयासदृशो धर्मो न दयासदृशं तपः। न दयासदृशं दानं न दयासदृशः सखा॥ (१८।१५)

दान कर दो, जिससे ये नरकसे निकलकर स्वर्गको चले जायँ। हमारा तो ऐसा विश्वास है कि पीड़ित जन्तुओंको शान्ति प्रदान करनेसे जो आनन्द मिलता है, उसे मनुष्य स्वर्ग और मोक्षमें भी नहीं पा सकता। सौम्य! तुम्हारी बुद्धि दया एवं दानमें दृढ़ है, इसे देखकर हम लोगोंको भी उत्साह होता है। राजन्! यदि तुम्हें अच्छा जान पड़े तो अब बिना विलम्ब किये इन्हें वह पुण्य प्रदान करो, जो नरकयातनाके दुःखको दग्ध करनेवाला है।'

विष्णुदूतोंके यों कहनेपर दयालु राजा महीरथने भगवान् गदाधरको साक्षी बनाकर तीन बार प्रतिज्ञापूर्वक संकल्प करके उन पापियोंके लिये अपना पुण्य अर्पण किया। वैशाखमासके एक दिनके ही पुण्यका दान करनेपर वे सभी जीव यम-यातनाके दुःखसे मुक्त हो गये। फिर अत्यन्त हर्षमें भरकर वे श्रेष्ठ विमानपर आरूढ़ हुए और राजाकी प्रशंसा करते हुए उन्हें प्रणाम करके स्वर्गको चले गये। इस दानसे राजाको विशेष पुण्यकी प्राप्ति हुई। मुनियों और देवताओंका समुदाय उनकी स्तुति करने लगा तथा वे जगदीश्वर श्रीविष्णुके पार्षदोंद्वारा अभिवन्दित होकर उस परमपदको प्राप्त हुए, जो बड़े-बड़े योगियोंके लिये भी दुर्लभ है।

द्विजश्रेष्ठ! यह वैशाखमास और पूर्णिमाका कुछ माहात्म्य यहाँ थोड़ेमें बतलाया गया। यह धन, यश, आयु तथा परम कल्याण प्रदान करनेवाला है। इतना ही नहीं, इससे स्वर्ग तथा लक्ष्मीकी भी प्राप्ति होती है। यह प्रशंसनीय माहात्म्य अन्तःकरणको शुद्ध करनेवाला और पापोंको धो डालनेवाला है। माधवमासका यह माहात्म्य भगवान् माधवको अत्यन्त प्रिय है। राजा महीरथका चरित्र और हम दोनोंका मनोरम संवाद सुनने, पढ़ने तथा विधिपूर्वक अनुमोदन करनेसे मनुष्यको भगवान्की भक्ति प्राप्त होती है, जिससे समस्त क्लेशोंका नाश हो जाता है।

**सूतजी कहते हैं**—धर्मराजकी यह बात सुनकर वह ब्राह्मण उन्हें

प्रणाम करके चला गया। उसने भूतलपर प्रतिवर्ष स्वयं तो वैशाख-स्नानकी विधिका पालन किया ही, दूसरोंसे भी कराया। यह ब्राह्मण और यमका संवाद मैंने आप लोगोंसे वैशाखमासके पुण्यमय स्नानके प्रसङ्गमें सुनाया है। जो एकचित्त होकर वैशाखमासके माहात्म्यका श्रवण करता है, वह सब पापोंसे मुक्त होकर श्रीविष्णुके परमपदको प्राप्त होता है।

**पद्मपुराणान्तर्गत वैशाख-माहात्म्य सम्पूर्ण**

# वैशाखमास-माहात्म्य

## वैशाखमासकी श्रेष्ठता; उसमें जल, व्यजन, छत्र, पादुका और अन्न आदि दानोंकी महिमा

**नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम् ।**
**देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत्॥**

'भगवान् नारायण, नरश्रेष्ठ नर, देवी सरस्वती तथा महर्षि वेदव्यासको नमस्कार करके भगवान्‌की विजय-कथासे परिपूर्ण इतिहास-पुराण आदिका पाठ करना चाहिये।'

**सूतजी कहते हैं**—राजा अम्बरीषने परमेष्ठी ब्रह्माके पुत्र देवर्षि नारदसे पुण्यमय वैशाखमासका माहात्म्य इस प्रकार पूछा—'ब्रह्मन्! मैंने आपसे सभी महीनोंका माहात्म्य सुना। उस समय आपने यह कहा था कि सब महीनोंमें वैशाखमास श्रेष्ठ है। इसलिये यह बतानेकी कृपा करें कि वैशाखमास क्यों भगवान् विष्णुको प्रिय है और उस समय कौन-कौन-से धर्म भगवान् विष्णुके लिये प्रीतिकारक हैं?'

**नारदजीने कहा**—वैशाखमासको ब्रह्माजीने सब मासोंमें उत्तम

सिद्ध किया है। वह माताकी भाँति सब जीवोंको सदा अभीष्ट वस्तु प्रदान करनेवाला है। धर्म, यज्ञ, क्रिया और तपस्याका सार है। सम्पूर्ण देवताओंद्वारा पूजित है। जैसे विद्याओंमें वेद-विद्या, मन्त्रोंमें प्रणव, वृक्षोंमें कल्पवृक्ष, धेनुओंमें कामधेनु, देवताओंमें विष्णु, वर्णोंमें ब्राह्मण, प्रिय वस्तुओंमें प्राण, नदियोंमें गङ्गाजी, तेजोंमें सूर्य, अस्त्र-शस्त्रोंमें चक्र, धातुओंमें सुवर्ण, वैष्णवोंमें शिव तथा रत्नोंमें कौस्तुभमणि है, उसी प्रकार धर्मके साधनभूत महीनोंमें वैशाखमास सबसे उत्तम है। संसारमें इसके समान भगवान् विष्णुको प्रसन्न करनेवाला दूसरा कोई मास नहीं है। जो वैशाखमासमें सूर्योदयसे पहले स्नान करता है, उससे भगवान् विष्णु निरन्तर प्रीति करते हैं। पाप तभीतक गर्जते हैं, जबतक जीव वैशाखमासमें प्रातःकाल जलमें स्नान नहीं करता। राजन्! वैशाखके महीनेमें सब तीर्थ आदि देवता (तीर्थके अतिरिक्त) बाहरके जलमें भी सदैव स्थित रहते हैं। भगवान् विष्णुकी आज्ञासे मनुष्योंका कल्याण करनेके लिये वे सूर्योदयसे लेकर छः दण्डके भीतरतक वहाँ मौजूद रहते हैं।

वैशाखके समान कोई मास नहीं है, सत्ययुगके समान कोई युग नहीं है, वेदके समान कोई शास्त्र नहीं है और गङ्गाजीके समान कोई तीर्थ नहीं है।* जलके समान दान नहीं है, खेतीके समान धन नहीं है और जीवनसे बढ़कर कोई लाभ नहीं है। उपवासके समान कोई तप नहीं, दानसे बढ़कर कोई सुख नहीं, दयाके समान धर्म नहीं, धर्मके समान मित्र नहीं, सत्यके समान यश नहीं, आरोग्यके समान उन्नति नहीं, भगवान् विष्णुसे बढ़कर कोई रक्षक नहीं और वैशाखमासके समान संसारमें कोई पवित्र मास नहीं है। ऐसा विद्वान्

* न माधवसमो मासो न कृतेन युगं समम्।
न च वेदसमं शास्त्रं न तीर्थं गङ्गया समम्॥ (स्क० पु० वै० वै० मा० २।१)

पुरुषोंका मत है। वैशाख श्रेष्ठ मास है और शेषशायी भगवान् विष्णुको सदा प्रिय है। सब दानोंसे जो पुण्य होता है और सब तीर्थोंमें जो फल होता है, उसीको मनुष्य वैशाखमासमें केवल जलदान करके प्राप्त कर लेता है। जो जलदानमें असमर्थ है, ऐसे ऐश्वर्यकी अभिलाषा रखनेवाले पुरुषको उचित है कि वह दूसरेको प्रबोध करे, दूसरेको जलदानका महत्त्व समझावे। यह सब दानोंसे बढ़कर हितकारी है। जो मनुष्य वैशाखमें सड़कपर यात्रियोंके लिये प्याऊ लगाता है, वह विष्णुलोकमें प्रतिष्ठित होता है। नृपश्रेष्ठ! प्रपादान (पौंसला या प्याऊ) देवताओं, पितरों तथा ऋषियोंको अत्यन्त प्रीति देनेवाला है। जिसने प्याऊ लगाकर रास्तेके थके-माँदे मनुष्योंको सन्तुष्ट किया है, उसने ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि देवताओंको सन्तुष्ट कर लिया है। राजन्! वैशाखमासमें जलकी इच्छा रखनेवालेको जल, छाया चाहनेवालेको छाता और पंखेकी इच्छा रखनेवालेको पंखा देना चाहिये। राजेन्द्र! जो प्याससे पीड़ित महात्मा पुरुषके लिये शीतल जल प्रदान करता है, वह उतने ही मात्रसे दस हजार राजसूय यज्ञोंका फल पाता है। धूप और परिश्रमसे पीड़ित ब्राह्मणको जो पंखा डुलाकर हवा करता है, वह उतने ही मात्रसे निष्पाप होकर भगवान्‌का पार्षद हो जाता है। जो मार्गसे थके हुए श्रेष्ठ द्विजको वस्त्रसे भी हवा करता है, वह उतनेसे ही मुक्त हो भगवान् विष्णुका सायुज्य प्राप्त कर लेता है। जो शुद्ध चित्तसे ताड़का पंखा देता है, वह सब पापोंका नाश करके ब्रह्मलोकको जाता है। जो विष्णुप्रिय वैशाखमासमें पादुका दान करता है, वह यमदूतोंका तिरस्कार करके विष्णुलोकमें जाता है। जो मार्गमें अनाथोंके ठहरनेके लिये विश्रामशाला बनवाता है, उसके पुण्य-फलका वर्णन किया नहीं जा सकता। मध्याह्नमें आये हुए ब्राह्मण अतिथिको यदि कोई भोजन दे, तो उसके फलका अन्त नहीं है। राजन्! अन्नदान मनुष्योंको तत्काल तृप्त करनेवाला है, इसलिये

संसारमें अन्नके समान कोई दान नहीं है। जो मनुष्य मार्गके थके हुए ब्राह्मणके लिये आश्रय देता है, उसके पुण्यफलका वर्णन किया नहीं जा सकता। भूपाल! जो अन्नदाता है, वह माता-पिता आदिका भी विस्मरण करा देता है। इसलिये तीनों लोकोंके निवासी अन्नदानकी ही प्रशंसा करते हैं। माता और पिता केवल जन्मके हेतु हैं, पर जो अन्न देकर पालन करता है, मनीषी पुरुष इस लोकमें उसीको पिता कहते हैं।
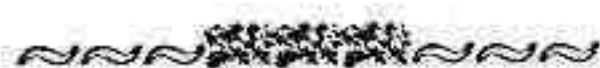
## वैशाखमासमें विविध वस्तुओंके दानका महत्त्व तथा वैशाखस्नानके नियम

**नारदजी कहते हैं**—वैशाखमासमें धूपसे तपे और थके-माँदे ब्राह्मणोंको श्रमनाशक सुखद पलंग देकर मनुष्य कभी जन्म-मृत्यु आदिके क्लेशोंसे कष्ट नहीं पाता। जो वैशाखमासमें पहननेके लिये कपड़े और बिछावन देता है, वह उसी जन्ममें सब भोगोंसे सम्पन्न हो जाता है और समस्त पापोंसे रहित हो ब्रह्मनिर्वाण (मोक्ष)-को प्राप्त होता है। जो तिनकेकी बनी हुई या अन्य खजूर आदिके पत्तोंकी बनी हुई चटाई दान करता है, उसकी उस चटाईपर साक्षात् भगवान् विष्णु शयन करते हैं। चटाई देनेवाला बैठने और बिछाने आदिमें सब ओरसे सुखी रहता है। जो सोनेके लिये चटाई और कम्बल देता है, वह उतने ही मात्रसे मुक्त हो जाता है। निद्रासे दुःखका नाश होता है, निद्रासे थकावट दूर होती है और वह निद्रा चटाईपर सोनेवालेको सुखपूर्वक आ जाती है। धूपसे कष्ट पाये हुए श्रेष्ठ ब्राह्मणको जो सूक्ष्मतर वस्त्र दान करता है, वह पूर्ण आयु और परलोकमें उत्तम गतिको पाता है। जो पुरुष ब्राह्मणको फूल और रोली देता है, वह लौकिक भोगोंका भोग करके मोक्षको प्राप्त होता है। जो

खस, कुश और जलसे वासित चन्दन देता है, वह सब भोगोंमें देवताओंकी सहायता पाता है तथा उसके पाप और दुःखकी हानि होकर परमानन्दकी प्राप्ति होती है। वैशाखके धर्मको जाननेवाला जो पुरुष गोरोचन और कस्तूरीका दान करता है, वह तीनों तापोंसे मुक्त होकर परम शान्तिको प्राप्त होता है। जो विश्रामशाला बनवाकर प्याऊसहित ब्राह्मणको दान करता है, वह लोकोंका अधिपति होता है। जो सड़कके किनारे बगीचा, पोखरा, कुआँ और मण्डप बनवाता है, वह धर्मात्मा है, उसे पुत्रोंकी क्या आवश्यकता है। उत्तम शास्त्रका श्रवण, तीर्थयात्रा, सत्सङ्ग, जलदान, अन्नदान, पीपलका वृक्ष लगाना तथा पुत्र—इन सातको विज्ञ पुरुष सन्तान मानते हैं। जो वैशाखमासमें तापनाशक तक्र दान करता है, वह इस पृथ्वीपर विद्वान् और धनवान् होता है। धूपके समय मट्ठेके समान कोई दान नहीं, इसलिये रास्तेके थके-माँदे ब्राह्मणको मट्ठा देना चाहिये। जो वैशाखमासमें धूपकी शान्तिके लिये दही और खाँड़ दान करता है तथा विष्णुप्रिय वैशाखमासमें जो स्वच्छ चावल देता है, वह पूर्ण आयु और सम्पूर्ण यज्ञोंका फल पाता है। जो पुरुष ब्राह्मणके लिये गोघृत अर्पण करता है, वह अश्वमेध यज्ञका फल पाकर विष्णुलोकमें आनन्दका अनुभव करता है। जो दिनके तापकी शान्तिके लिये सायंकालमें ब्राह्मणको ऊख दान करता है, उसको अक्षय पुण्य प्राप्त होता है। जो वैशाखमासमें शामको ब्राह्मणके लिये फल और शर्बत देता है, उससे उसके पितरोंको निश्चय ही अमृतपानका अवसर मिलता है। जो वैशाखके महीनेमें पके हुए आमके फलके साथ शर्बत देता है, उसके सारे पाप निश्चय ही नष्ट हो जाते हैं। जो वैशाखकी अमावास्याको पितरोंके उद्देश्यसे कस्तूरी, कपूर, बेला और खसकी सुगन्धसे वासित शर्बतसे भरा हुआ घड़ा दान करता है, वह छियानबे घड़ा दान करनेका पुण्य पाता है।

वैशाखमें तेल लगाना, दिनमें सोना, कांस्यके पात्रमें भोजन करना, खाटपर सोना, घरमें नहाना, निषिद्ध पदार्थ खाना, दुबारा भोजन करना तथा रातमें खाना—ये आठ बातें त्याग देनी चाहिये*। जो वैशाखमें व्रतका पालन करनेवाला पुरुष पद्म-पत्तेमें भोजन करता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो विष्णुलोकमें जाता है। जो विष्णुभक्त पुरुष वैशाखमासमें नदी-स्नान करता है, वह तीन जन्मोंके पापसे निश्चय ही मुक्त हो जाता है। जो प्रातःकाल सूर्योदयके समय किसी समुद्रगामिनी नदीमें वैशाख-स्नान करता है, वह सात जन्मोंके पापसे तत्काल छूट जाता है। जो मनुष्य सात गङ्गाओंमेंसे किसीमें भी उषःकालमें स्नान करता है, वह करोड़ों जन्मोंमें उपार्जित किये हुए पापसे निस्सन्देह मुक्त हो जाता है। जाह्नवी (गङ्गा), वृद्ध गङ्गा (गोदावरी), कालिन्दी (यमुना), सरस्वती, कावेरी, नर्मदा और वेणी—ये सात गङ्गाएँ कही गयी हैं। † वैशाखमास आनेपर जो प्रातःकाल बावलियोंमें स्नान करता है, उसके महापातकोंका नाश हो जाता है। कन्द, मूल, फल, शाक, नमक, गुड़, बेर, पत्र, जल और तक्र—जो भी वैशाखमें दिया जाय, वह सब अक्षय होता है। ब्रह्मा आदि देवता भी बिना दिये हुए कोई वस्तु नहीं पाते। जो दानसे हीन है, वह निर्धन होता है। अतः सुखकी इच्छा रखनेवाले पुरुषको वैशाख मासमें अवश्य दान करना चाहिये। सूर्यदेवके मेषराशिमें स्थित होनेपर भगवान् विष्णुके उद्देश्यसे अवश्य प्रातःकाल स्नान करके भगवान् विष्णुकी पूजा करनी चाहिये। कोई महीरथ नामक एक राजा था, जो कामनाओंमें आसक्त और अजितेन्द्रिय था।

---

* तैलाभ्यङ्गं दिवास्वापं तथा वै कांस्यभोजनम्। खट्वानिद्रां गृहे स्नानं निषिद्धस्य च भक्षणम्॥
वैशाखे वर्जयेदष्टौ द्विभुक्तं नक्तभोजनम्। (स्क० पु० वै० वै० मा० ४। १-२)

† जाह्नवी वृद्धगङ्गा च कालिन्दी च सरस्वती। कावेरी नर्मदा वेणी सप्तगङ्गा प्रकीर्तिता॥
(स्क० पु० वै० वै० मा० ४। १५)

वह केवल वैशाख-स्नानके सुयोगसे स्वतः वैकुण्ठधामको चला गया। वैशाखमासके देवता भगवान् मधुसूदन हैं। अतएव वह सफल मास है। वैशाखमासमें भगवान्‌की प्रार्थनाका मन्त्र इस प्रकार है—

**मधुसूदन देवेश वैशाखे मेषगे रवौ।**
**प्रातःस्नानं करिष्यामि निर्विघ्नं कुरु माधव॥**

'हे मधुसूदन! हे देवेश्वर माधव! मैं मेषराशिमें सूर्यके स्थित होनेपर वैशाखमासमें प्रातःस्नान करूँगा, आप इसे निर्विघ्न पूर्ण कीजिये।'

तत्पश्चात् निम्नाङ्कित मन्त्रसे अर्घ्य प्रदान करे—

**वैशाखे मेषगे भानौ प्रातःस्नानपरायणः।**
**अर्घ्यं तेऽहं प्रदास्यामि गृहाण मधुसूदन॥**

'सूर्यके मेषराशिपर स्थित रहते हुए वैशाखमासमें प्रातःस्नानके नियममें संलग्न होकर मैं आपको अर्घ्य देता हूँ। मधुसूदन! इसे ग्रहण कीजिये।'

इस प्रकार अर्घ्य समर्पण करके स्नान करे। फिर वस्त्रोंको पहनकर सन्ध्या-तर्पण आदि सब कर्मोंको पूरा करके वैशाखमासमें विकसित होनेवाले पुष्पोंसे भगवान् विष्णुकी पूजा करे। उसके बाद वैशाखमासके माहात्म्यको सूचित करनेवाली भगवान् विष्णुकी कथा सुने। ऐसा करनेसे कोटि जन्मोंके पापोंसे मुक्त होकर मनुष्य मोक्षको प्राप्त होता है। यह शरीर अपने अधीन है, जल भी अपने अधीन ही है, साथ ही अपनी जिह्वा भी अपने वशमें है। अतः इस स्वाधीन शरीरसे स्वाधीन जलमें स्नान करके स्वाधीन जिह्वासे 'हरि' इन दो अक्षरोंका उच्चारण करे। जो वैशाखमासमें तुलसीदलसे भगवान् विष्णुकी पूजा करता है, वह विष्णुकी सायुज्य मुक्तिको पाता है। अतः अनेक प्रकारके भक्तिमार्गसे तथा भाँति-भाँतिके व्रतोंद्वारा भगवान् विष्णुकी सेवा तथा उनके सगुण या निर्गुण स्वरूपका अनन्य चित्तसे ध्यान करना चाहिये।

## वैशाखमासमें छत्रदानसे हेमकान्तका उद्धार

**नारदजी कहते हैं**—एक समय विदेहराज जनकके घर दोपहरके समय श्रुतदेव नामसे विख्यात एक श्रेष्ठ मुनि पधारे, जो वेदोंके ज्ञाता थे। उन्हें देखकर राजा बड़े उल्लासके साथ उठकर खड़े हो गये और मधुपर्क आदि सामग्रियोंसे उनकी विधिपूर्वक पूजा करके राजाने उनके चरणोदकको अपने मस्तकपर धारण किया। इस प्रकार स्वागत-सत्कारके पश्चात् जब वे आसनपर विराजमान हुए, तब विदेहराजके प्रश्नके अनुसार वैशाखमासके माहात्म्यका वर्णन करते हुए वे इस प्रकार बोले।

**श्रुतदेवने कहा**—राजन्! जो लोग वैशाखमासमें धूपसे सन्तप्त होनेवाले महात्मा पुरुषोंके ऊपर छाता लगाते हैं, उन्हें अनन्त पुण्यकी प्राप्ति होती है। इस विषयमें एक प्राचीन इतिहासका उदाहरण दिया करते हैं। पहले वङ्गदेशमें हेमकान्त नामसे विख्यात एक राजा हो गये हैं। वे कुशकेतुके पुत्र परम बुद्धिमान् और शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ थे। एक दिन वे शिकार खेलनेमें आसक्त होकर एक गहन वनमें जा घुसे। वहाँ अनेक प्रकारके मृग और वराह आदि जन्तुओंको मारकर जब वे बहुत थक गये, तब दोपहरके समय मुनियोंके आश्रमपर आये। उस समय आश्रमपर उत्तम व्रतका पालन करनेवाले शतर्चि नामवाले ऋषि समाधि लगाये बैठे थे, जिन्हें बाहरके कार्योंका कुछ भी भान नहीं होता था। उन्हें निश्चल बैठे देख राजाको बड़ा क्रोध हुआ और उन्होंने उन महात्माओंको मार डालनेका निश्चय किया। तब उन ऋषियोंके दस हजार शिष्योंने राजाको मना करते हुए कहा—'ओ खोटी बुद्धिवाले नरेश! हमारे गुरुलोग इस समय समाधिमें स्थित हैं, बाहर कहाँ क्या हो रहा है—इसको ये नहीं जानते। इसलिये इनपर तुम्हें क्रोध नहीं करना चाहिये।'

**तब राजाने क्रोधसे विह्वल होकर शिष्योंसे कहा**—द्विजकुमारो! मैं मार्गसे थका-माँदा यहाँ आया हूँ। अतः तुम्हीं लोग मेरा आतिथ्य करो। राजाके ऐसा कहनेपर वे शिष्य बोले—'हम लोग भिक्षा माँगकर खानेवाले हैं। गुरुजनोंने हमें किसीके आतिथ्यके लिये आज्ञा नहीं दी है। हम सर्वथा गुरुके अधीन हैं। अतः तुम्हारा आतिथ्य कैसे कर सकते हैं।' शिष्योंका यह कोरा उत्तर पाकर राजाने उन्हें मारनेके लिये धनुष उठाया और इस प्रकार कहा—'मैंने हिंसक जीवों और लुटेरोंके भय आदिसे जिनकी अनेकों बार रक्षा की है, जो मेरे दिये हुए दानोंपर ही पलते हैं, वे आज मुझे ही सिखलाने चले हैं। ये मुझे नहीं जानते, ये सभी कृतघ्न और बड़े अभिमानी हैं। इन आततायियोंको मार डालनेपर भी मुझे कोई दोष नहीं लगेगा।' ऐसा कहकर वे कुपित हो धनुषसे बाण छोड़ने लगे। बेचारे शिष्य आश्रम छोड़कर भयसे भाग चले। भागनेपर भी हेमकान्तने उनका पीछा किया और तीन सौ शिष्योंको मार गिराया। शिष्योंके भाग जानेपर आश्रमपर जो कुछ सामग्री थी, उसे राजाके पापात्मा सैनिकोंने लूट लिया। राजाके अनुमोदनसे ही उन्होंने वहाँ इच्छानुसार भोजन किया। तत्पश्चात् दिन बीतते-बीतते राजा सेनाके साथ अपनी पुरीमें आ गये। राजा कुशकेतुने जब अपने पुत्रका यह अन्यायपूर्ण कार्य सुना, तब उसे राज्य करनेके अयोग्य जानकर उसकी निन्दा करते हुए उसे देशनिकाला दे दिया। पिताके त्याग देनेपर हेमकान्त घने वनमें चला गया। वहाँ उसने बहुत वर्षोंतक निवास किया। ब्रह्महत्या उसका सदा पीछा करती रहती थी, इसलिये वह कहीं भी स्थिरतापूर्वक रह नहीं पाता था। इस प्रकार उस दुष्टात्माके अट्ठाईस वर्ष व्यतीत हो गये। एक दिन वैशाखमासमें जब दोपहरका समय हो रहा था, महामुनि त्रित तीर्थयात्राके प्रसङ्गसे उस वनमें आये। वे धूपसे अत्यन्त संतप्त और तृषासे बहुत पीड़ित

थे, इसलिये किसी वृक्षहीन प्रदेशमें मूर्छित होकर गिर पड़े। दैवयोगसे हेमकान्त उधर आ निकला; उसने मुनिको प्याससे पीड़ित, मूर्छित और थका-माँदा देख उनपर बड़ी दया की। उसने पलाशके पत्तोंसे छत्र बनाकर उनके ऊपर आती हुई धूपका निवारण किया। वह स्वयं मुनिके मस्तकपर छाता लगाये खड़ा हुआ और तूँबीमें रखा हुआ जल उनके मुँहमें डाला। इस उपचारसे मुनिको चेत हो आया और उन्होंने क्षत्रियके दिये हुए पत्तेके छातेको लेकर अपनी व्याकुलता दूर की। उनकी इन्द्रियोंमें कुछ शक्ति आयी और वे धीरे-धीरे किसी गाँवमें पहुँच गये। उस पुण्यके प्रभावसे हेमकान्तकी तीन सौ ब्रह्महत्याएँ नष्ट हो गयीं। इसी समय यमराजके दूत हेमकान्तको लेनेके लिये वनमें आये। उन्होंने उसके प्राण लेनेके लिये संग्रहणी रोग पैदा किया। उस समय प्राण छूटनेकी पीड़ासे छटपटाते हुए हेमकान्तने तीन अत्यन्त भयङ्कर यमदूतोंको देखा, जिनके बाल ऊपरकी ओर उठे हुए थे। उस समय अपने कर्मोंको याद करके वह चुप हो गया। छत्र-दानके प्रभावसे उसको भगवान् विष्णुका स्मरण हुआ। उसके स्मरण करनेपर भगवान् महाविष्णुने विष्वक्सेनसे कहा—'तुम शीघ्र जाओ, यमदूतोंको रोको, हेमकान्तकी रक्षा करो। अब वह निष्पाप एवं मेरा भक्त हो गया है। उसे नगरमें ले जाकर उसके पिताको सौंप दो। साथ ही मेरे कहनेसे कुशकेतुको यह समझाओ कि तुम्हारे पुत्रने अपराधी होनेपर भी वैशाखमासमें छत्र-दान करके एक मुनिकी रक्षा की है। अतः वह पापरहित हो गया है। इस पुण्यके प्रभावसे वह मन और इन्द्रियोंको अपने वशमें रखनेवाला दीर्घायु, शूरता और उदारता आदि गुणोंसे युक्त तथा तुम्हारे समान गुणवान् हो गया है। इसलिये अपने इस महाबली पुत्रको तुम राज्यका भार सँभालनेके लिये नियुक्त करो। भगवान् विष्णुने तुम्हें ऐसी ही आज्ञा दी है। इस प्रकार राजाको आदेश देकर

हेमकान्तको उनके अधीन करके यहाँ लौट आओ।'

भगवान् विष्णुका यह आदेश पाकर महाबली विष्वक्सेनने हेमकान्तके पास आकर यमदूतोंको रोका और अपने कल्याणमय हाथोंसे उसके सब अङ्गोंमें स्पर्श किया। भगवद्भक्तके स्पर्शसे हेमकान्तकी सारी व्याधि क्षणभरमें दूर हो गयी। तदनन्तर विष्वक्सेन उसके साथ राजाकी पुरीमें गये। उन्हें देखकर महाराज कुशकेतुने आश्चर्ययुक्त हो भक्तिपूर्वक मस्तक झुकाकर पृथ्वीपर साष्टाङ्ग प्रणाम किया और भगवान्के पार्षदका अपने घरमें प्रवेश कराया। वहाँ नाना प्रकारके स्तोत्रोंसे इनकी स्तुति तथा वैभवोंसे उनका पूजन किया। तत्पश्चात् महाबली विष्वक्सेनने अत्यन्त प्रसन्न होकर राजाको हेमकान्तके विषयमें भगवान् विष्णुने जो सन्देश दिया था, वह सब कह सुनाया। उसे सुनकर कुशकेतुने पुत्रको राज्यपर बिठा दिया और स्वयं विष्वक्सेनकी आज्ञा लेकर उन्होंने पत्नीसहित वनको प्रस्थान किया। तदनन्तर महामना विष्वक्सेन हेमकान्तसे पूछकर और उसकी प्रशंसा करके श्वेतद्वीपमें भगवान् विष्णुके समीप चले गये। तबसे राजा हेमकान्त वैशाखमासमें बताये हुए भगवान्की प्रसन्नताको बढ़ानेवाले शुभ धर्मोंका प्रतिवर्ष पालन करने लगे। वे ब्राह्मणभक्त, धर्मनिष्ठ, शान्त, जितेन्द्रिय, सब प्राणियोंके प्रति दयालु और सम्पूर्ण यज्ञोंकी दीक्षामें स्थित रहकर सब प्रकारकी सम्पदाओंसे सम्पन्न हो गये। उन्होंने पुत्र-पौत्र आदिके साथ समस्त भोगोंका उपभोग करके भगवान् विष्णुका लोक प्राप्त किया। वैशाख सुखसे साध्य, अतिशय पुण्य प्रदान करनेवाला है। पापरूपी इन्धनको अग्निकी भाँति जलानेवाला, परम सुलभ तथा धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष—चारों पुरुषार्थोंको देनेवाला है।

## महर्षि वसिष्ठके उपदेशसे राजा कीर्तिमान्‌का अपने राज्यमें वैशाखमासके धर्मका पालन कराना और यमराजका ब्रह्माजीसे राजाके लिये शिकायत करना

**मिथिलापतिने पूछा**—ब्रह्मन्! जब वैशाखमासके धर्म अतिशय सुलभ, पुण्यराशि प्रदान करनेवाले, भगवान् विष्णुके लिये प्रीतिकारक, चारों पुरुषार्थोंकी तत्काल सिद्धि करनेवाले, सनातन और वेदोक्त हैं, तब संसारमें उनकी प्रसिद्धि कैसे नहीं हुई?

**श्रुतदेवजीने कहा**—राजन्! इस पृथ्वीपर लौकिक कामना रखनेवाले ही मनुष्य अधिक हैं। उनमेंसे कुछ राजस और कुछ तामस हैं। वे लोग इस संसारके भोगों तथा पुत्र-पौत्रादि सम्पदाओंकी ही अभिलाषा रखते हैं। कहीं किसी प्रकार कभी बड़ी कठिनाईसे कोई एक मनुष्य ऐसा मिलता है, जो स्वर्गलोकके लिये प्रयत्न करता है और इसीलिये वह यज्ञ आदि पुण्यकर्मोंका अनुष्ठान बड़े प्रयत्नसे करता है; परंतु मोक्षकी उपासना प्रायः कोई नहीं करता। तुच्छ आशाएँ लेकर बहुत-से कर्मोंका आयोजन करनेवाले लोग प्रायः काम्य-कर्मोंके ही उपासक हैं। यही कारण है कि संसारमें राजस और तामस धर्म अधिक विख्यात हो गये, परंतु सात्त्विक धर्मोंकी प्रसिद्धि नहीं हुई। ये सात्त्विक धर्म भगवान् विष्णुको प्रसन्न करनेवाले हैं, निष्कामभावसे किये जाते हैं और इहलोक तथा परलोकमें सुख प्रदान करते हैं। देवमायासे मोहित होनेके कारण मूढ़ मनुष्य इन धर्मोंको जानते ही नहीं हैं।

पूर्वकालकी बात है, काशीपुरीमें कीर्तिमान् नामसे विख्यात एक चक्रवर्ती राजा थे। वे इक्ष्वाकुवंशके भूषण तथा महाराज नृगके पुत्र थे। संसारमें उनका बड़ा यश था। वे अपनी इन्द्रियोंपर और क्रोधपर विजय पा चुके थे। ब्राह्मणोंके प्रति उनके मनमें बड़ी भक्ति थी।

राजाओंमें उनका स्थान बहुत ऊँचा था। एक दिन वे मृगयामें आसक्त होकर महर्षि वसिष्ठके आश्रमपर आये। वैशाखकी चिलचिलाती हुई धूपमें यात्रा करते हुए राजाने मार्गमें देखा, महात्मा वसिष्ठके शिष्य जगह-जगह अनेक प्रकारके कार्योंमें विशेष तत्परताके साथ संलग्न थे। वे कहीं पौंसला बनाते थे और कहीं छायामण्डप। किनारेपर झरनोंके जलको रोककर स्वच्छ बावली बनाते थे। कहीं वृक्षोंके नीचे बैठे हुए लोगोंको वे पंखा डुलाकर हवा करते थे, कहीं ऊख देते, कहीं सुगन्धित पदार्थ भेंट करते और कहीं फल देते थे। दोपहरीमें लोगोंको छाता देते और सन्ध्याके समय शर्बत। कोई शिष्य घनी छायावाले वनमें झाड़-बुहारकर साफ किये हुए आश्रमके प्राङ्गणोंमें हितकारक बालुका बिछाते थे और कुछ लोग वृक्षोंकी शाखामें झूला लटकाते थे।

उन्हें देखकर राजाने पूछा—'आपलोग कौन हैं?' उन्होंने उत्तर दिया—'हम लोग महर्षि वसिष्ठके शिष्य हैं।' राजाने पूछा—'यह सब क्या हो रहा है?' वे बोले—'ये वैशाखमासमें कर्तव्यरूपसे बताये गये धर्म हैं, जो धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष—चारों पुरुषार्थोंके साधक हैं। हम लोग गुरुदेव वसिष्ठकी आज्ञासे इन धर्मोंका पालन करते हैं।' राजाने पुनः पूछा—'इनके अनुष्ठानसे मनुष्योंको कौन-सा फल मिलता है? किस देवताकी प्रसन्नता होती है?' उन्होंने उत्तर दिया—'हमें इस समय यह बतानेके लिये अवकाश नहीं है, आप गुरुजीसे ही यथोचित प्रश्न कीजिये। वे महायशस्वी महर्षि इन धर्मोंको यथार्थरूपसे जानते हैं।'

शिष्योंसे ऐसा उत्तर पाकर राजा शीघ्र ही महर्षि वसिष्ठके पवित्र आश्रमपर, जो विद्या और योगशक्तिसे सम्पन्न था, गये। राजाको आते देख महर्षि वसिष्ठ मन-ही-मन बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने सेवकोंसहित महात्मा राजाका विधिपूर्वक आतिथ्य-सत्कार किया। जब वे आरामसे बैठ गये, तब गुरु वसिष्ठसे प्रसन्नतापूर्वक बोले—'भगवन्! मैंने मार्गमें

आपके शिष्योंद्वारा परम आश्चर्यमय शुभ कर्मोंका अनुष्ठान होते देखा है; किंतु उसके सम्बन्धमें जब प्रश्न किया, तब उन्होंने दूसरी कोई बात न बताकर आपके पास जानेकी आज्ञा दी। उनकी आज्ञाके अनुसार मैं इस समय आपके समीप आया हूँ। मेरे मनमें उन धर्मोंको सुननेकी बड़ी इच्छा है। अतः आप मुझसे उनका वर्णन करें।'

**तब महायशस्वी वसिष्ठजीने प्रसन्नतापूर्वक कहा**—राजन्! तुम्हारी बुद्धिको उत्तम शिक्षा मिली है। अतः उसने यह उत्तम निश्चय किया है। भगवान् विष्णुकी कथाके श्रवण और भगवद्धर्मोंके अनुष्ठानमें जो तुम्हारी बुद्धिकी आत्यन्तिक प्रवृत्ति हुई है, यह तुम्हारे किसी पुण्यका ही फल है। जिसने वैशाखमासमें बताये हुए महाधर्मोंके द्वारा भगवान् श्रीहरिकी आराधना की है, उसके उन धर्मोंसे भगवान् बहुत सन्तुष्ट होते और उसे मनोवाञ्छित वस्तु प्रदान करते हैं। सम्पूर्ण जगत्के स्वामी भगवान् लक्ष्मीपति समस्त पापराशिका विनाश करनेवाले हैं। वे सूक्ष्म धर्मोंसे प्रसन्न होते हैं, केवल परिश्रम और धनसे नहीं। भगवान् विष्णु भक्तिसे पूजित होनेपर अभीष्ट वस्तु प्रदान करते हैं; इसलिये सदा भगवान् विष्णुकी भक्ति करनी चाहिये। जगदीश्वर श्रीहरि जलसे भी पूजा करनेपर अशेष क्लेशका नाश करते और शीघ्र प्रसन्न होते हैं। वैशाखमासमें बताये हुए ये धर्म थोड़े-से परिश्रमद्वारा साध्य होनेपर भी भगवान् विष्णुके लिये प्रीतिकारक एवं शुभ होनेके कारण अधिक व्ययसे सिद्ध होनेवाले बड़े-बड़े यज्ञादि कर्मोंका भी तिरस्कार करनेवाले हैं। अतः भूपाल! तुम भी वैशाखमासमें बताये हुए धर्मोंका पालन करो और तुम्हारे राज्यमें निवास करनेवाले अन्य सब लोगोंसे भी उन कल्याणकारी धर्मोंका पालन कराओ।

इस प्रकारसे वैशाख-धर्मके पालनकी आवश्यकताको शास्त्रों और युक्तियोंसे भलीभाँति सिद्ध करके वसिष्ठजीने वैशाखमासके सब धर्मोंका

राजाके समक्ष वर्णन किया। उन सब धर्मोंको सुनकर राजाने गुरुका भक्तिभावसे पूजन किया और घर आकर वे सब धर्मोंका विधिपूर्वक पालन करने लगे। देवाधिदेव भगवान् विष्णुमें भक्ति रखते हुए राजा कीर्तिमान् देवेश्वर पद्मनाभके अतिरिक्त और किसी देवताको नहीं देखते थे। उन्होंने हाथीकी पीठपर नगाड़ा रखकर सिपाहियोंसे अपने राज्यभरमें डंकेकी चोट यह घोषणा करा दी कि 'मेरे राज्यमें जो आठ वर्षसे अधिककी आयुवाला मनुष्य है, उसकी आयु जबतक अस्सी वर्षकी न हो जाय, तबतक मेषराशिमें सूर्यके स्थित होनेपर यदि वह प्रातःकाल स्नान नहीं करेगा तो मेरे द्वारा दण्डनीय, वध्य तथा राज्यसे निकाल देने योग्य समझा जायगा—यह मेरा निश्चित आदेश है। पिता, पुत्र, पत्नी अथवा सुहृद्—जो कोई भी वैशाख-धर्मका पालन नहीं करेगा, वह चोरकी भाँति दण्डका पात्र समझा जायगा। प्रातःकाल शुभ जलमें स्नान करके श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको दान करना चाहिये। तुम सब लोग अपनी शक्तिके अनुसार पौंसला और दान आदि धर्मोंका आचरण करो।'

राजा कीर्तिमान्‌ने प्रत्येक ग्राममें धर्मका उपदेश करनेवाले एक-एक ब्राह्मणको बसाया। पाँच-पाँच गाँवोंपर एक-एक ऐसे अधिकारीकी नियुक्ति की, जो धर्मका त्याग करनेवाले लोगोंको दण्ड दे सके। उस अधिकारीकी सेवामें दस-दस घुड़सवार रहते थे। इस प्रकार चक्रवर्ती नरेशके शासनसे सर्वत्र और सब देशोंमें यह धर्मका पौधा प्रारम्भ हुआ और आगे चलकर खूब बढ़े हुए वृक्षके रूपमें परिणत हो गया। उस राजाके राज्यमें जो लोग मर जाते थे, वे भगवान् विष्णुके धाममें जाते थे। वहाँके मनुष्योंको विष्णुलोककी प्राप्ति निश्चित थी। एक बार भी वैशाखस्नान कर लेनेसे मनुष्य यमराजके पास नहीं जाता। अपने धर्मानुकूल कर्ममें स्थित हुए सब लोगोंके विष्णुलोकमें चले जानेसे यमपुरीके सब नरक खाली हो गये। वहाँ

एक भी पापी प्राणी नहीं रह गया। वैशाखमासके प्रभावसे यमपुरीके मार्गकी यात्रा ही बंद हो गयी। सब मनुष्य दिव्य आकृति धारण करके भगवान्‌के धाममें जाने लगे। देवताओंके जो लोक हैं, वे सब भी शून्य हो गये। स्वर्ग और नरक दोनोंके शून्य हो जानेपर एक दिन नारदजीने धर्मराजके पास जाकर कहा—'धर्मराज! आपके इस नरकमें अब पहले-जैसा कोलाहल नहीं सुनायी पड़ता, पहलेकी भाँति पाप-कर्मोंका लेखा भी नहीं लिखा जा रहा है। चित्रगुप्तजी तो ऐसे मौनभावसे बैठे हुए हैं, जैसे कोई मुनि हों। महाराज! इसका कारण तो बताइये?'

**महात्मा नारदके ऐसा कहनेपर राजा यमने कुछ दीनताके स्वरमें कहा**—नारद! इस समय पृथ्वीपर जो यह राजा राज्य करता है, वह पुराणपुरुषोत्तम भगवान् विष्णुका बड़ा भक्त है। उसके भयसे कोई भी मनुष्य कभी वैशाखमासका उल्लङ्घन नहीं करता। उस पुण्यकर्मके प्रभावसे सभी भगवान् विष्णुके परम धाममें चले जाते हैं। मुनिश्रेष्ठ! उस राजाने इस समय मेरे लोकका मार्ग लुप्त-सा कर रखा है। स्वर्ग और नरक दोनोंको शून्य बना दिया है। अतः ब्रह्माजीके समीप जाकर यह सब समाचार उनसे निवेदन करके तभी मैं स्वस्थ होऊँगा। ऐसा निश्चय करके यमराज ब्रह्माजीके लोकमें गये और वहाँ बैठे हुए उन ब्रह्माजीका दर्शन किया, जिनका आश्रय ध्रुव है, जो इस जगत्‌के बीज तथा सब लोकोंके पितामह हैं और समस्त लोकपाल, दिक्पाल तथा देवता जिनकी उपासना करते हैं।

ब्रह्माजीने यमराजको देखा और यमराज ब्रह्माजीके आगे पृथ्वीपर गिर पड़े। फिर यमराजने कहा—'कमलासन! काममें लगाया हुआ जो पुरुष स्वामीकी आज्ञाका ठीक-ठीक पालन नहीं करता और उसका धन लेकर भोगता है, वह काठका कीड़ा होता है। जो बुद्धिमान् मनुष्य लोभवश स्वामीके धनका उपभोग करता है, वह तीन सौ

कल्पोंतक तिर्यग् योनिरूप नरकमें जाता है। जो कार्यमें नियुक्त हुआ पुरुष कार्य करनेमें समर्थ होकर भी अपने घरमें ही बैठा रहता है, वह बिलाव होता है। देव! मैं आपकी आज्ञासे धर्मपूर्वक प्रजाका शासन करता आ रहा हूँ। मैं अबतक मुनियों और धर्मशास्त्रोंके कथनानुसार पुण्यात्माको पुण्यके फलसे और पापात्माको पापके फलसे संयुक्त किया करता था, परंतु अब आपकी आज्ञाका पालन करनेमें असमर्थ हो गया हूँ। कीर्तिमान्‌के राज्यमें सब लोग वैशाख मासोक्त पुण्यकर्मोंका अनुष्ठान करके पितरों और पितामहोंके साथ वैकुण्ठधाममें चले जाते हैं। उनके मरे हुए पितर और मातामह आदि भी विष्णुलोकमें चले जाते हैं। इतना ही नहीं, पत्नीके पिता—श्वशुर आदि भी मेरे लेखको मिटाकर विष्णुलोकमें चले जाते हैं। देव! बड़े-बड़े यज्ञोंद्वारा भी मनुष्य वैसी गति नहीं पाता है, जैसी वैशाखमाससे मिल रही है। सम्पूर्ण तीर्थोंसे, दान आदिसे, तपस्याओंसे, व्रतोंसे अथवा सम्पूर्ण धर्मोंसे युक्त मनुष्य भी उस गतिको नहीं पाता, जो वैशाख-धर्ममें तत्पर हुए मनुष्यको प्राप्त हो रही है। वैशाखमें प्रातःकाल स्नान करके देवपूजन, मास-माहात्म्यकी कथाका श्रवण तथा भगवान् विष्णुको प्रिय लगनेवाले तदनुकूल धर्मोंका पालन करनेवाला मनुष्य एकमात्र विष्णुलोकका स्वामी होता है और जगत्पति भगवान् विष्णुके लोककी तो मेरी समझमें कोई सीमा ही नहीं है; क्योंकि सब ओरसे कोटि-कोटि प्राणियोंका समुदाय वहाँ पहुँच रहा है तो भी वह भरता नहीं है। इस संसारमें पवित्र और अपवित्र सभी लोग राजाकी आज्ञासे वैशाखमासके धर्मका पालन करके विष्णुलोकको जा रहे हैं। लोकनाथ! उसकी प्रेरणासे संस्कारहीन मनुष्य भी वैशाखस्नानमात्रसे वैकुण्ठधाममें चले जाते हैं। वह केवल भगवान् विष्णुके चरणोंकी शरण लेनेवाला है। जान पड़ता है, वह समस्त संसारको विष्णुलोकमें पहुँचा देगा।

जो पुत्र धर्म, अर्थ, काम और मोक्षके प्रतिकूल चलता हो, वह पृथ्वीपर माताके पेटसे पैदा हुआ रोग है। वह अधम पुरुष अपनी माताका घात करनेवाला कहा जाता है; किंतु राजा कीर्तिमान्‌की माता और उसकी पत्नीका पुण्य संसारमें विख्यात है। उसकी माता एकमात्र वीरजननी है और वह राजा निश्चय ही संसारमें बहुत बड़ा वीर है। जिस प्रकार कीर्तिमान् मेरी लिपिको मिटानेमें उद्यत हुआ है, ऐसा उद्योग पुराणोंमें और किसीका नहीं सुना गया है। भगवान् विष्णुकी भक्तिमें तत्पर हुए राजा कीर्तिमान्‌के सिवा दूसरे ऐसे किसीको मैं नहीं जानता, जो डंका बजाकर घोषणा करते हुए लोगोंको ऐसी प्रेरणा देता हो और मेरे लोकके मार्गको विलुप्त करनेकी चेष्टा करता रहा हो।'

## ब्रह्माजीका यमराजको समझाना और भगवान् विष्णुका उन्हें वैशाखमासमें भाग दिलाना

**ब्रह्माजीने कहा**—यमराज! तुमने क्या आश्चर्य देखा है? क्यों तुम्हें खेद हो रहा है? भगवान् गोविन्दको एक बार भी प्रणाम कर लिया जाय तो वह सौ अश्वमेध यज्ञोंके अवभृथ-स्नानके समान होता है। यज्ञ करनेवाला तो पुनः इस संसारमें जन्म लेता है, परंतु भगवान्‌को किया हुआ प्रणाम पुनर्जन्मका हेतु नहीं बनता—मुक्तिकी प्राप्ति करा देता है।* जिसकी जिह्वाके अग्रभागपर 'हरि' ये दो अक्षर विद्यमान हैं, उसको

* एकोऽपि गोविन्दकृतः प्रणामः
शताश्वमेधावभृथेन तुल्यः।
यज्ञस्य कर्ता पुनरेति जन्म
हरेः प्रणामो न पुनर्भवाय॥ (स्क० पु० वै० वै० मा० १३। ३)

कुरुक्षेत्र तीर्थके सेवन अथवा सरस्वती नदीके जलमें स्नान करनेसे क्या लेना है? जो मृत्युकालमें भगवान् विष्णुका स्मरण करता है, वह अभक्ष्य-भक्षण आदिसे प्राप्त हुई पाप-राशिका परित्याग करके भगवान् विष्णुके सायुज्यको पाता है; क्योंकि भगवान् विष्णुको अपना स्मरण बहुत ही प्रिय है। यमराज! इसी प्रकार वैशाख नामक मास भी भगवान् विष्णुको प्रिय है। जिसके धर्मको श्रवण करनेमात्रसे मनुष्य सब पापोंसे मुक्त हो जाता है, उसके अनुष्ठानमें तत्पर रहनेवाला मनुष्य यदि मुक्तिको प्राप्त हो तो उसके लिये क्या कहना है? वैशाखमासमें भगवान् पुरुषोत्तमके नाम और यशका गान किया जाता है, जिससे भगवान् बहुत प्रसन्न होते हैं। पुरुषोत्तम श्रीहरि सम्पूर्ण जगत्के स्वामी और हमारे जनक हैं। यह राजा कीर्तिमान् वैशाखमासमें उन्हीं भगवान्के प्रिय धर्मोंका अनुष्ठान करता है, जिससे प्रसन्नचित्त होकर भगवान् विष्णु सदा उसकी सहायतामें स्थित रहते हैं। भगवान् वासुदेवके भक्तोंका कभी अमङ्गल नहीं होता; उन्हें जन्म, मृत्यु, जरा और व्याधिका भय भी नहीं प्राप्त होता। कार्यमें नियुक्त किया हुआ पुरुष यदि अपनी पूरी शक्ति लगाकर स्वामीके कार्यसाधनकी चेष्टा करता है तो उतनेसे ही वह कृतार्थ हो जाता है। यदि शक्तिके बाहरका कार्य उपस्थित हो जाय तो स्वामीको उसकी सूचना दे दे। उतना कर देनेसे वह उऋण हो जाता है और सुखका भागी होता है। जिसने उस प्रयोजनको स्वामीसे निवेदित कर दिया है, उसके ऊपर न तो कोई ऋण है और न पातक ही लगता है। अपने कर्तव्यपालनके लिये पूरा यत्न कर लेनेपर प्राणीका कोई अपराध नहीं रहता। यह कार्य तुम्हारे लिये असम्भव है। अतः इसके विषयमें तुम्हें शोक नहीं करना चाहिये।

ब्रह्माजीके ऐसा कहनेपर यमराजने दीन वाणीमें कहा, 'तात! मैंने आपके चरणोंकी सेवासे सब कुछ पा लिया।' तब ब्रह्माजीने

पुनः समझाते हुए कहा—'धर्मराज! राजा कीर्तिमान् विष्णुधर्मके पालनमें तत्पर है। चलो, हम लोग भगवान् विष्णुके समीप चलें और उन्हें सब बात बताकर पीछे उनके कथनानुसार कार्य किया जायगा। वे ही इस जगत्के कर्ता, धर्मके रक्षक और नियामक हैं।'

इस प्रकार यमराजको आश्वासन देकर ब्रह्माजी उनके साथ क्षीरसागरके तटपर गये। वहाँ उन्होंने सच्चिदानन्दस्वरूप गुणातीत परमेश्वर विष्णुका स्तवन किया। ब्रह्माजीकी स्तुतिसे सन्तुष्ट होकर भगवान् विष्णु वहाँ प्रकट हुए। यमराज और ब्रह्माजीने तुरंत ही उनके चरणोंमें मस्तक झुकाया। तब भगवान् महाविष्णुने मेघके समान गम्भीर वाणीमें उन दोनोंसे कहा—'तुम लोग यहाँ क्यों आये हो?' ब्रह्माजीने कहा—'प्रभो! आपके श्रेष्ठ भक्त राजा कीर्तिमान्के शासनकालमें सब मनुष्य वैशाख-धर्मके पालनमें संलग्न हो आपके अविनाशी पदको प्राप्त हो रहे हैं। इससे यमपुरी सूनी हो गयी है।'

**उनके ऐसा कहनेपर भगवान् विष्णु हँसते हुए बोले**—मैं लक्ष्मीको त्याग दूँगा। अपने प्राण, शरीर, श्रीवत्स, कौस्तुभमणि, वैजयन्ती माला, श्वेतद्वीप, वैकुण्ठधाम, क्षीरसागर, शेषनाग तथा गरुड़जीको भी छोड़ दूँगा, परंतु अपने भक्तका त्याग नहीं कर सकूँगा। जिन्होंने मेरे लिये सब भोगोंका त्याग करके अपना जीवनतक मुझे सौंप दिया है, जो मुझमें मन लगाकर मेरे स्वरूप हो गये हैं, उन महाभाग भक्तोंको मैं कैसे त्याग सकता हूँ?* राजा कीर्तिमान्को इस पृथ्वीपर मैंने दस हजार वर्षोंकी आयु दी है। उसमेंसे आठ हजार वर्ष

---

* लक्ष्मीं वापि परित्यक्ष्ये प्राणान्देहमथापि वा। श्रीवत्सं कौस्तुभं मालां वैजयन्तीमथापि वा॥
श्वेतद्वीपं च वैकुण्ठं क्षीरसागरमेव च। शेषं च गरुडं चैव न भक्तं त्यक्तुमुत्सहे॥
विसृज्य सकलान् भोगान् मदर्थे त्यक्तजीवितान्। मदात्मकान् महाभागान् कथं तांस्त्यक्तुमुत्सहे॥
(स्क० पु० वै० वै० मा० १३। ३४—३६)

तो बीत गये। शेष आयु और बीत जानेपर उसे मेरा सायुज्य प्राप्त होगा। उसके बाद पृथ्वीपर बेन नामक दुष्टात्मा राजा होगा, जो सम्पूर्ण वेदोक्त महाधर्मोंका लोप कर देगा। उस समय वैशाखमासके धर्म भी छिन्न-भिन्न हो जायँगे। बेन अपने ही पापसे भस्म हो जायगा। तत्पश्चात् मैं पृथु होकर पुनः सब धर्मोंका प्रचार करूँगा। उस समय लोगोंमें वैशाखमासके धर्मको भी प्रसिद्ध करूँगा। सहस्त्रों मनुष्योंमें कोई एक ऐसा होता है, जो मुझमें अपने मन-प्राण अर्पित करके अपना सर्वस्व मुझे समर्पित कर दे और मेरा भक्त हो जाय। जो ऐसा होता है, वही मेरे धर्मोंका प्रचार करता है। इस वैशाखमासमेंसे भी मैं वैशाख-धर्ममें तत्पर रहनेवाले महात्मा पुरुषों तथा राजाके द्वारा समयानुसार तुम्हारे लिये भाग दिलाऊँगा। लोकमें जो कोई भी वैशाखमासका व्रत करेंगे, वे तुम्हें भाग देनेवाले होंगे। उनके वैशाखमासमें बताये हुए महाधर्मके पालनमें तुम कभी विघ्न न उपस्थित करना।

यमराजको इस प्रकार आश्वासन देकर भगवान् विष्णु वहीं अन्तर्धान हो गये। ब्रह्माजी भी अपने सेवकोंके साथ सत्यलोकको चले गये। उनके बाद यमराज भी अपनी पुरीको पधारे। वैशाखमासकी पूर्णिमाको पहले धर्मराजके उद्देश्यसे जलसे भरा हुआ घड़ा, दही और अन्न देना चाहिये। उसके बाद पितरों, गुरुओं और भगवान् विष्णुके उद्देश्यसे शीतल जल, दही, अन्न, पान और दक्षिणा फलके साथ काँसीके पात्रमें रखकर ब्राह्मणको देना चाहिये। भगवान् विष्णुकी दिव्य प्रतिमा वैशाखमासकी माहात्म्यकथा सुनानेवाले दीन ब्राह्मणको देनी चाहिये। उस धर्मवक्ता ब्राह्मणको अपने धनसे भी पूजित करना चाहिये। राजा कीर्तिमान्ने सब कुछ उसी प्रकार किया। उन्होंने पृथ्वीपर मनोवाञ्छित भोग भोगकर शेष आयु पूर्ण होनेके पश्चात् पुत्र-पौत्र आदिके साथ श्रीविष्णुधामको प्रस्थान किया।

**मिथिलापतिने कहा**—महामते! दुरात्मा राजा बेन प्रथम (स्वायम्भुव) मन्वन्तरमें हुआ था और ये राजा इक्ष्वाकुकुलभूषण कीर्तिमान् वैवस्वत मन्वन्तरके व्यक्ति हैं। यह बात पहले मैंने आपके मुखसे सुन रखी है। परंतु इस समय आपने और ही बात कही है कि यह राजा जब वैकुण्ठवासी हो जायँगे, उसके बाद राजा बेन उत्पन्न होगा। मेरे इस संशयको आप निवृत्त कीजिये।

**श्रुतदेवने कहा**—राजन्! पुराणोंमें जो विषमता प्रतीत होती है, वह युगभेद और कल्पभेदकी व्यवस्थाके अनुसार है। (किसी कल्पमें ऐसा ही हुआ होगा कि पहले राजा कीर्तिमान् और पीछे बेन हुआ होगा) इसलिये कहीं कथामें समयकी विपरीतता देखकर उसके अप्रामाणिक होनेकी आशङ्का नहीं करनी चाहिये।

## भगवत्कथाके श्रवण और कीर्तनका महत्त्व तथा वैशाखमासके धर्मोंके अनुष्ठानसे राजा पुरुयशाका सङ्कटसे उद्धार

**श्रुतदेव बोले**—मेषराशिमें सूर्यके स्थित रहनेपर जो वैशाखमासमें प्रातःकाल स्नान करता है और भगवान् विष्णुकी पूजा करके इस कथाको सुनता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो भगवान् विष्णुके परम धामको प्राप्त होता है। इस विषयमें एक प्राचीन इतिहास कहते हैं, जो सब पापोंका नाशक, पवित्रकारक, धर्मानुकूल, वन्दनीय और पुरातन है।

गोदावरीके तटपर शुभ ब्रह्मेश्वर क्षेत्रमें महर्षि दुर्वासाके दो शिष्य रहते थे, जो परमहंस, ब्रह्मनिष्ठ, उपनिषद्विद्यामें परिनिष्ठित और इच्छारहित थे। वे भिक्षामात्र भोजन करते और पुण्यमय जीवन बिताते हुए गुफामें निवास करते थे। उनमेंसे एकका नाम था सत्यनिष्ठ

और दूसरेका तपोनिष्ठ। वे इन्हीं नामोंसे तीनों लोकोंमें विख्यात थे। सत्यनिष्ठ सदा भगवान् विष्णुकी कथामें तत्पर रहते थे। जब कोई श्रोता अथवा वक्ता न होता, तब वे अपने नित्यकर्म किया करते थे। यदि कोई श्रोता उपस्थित होता तो उसे निरन्तर वे भगवत्कथा सुनाते और यदि कोई कथावाचक भगवान् विष्णुकी कल्याणमयी पवित्र कथा कहता तो वे अपने सब कर्मोंको समेटकर श्रवणमें तत्पर हो उस कथाको सुनने लगते थे। वे अत्यन्त दूरके तीर्थों और देवमन्दिरोंको छोड़कर तथा कथाविरोधी कर्मोंका परित्याग करके भगवान्‌की दिव्य कथा सुनते और श्रोताओंको स्वयं भी सुनाते थे। कथा समाप्त होनेपर सत्यनिष्ठ अपना शेष कार्य पूरा करते थे। कथा सुननेवाले पुरुषको जन्म-मृत्युमय संसारबन्धनकी प्राप्ति नहीं होती। उसके अन्तःकरणकी शुद्धि होती है, भगवान् विष्णुमें जो अनुरागकी कमी है, वह दूर हो जाती है और उनके प्रति गाढ़ अनुराग होता है। साथ ही साधुपुरुषोंके प्रति सौहार्द बढ़ता है। रजोगुणरहित गुणातीत परमात्मा शीघ्र ही हृदयमें स्थित हो जाते हैं। श्रवणसे ज्ञान पाकर मनुष्य भगवच्चिन्तनमें समर्थ होता है। श्रवण, ध्यान और मनन—यह वेदोंमें अनेक प्रकारसे बताया गया है। जहाँ भगवान् विष्णुकी कथा न होती हो और जहाँ साधुपुरुष न रहते हों, वह स्थान साक्षात् गङ्गातट ही क्यों न हो, निःसन्देह त्याग देने योग्य है। जिस देशमें तुलसी नहीं हैं अथवा भगवान् विष्णुका मन्दिर नहीं है, ऐसा स्थान निवास करने योग्य नहीं है। यह निश्चय करके मुनिवर सत्यनिष्ठ सदा भगवान् विष्णुकी कथा और चिन्तनमें संलग्न रहते थे।

दुर्वासाका दूसरा शिष्य तपोनिष्ठ दुराग्रहपूर्वक कर्ममें तत्पर रहता था। वह भगवान्‌की कथा छोड़कर अपना कर्म पूरा करनेके लिये इधर-उधर हट जाता था। कथाकी अवहेलनासे उसे बड़ा कष्ट उठाना पड़ा।

अन्ततोगत्वा कथापरायण सत्यनिष्ठने ही उसका सङ्कटसे उद्धार किया।

जहाँ लोगोंके पापका नाश करनेवाली भगवान् विष्णुकी पवित्र कथा होती है, वहाँ सब तीर्थ और अनेक प्रकारके क्षेत्र स्थित रहते हैं। जहाँ विष्णु-कथारूपी पुण्यमयी नदी बहती रहती है, उस देशमें निवास करनेवालोंकी मुक्ति उनके हाथमें ही है।

पूर्वकालमें पाञ्चाल देशमें पुरुयशा नामक एक राजा थे, जो पुण्यशील एवं बुद्धिमान् राजा भूरियशाके पुत्र थे। पिताके मरनेपर पुरुयशा राज्यसिंहासनपर बैठे। वे धर्मकी अभिलाषा रखनेवाले, शूरता, उदारता आदि गुणोंसे सम्पन्न और धनुर्वेदमें प्रवीण थे। उन महामति नरेशने अपने धर्मके अनुसार पृथ्वीका पालन किया। कुछ कालके पश्चात् राजाका धन नष्ट हो गया। हाथी और घोड़े बड़े-बड़े रोगोंसे पीड़ित होकर मर गये। उनके राज्यमें ऐसा भारी अकाल पड़ा, जो मनुष्योंका अत्यन्त विनाश करनेवाला था। पाञ्चालनरेश राजा पुरुयशाको निर्बल जानकर उनके शत्रुओंने आक्रमण किया और युद्धमें उनको जीत लिया। तदनन्तर पराजित हुए राजाने अपनी पत्नी शिखिणीके साथ पर्वतकी कन्दरामें प्रवेश किया। साथमें दासी आदि सेवकगण भी थे। इस प्रकार छिपे रहकर राजा मन-ही-मन विचार करने लगे कि मेरी यह क्या अवस्था हो गयी। मैं जन्म और कर्मसे शुद्ध हूँ, माता और पिताके हितमें तत्पर रहा हूँ, गुरुभक्त, उदार, ब्राह्मणोंका सेवक, धर्मपरायण, सब प्राणियोंके प्रति दयालु, देवपूजक और जितेन्द्रिय भी हूँ; फिर किस कर्मसे मुझे यह विशेष दुःख देनेवाली दरिद्रता प्राप्त हुई है? किस कर्मसे मेरी पराजय हुई और किस कर्मके फलस्वरूप मुझे यह वनवास मिला है?

इस प्रकार चिन्तासे व्याकुल होकर राजाने खिन्न चित्तसे अपने सर्वज्ञ गुरु मुनिश्रेष्ठ याज और उपयाजका स्मरण किया। राजाके

आवाहन करनेपर दोनों बुद्धिमान् मुनीश्वर वहाँ आये। उन्हें देखकर पाञ्चालप्रिय नरेश सहसा उठकर खड़े हो गये और बड़ी भक्तिके साथ गुरुके चरणोंमें मस्तक रखकर प्रणाम किया। फिर वनमें पैदा होनेवाली शुभ सामग्रियोंके द्वारा उन्होंने उन दोनोंका पूजन किया और विनीतभावसे पूछा—'विप्रवरो! मैं गुरुचरणोंमें भक्ति रखनेवाला हूँ। मुझे किस कर्मसे यह दरिद्रता, कोषहानि और शत्रुओंसे पराजय प्राप्त हुई है? किस कारणसे मेरा वनवास हुआ और मुझे अकेले रहना पड़ा? मेरे न कोई पुत्र है, न भाई है और न हितकारी मित्र ही हैं। मेरे द्वारा सुरक्षित राज्यमें यह बड़ा भारी अकाल कैसे पड़ गया? ये सब बातें विस्तारपूर्वक मुझे बताइये।'

**राजाके इस प्रकार पूछनेपर वे दोनों मुनिश्रेष्ठ कुछ देर ध्यानमग्न हो इस प्रकार बोले**—राजन्! तुम पहलेके दस जन्मोंतक महापापी व्याध रहे हो। तुम सब लोगोंके प्रति क्रूर और हिंसापरायण थे। तुमने कभी लेशमात्र भी धर्मका अनुष्ठान नहीं किया। इन्द्रियसंयम तथा मनोनिग्रहका तुममें सर्वथा अभाव था। तुम्हारी जिह्वा किसी प्रकार भगवान् विष्णुके नाम नहीं लेती थी। तुम्हारा चित्त गोविन्दके चारु चरणारविन्दोंका चिन्तन नहीं करता था और तुमने कभी मस्तक नवाकर परमात्माको प्रणाम नहीं किया। इस प्रकार दुरात्मा व्याधका जीवन व्यतीत करते हुए तुम्हारे नौ जन्म पूरे हो गये। दसवाँ जन्म प्राप्त होनेपर तुम सह्य पर्वतपर पुनः व्याध हुए। वहाँ सब लोगोंके प्रति क्रूरता करना ही तुम्हारा स्वभाव था। तुम मनुष्योंके लिये यमके समान थे। दयाहीन, शस्त्रजीवी और हिंसापरायण थे। अपनी स्त्रीके साथ रहते हुए राह चलनेवाले पथिकोंको तुम बड़ा कष्ट दिया करते थे। बड़े भारी शठ थे। इस प्रकार अपने हितको न जानते हुए तुमने बहुत वर्ष व्यतीत किये। जिनके छोटे-छोटे बच्चे हैं, ऐसे मृगों और पक्षियोंके वध करनेके

कारण तुम दयाहीन दुर्बुद्धिको इस जन्ममें कोई पुत्र नहीं प्राप्त हुआ। तुमने सबके साथ विश्वासघात किया, इसलिये तुम्हारे कोई सहोदर भाई नहीं हुआ। मार्गमें सबको पीड़ा देते रहे, इसलिये इस जन्ममें तुम मित्ररहित हो। साधुपुरुषोंके तिरस्कारसे शत्रुओंद्वारा तुम्हारी पराजय हुई है। कभी दान न देनेके दोषसे तुम्हारे घरमें दरिद्रता प्राप्त हुई है। तुमने दूसरोंको सदा उद्वेगमें डाला, इसलिये तुम्हें दु:सह वनवास मिला। सबके अप्रिय होनेके कारण तुम्हें असह्य दु:ख मिला है। तुम्हारे क्रूर कर्मोंके फलसे ही इस जन्ममें मिला हुआ राज्य भी छिन गया है। वैशाखमासकी गरमीमें तुमने स्वार्थवश एक दिन एक ऋषिको दूरसे तालाब बता दिया था और हवाके लिये पलाशका एक सूखा पत्ता दे दिया था। बस, जीवनमें इस एक ही पुण्यके कारण तुम्हारा यह जन्म परम पवित्र राजवंशमें हुआ है। अब यदि तुम सुख, राज्य, धन-धान्यादि सम्पत्ति, स्वर्ग और मोक्ष चाहते हो अथवा सायुज्य एवं श्रीहरिके पदकी अभिलाषा रखते हो तो वैशाखमासके धर्मोंका पालन करो। इससे सब प्रकारके सुख पाओगे। इस समय वैशाखमास चल रहा है। आज अक्षय तृतीया है। आज तुम विधिपूर्वक स्नान और भगवान् लक्ष्मीपतिकी पूजा करो। यदि अपने समान ही गुणवान् पुत्रोंकी अभिलाषा करते हो तो सब प्राणियोंके हितके लिये प्याऊ लगाओ। इस पवित्र वैशाखमासमें भगवान् मधुसूदनकी प्रसन्नताके लिये यदि तुम निष्कामभावसे धर्मोंका अनुष्ठान करोगे, तो अन्त:करण शुद्ध होनेपर तुम्हें भगवान् विष्णुका प्रत्यक्ष दर्शन होगा।

यों कहकर राजाकी अनुमति ले उनके दोनों ब्राह्मण पुरोहित याज और उपयाज जैसे आये थे, वैसे ही चले गये। उनसे उपदेश पाकर महाराज पुरुयशाने वैशाखमासके सम्पूर्ण धर्मोंका श्रद्धापूर्वक पालन किया और भगवान् मधुसूदनकी आराधना की। इससे उनका

प्रभाव बढ़ गया तथा बन्धु-बान्धव उनसे आकर मिल गये। तत्पश्चात् वे मरनेसे बची हुई सेनाको साथ ले बन्धुओंसहित पाञ्चाल नगरीके समीप आये। उस समय पाञ्चाल राजाके साथ राजाओंका पुनः संग्राम हुआ। महारथी पुरुयशाने अकेले ही समस्त महाबाहु राजाओंपर विजय पायी। विरोधी राजाओंने भागकर विभिन्न देशोंके मार्गोंका आश्रय लिया। विजयी पाञ्चालराजने भागे हुए राजाओंके कोष, दस करोड़ घोड़े, तीन करोड़ हाथी, एक अरब रथ, दस हजार ऊँट और तीन लाख खच्चरोंको अपने अधिकारमें करके अपनी पुरीमें पहुँचा दिया। वैशाख-धर्मके माहात्म्यसे सब राजा भग्नमनोरथ हो पुरुयशाको कर देनेवाले हो गये और पाञ्चालदेशमें अनुपम सुकाल आ गया। भगवान् विष्णुकी प्रसन्नतासे इस वसुधापर उनका एकछत्र राज्य हुआ और गुरुता, उदारता आदि गुणोंसे युक्त उनके पाँच पुत्र हुए, जो धृष्टकीर्ति, धृष्टकेतु, धृष्टद्युम्न, विजय और चित्रकेतुके नामसे प्रसिद्ध थे। धर्मपूर्वक प्रतिपालित होकर समस्त प्रजा राजाके प्रति अनुरक्त हो गयी। इससे उसी क्षण उन्हें वैशाखमासके प्रभावका निश्चय हो गया। तबसे पाञ्चालराज भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताके लिये वैशाखमासके धर्मोंका निष्कामभावसे बराबर पालन करने लगे। उनके इस धर्मसे सन्तुष्ट होकर भगवान् विष्णुने अक्षय तृतीयाके दिन उन्हें प्रत्यक्ष दर्शन दिया।

## राजा पुरुयशाको भगवान्‌का दर्शन, उनके द्वारा भगवत्स्तुति और भगवान्‌के वरदानसे राजाकी सायुज्य मुक्ति

**श्रुतदेव कहते हैं**—परमात्मा भगवान् नारायण चार भुजाओंसे सुशोभित थे। उन्होंने हाथोंमें शङ्ख, चक्र, गदा और पद्म धारण कर रखे थे। वे पीताम्बर धारण करके वनमालासे विभूषित थे। भगवती

लक्ष्मी तथा एक पार्षदके साथ गरुड़की पीठपर विराजित थे। उनका दुःसह तेज देखकर राजाके नेत्र सहसा मुँद गये। उनके सब अङ्गोंमें रोमाञ्च हो आया और नेत्रोंसे अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी। भगवद्दर्शनके आनन्दमें उनका हृदय सर्वथा डूब गया। उन्होंने तत्काल आगे बढ़कर भगवान्‌को साष्टाङ्ग प्रणाम किया; फिर प्रेमविह्वल नेत्रोंसे विश्वात्मदेव जगदीश्वर श्रीहरिको बहुत देरतक निहारकर उनके चरण धोये और उस जलको अपने मस्तकपर धारण किया। उन्हीं चरणोंकी धोवनरूपा श्रीगङ्गाजी ब्रह्माजीसहित तीनों लोकोंको पवित्र करती हैं। तत्पश्चात् राजाने महान् वैभवसे, बहुमूल्य वस्त्र-आभूषण और चन्दनसे, हार, धूप, दीप तथा अमृतके समान नैवेद्यके निवेदन आदिसे एवं अपने तन, मन, धन और आत्माका समर्पण करके अद्वितीय पुराणपुरुष भगवान् विष्णुका पूजन किया। पूजाके बाद इस प्रकार स्तुति की—

'जो निर्गुण, निरञ्जन एवं प्रजापतियोंके भी अधीश्वर हैं, ब्रह्मा आदि सम्पूर्ण देवता जिनकी वन्दना करते रहते हैं, उन परम पुरुष भगवान् श्रीहरिको मैं प्रणाम करता हूँ। शरणागतोंकी पापराशिका नाश करनेवाले आपके चरणारविन्दोंको परिपक्व योगवाले योगियोंने जो अपने हृदयमें धारण किया है, यह उनके लिये बड़े सौभाग्यकी बात है। बढ़ी हुई भक्तिके द्वारा अपने अन्तःकरण तथा जीवभावको भी आपके चरणोंमें ही चढ़ाकर वे योगीजन उन चरणोंके चिन्तनमात्रसे आपके धामको प्राप्त हुए हैं। विचित्र कर्म करनेवाले! आप स्वतन्त्र परमेश्वरको नमस्कार है। साधु पुरुषोंपर अनुग्रह करनेवाले! आप परमात्माको प्रणाम है। प्रभो! आपकी मायासे मोहित होकर मैं स्त्री और धनरूपी विषयोंमें ही भटकता रहा हूँ, अनर्थमें ही मेरी अर्थदृष्टि हो गयी थी। प्रभो! विश्वमूर्ते! जब जीवपर आप अनन्तशक्ति परमेश्वरकी कृपा होती है, तभी उसे महापुरुषोंका सङ्ग प्राप्त होता है, जिससे यह संसारसमुद्र गोपदके

समान हो जाता है। ईश्वर! जब सत्सङ्ग मिलता है, तभी आपमें मन तथा बुद्धिका अनुराग होता है*। मेरा समस्त राज्य जो मुझसे छिन गया था, वह भी आपका मुझपर महान् अनुग्रह ही हुआ था, ऐसा मैं मानता हूँ। मैं न तो राज्य चाहता हूँ, न पुत्र आदिकी इच्छा रखता हूँ और न कोषकी ही अभिलाषा करता हूँ। अपितु मुनियोंके द्वारा ध्यान करने योग्य जो आपके आराधनीय चरणारविन्द हैं, उन्हींका नित्य सेवन करना चाहता हूँ। देवेश्वर! जगन्निवास! मुझपर प्रसन्न होइये, जिससे आपके चरणकमलोंकी स्मृति बराबर बनी रहे। तथा स्त्री, पुत्र, खजाना एवं आत्मीय कहे जानेवाले सब पदार्थोंमें जो मेरी आसक्ति है, वह सदाके लिये दूर हो जाय। भगवन्! मेरा मन सदा आपके चरणारविन्दोंके चिन्तनमें लगा रहे, मेरी वाणी आपकी दिव्य कथाके निरन्तर वर्णनमें तत्पर हो, मेरे ये दोनों नेत्र आपके श्रीविग्रहके दर्शनमें, कान कथाश्रवणमें तथा रसना आपके भोग लगाये हुए प्रसादके आस्वादनमें प्रवृत्त हो। प्रभो! मेरी नासिका आपके चरणकमलोंकी तथा आपके भक्तजनोंके गन्ध-विलेपन आदिकी सुगन्ध लेनेमें, दोनों हाथ आपके मन्दिरमें झाड़ू देने आदिकी सेवामें, दोनों पैर आपके तीर्थ और कथास्थानकी यात्रा करनेमें तथा मस्तक निरन्तर आपको प्रणाम करनेमें संलग्न रहें। मेरी कामना आपकी उत्तम कथामें और बुद्धि अहर्निश आपका चिन्तन करनेमें तत्पर हो। मेरे घरपर पधारे हुए मुनियोंद्वारा आपकी उत्तम कथाका वर्णन तथा आपकी महिमाका गान होता रहे और इसीमें मेरे दिन बीतें। विष्णो! एक क्षण तथा आधे पलके लिये भी ऐसा

---

* तदैव जीवस्य भवेत्कृपा विभो दुरन्तशक्तेस्तव विश्वमूर्ते।
समागमः स्यान्महतां हि पुंसां भवाम्बुधिर्येन हि गोष्पदायते॥
सत्सङ्गमो देव यदैव भूयात्तर्हीश देवे त्वयि जायते मतिः।
(स्क० पु० वै० वै० मा० १६। १८-१९)

प्रसङ्ग न उपस्थित हो, जो आपकी चर्चासे रहित हो। हरे! मैं परमेष्ठी ब्रह्माका पद, भूतलका चक्रवर्ती राज्य और मोक्ष भी नहीं चाहता, केवल आपके चरणोंकी निरन्तर सेवा चाहता हूँ, जिसके लिये लक्ष्मीजी तथा ब्रह्मा, शंकर आदि देवता भी सदा प्रार्थना किया करते हैं।*

राजाके इस प्रकार स्तुति करनेपर कमलनयन भगवान् विष्णुने प्रसन्न हो मेघके समान गम्भीर वाणीमें इस प्रकार कहा—'राजन्! मैं जानता हूँ—तुम मेरे श्रेष्ठ भक्त हो, कामनारहित और निष्पाप हो। नरेश्वर! मुझमें तुम्हारी दृढ़ भक्ति हो और अन्तमें तुम मेरा सायुज्य प्राप्त करो। तुम्हारे द्वारा किये हुए इस स्तोत्रसे इस पृथ्वीपर जो लोग स्तुति करेंगे, उनके ऊपर सन्तुष्ट हो मैं उन्हें भोग और मोक्ष प्रदान

---

* भूयान्मनः कृष्णपदारविन्दयो-
र्वचांसि ते दिव्यकथानुवर्णने।
नेत्रे ममेमे तव विग्रहेक्षणे
श्रोत्रे कथायां रसना त्वदर्पिते॥
घ्राणं च त्वत्पादसरोजसौरभे
त्वद्भक्तगन्धादिविलेपनेऽसकृत् ।
स्यातां च हस्तौ तव मन्दिरे विभो
सम्मार्जनादौ मम नित्यदैव॥
पादौ विभोः क्षेत्रकथानुसर्पणे
मूर्धा च मे स्यात्तव वन्दनेऽनिशम्॥
कामश्च मे स्यात्तव सत्कथायां
बुद्धिश्च मे स्यात्तव चिन्तनेऽनिशम्॥
दिनानि मे स्युस्तव सत्कथोदयै-
रुद्गीयमानैर्मुनिभिर्गृहागतैः ।
हीनः प्रसङ्गस्तव मे न भूयात्
क्षणं निमेषार्धमथापि विष्णो॥
न पारमेष्ठ्यं न च सार्वभौमं न चापवर्गं स्पृहयामि विष्णो।
त्वत्पादसेवां च सदैव कामये प्रार्थ्यां श्रिया ब्रह्मभवादिभिः सुरैः॥
(स्क० पु० वै० वै० मा० १६। २४—२८)

होनेपर कल्याणमयी गोदावरी नदीमें स्नान करनेके लिये गये। मार्गमें परम पवित्र भीमरथीको पार करनेके बाद दुर्गम, जलशून्य एवं भयङ्कर निर्जन वनमें धूपसे विकल हो गये थे। वैशाखका महीना था और दोपहरका समय। वे किसी वृक्षके नीचे जा बैठे। इसी समय कोई दुराचारी व्याध हाथमें धनुष धारण किये वहाँ आया। ब्राह्मणके दर्शनसे उसकी बुद्धि पवित्र हो गयी और वह इस प्रकार बोला—'मुने! मैं अत्यन्त दुर्बुद्धि एवं पापी हूँ। मेरे ऊपर आपने बड़ी कृपा की है; क्योंकि साधु-महात्मा स्वभावसे ही दयालु होते हैं। कहाँ मैं नीच कुलमें उत्पन्न हुआ व्याध और कहाँ मेरी ऐसी पवित्र बुद्धि—मैं इसे केवल आपका ही उत्तम अनुग्रह मानता हूँ। साधुबाबा! मैं आपका शिष्य हूँ, कृपापात्र हूँ। साधुपुरुषोंका समागम होनेपर मनुष्य फिर कभी दुःखको नहीं प्राप्त होता; अतः आप मुझे अपने पापनाशक वचनोंद्वारा ऐसा उपदेश दीजिये, जिससे संसारबन्धनसे छूटनेकी इच्छा रखनेवाले मनुष्य अनायास ही भवसागरसे पार हो जाते हैं। साधु-पुरुषोंका चित्त सबके प्रति समान होता है। वे सब प्राणियोंके प्रति दयालु होते हैं। उनकी दृष्टिमें न कोई नीच है, न ऊँच; न अपना है, न पराया। मनुष्य सन्तप्त होकर जब-जब गुरुजनोंसे उपाय पूछता है, तब-तब वे उसे संसार-बन्धनसे छुड़ाने वाले ज्ञानका उपदेश करते हैं। जैसे गङ्गाजी मनुष्योंके पापका नाश करनेवाली हैं, उसी प्रकार मूढ़ जनोंका उद्धार करना साधुपुरुषोंका स्वभाव ही माना गया है।'

व्याधके ये वचन सुनकर शङ्खने कहा—'व्याध! यदि तुम कल्याण चाहते हो तो वैशाखमासमें भगवान् विष्णुको प्रसन्न और संसारसमुद्रसे पार करनेवाले जो दिव्य धर्म बताये गये हैं, उनका पालन करो।' मुनिश्रेष्ठ शङ्ख प्याससे बहुत कष्ट पा रहे थे। दोपहरके समय उन्होंने सुन्दर सरोवरमें स्नान किया और युगल वस्त्र धारण करके

मध्याह्नकालकी उपासना पूरी की। फिर देव-पूजा करनेके पश्चात् व्याधके लाये हुए श्रमहारी एवं स्वादिष्ट कैथका फल खाया। जब वे खा-पीकर सुखपूर्वक विराजमान हुए, उस समय व्याधने हाथ जोड़कर कहा—'मुने! किस कर्मसे मेरा तमोमय व्याधकुलमें जन्म हुआ और किससे ऐसी सद्बुद्धि तथा महात्माकी सङ्गति प्राप्त हुई? प्रभो! यदि आप ठीक समझें तो मैंने जो कुछ पूछा है, वह तथा अन्य जानने योग्य बातें भी मुझसे कहिये।'

**शङ्ख बोले**—पूर्वजन्ममें तुम वेदोंके पारङ्गत विद्वान् ब्राह्मण थे। शाकल्य नगरमें तुम्हारा जन्म हुआ था। तुम्हारा गोत्र श्रीवत्स और नाम स्तम्भ था। उस समय तुम बड़े तेजस्वी समझे जाते थे; किंतु आगे चलकर किसी वेश्यामें तुम्हारी आसक्ति हो गयी। उसके सङ्ग-दोषसे तुमने नित्यकर्मोंको त्याग दिया और शूद्रकी भाँति घर आकर रहने लगे। यद्यपि तुम सदाचारशून्य, दुष्ट तथा धर्म-कर्मोंके त्यागी थे, तो भी उस समय तुम्हारी ब्राह्मणी पत्नी कान्तिमतीने वेश्यासहित तुम्हारी सेवा की। वह सदा तुम्हारा प्रिय करनेमें लगी रहती थी। वह तुम दोनोंके पैर धोती, दोनोंकी आज्ञाका पालन करती और दोनोंसे नीचे आसनपर सोती थी। इस प्रकार वेश्यासहित पतिकी सेवा करती हुई उस दुःखिनी ब्राह्मणीका इस भूतलपर बहुत समय बीत गया। एक दिन उसके पतिने मूलीसहित उड़द खाया और तिलमिश्रित निष्पाव भक्षण किया। उस अपथ्य भोजनसे उसका मुँह-पेट चलने लगा और उसे बड़ा भयङ्कर भगन्दर रोग हो गया। वह उस रोगसे दिन-रात जलने लगा। जबतक घरमें धन रहा, तबतक वेश्या भी वहाँ टिकी रही। उसका सारा धन लेकर पीछे उसने उसका घर छोड़ दिया। वेश्या तो क्रूर और निर्दयी होती ही है। उसे छोड़कर दूसरेके पास चली गयी!

तब वह ब्राह्मण रोगसे व्याकुलचित्त हो रोता हुआ अपनी स्त्रीसे बोला—'देवि! मैं वेश्याके प्रति आसक्त और अत्यन्त निष्ठुर मनुष्य हूँ, मेरी रक्षा करो। सुन्दरी! तुम परम पवित्र हो, मैंने तुम्हारा कुछ भी उपकार नहीं किया। कल्याणि! जो पापी एवं निन्दित मनुष्य अपनी विनीत पत्नीका आदर नहीं करता, वह पन्द्रह जन्मोंतक नपुंसक होता है। महाभागे! दिन-रात साधुपुरुष उसकी निन्दा करते हैं। तुम साध्वी और पतिव्रता हो, मैं तुम्हारा अनादर करके पापयोनिमें गिरूँगा। तुम्हारा अनादर करनेसे जो तुम्हारे मनमें क्रोध हुआ होगा, उससे मैं दग्ध हो चुका हूँ।'

इस प्रकार अनुतापयुक्त वचन कहते हुए पतिसे वह पतिव्रता हाथ जोड़कर बोली—'प्राणनाथ! आप मेरे प्रति किये हुए व्यवहारको लेकर दुःख न मानें, लज्जाका अनुभव न करें। मेरा आपके ऊपर तनिक भी क्रोध नहीं है, जिससे आप अपनेको दग्ध हुआ बतलाते हैं। पूर्वजन्ममें किये हुए पाप ही इस जन्ममें दुःखरूप होकर आते हैं। जो उन दुःखोंको धैर्यपूर्वक सहन करती है, वही स्त्री साध्वी मानी जाती है और वही पुरुष श्रेष्ठ समझा जाता है।' वह उत्तम वर्णवाली स्त्री अपने पिता और भाइयोंसे धन माँगकर लायी और उसीसे पतिका पालन करने लगी। उसने अपने स्वामीको साक्षात् क्षीरसागरनिवासी विष्णु ही माना। वह दिन-रात पतिके मल-मूत्र साफ करती और उसके शरीरमें पड़े हुए कष्टदायक कीड़ोंको धीरे-धीरे नखसे खींचकर निकालती थी। ब्राह्मणी न रातमें सोती थी, न दिनमें। अपने स्वामीके दुःखसे सन्तप्त होकर वह दुःखिनी सदा इस प्रकार प्रार्थना किया करती थी—'प्रसिद्ध देवता और पितर मेरे स्वामीकी रक्षा करें, इन्हें रोगहीन एवं निष्पाप कर दें। मैं पतिके आरोग्यके लिये चण्डिकादेवीको भैंसका दही और उत्तम अन्न चढ़ाऊँगी, महात्मा गणेशजीकी प्रसन्नताके लिये मोदक बनवाऊँगी,

दस शनिवारोंको उपवास करूँगी तथा मीठा और घी नहीं खाऊँगी। मेरे पति रोगहीन होकर सौ वर्ष जीवें।'

इस प्रकार वह देवी प्रतिदिन देवताओंसे प्रार्थना करती थी। उन्हीं दिनों कोई देवल नामक महात्मा वहाँ आये। वैशाखमासमें धूपसे पीड़ित हो सायङ्कालके समय उस ब्राह्मणके घरमें उन्होंने पदार्पण किया। ब्राह्मणीने महात्माके चरण धोकर उस जलको मस्तकपर चढ़ाया और धूपसे कष्ट पाये हुए महात्माको पीनेके लिये शर्बत दिया। प्रातःकाल सूर्योदय होनेपर मुनि जैसे आये थे, वैसे चले गये। तदनन्तर थोड़े ही समयमें उस ब्राह्मणको सन्निपात हो गया। ब्राह्मणी सोंठ, मिर्च और पीपल लेकर जब उसके मुँहमें डालने लगी, तब उसने पत्नीकी अँगुली काट ली। उसके दोनों दाँत सहसा सट गये और ब्राह्मणीकी अँगुलीका वह कोमल खण्ड उसके मुँहमें ही रह गया। अँगुली काटकर उस वेश्याका ही चिन्तन करता हुआ वह ब्राह्मण मर गया। तब उसकी पत्नी कान्तिमतीने कङ्कन बेचकर बहुत-सा इन्धन खरीदा और चिता बनाकर वह साध्वी पतिके साथ उसमें जा बैठी। उसने पतिके रोगी शरीरका गाढ़ आलिङ्गन करके उसके साथ अपने-आपको भी चितामें जला दिया। शरीर त्यागकर वह सहसा भगवान् विष्णुके धाममें चली गयी। उसने वैशाखमासमें जो देवल मुनिको शर्बत पिलाया और उनके चरणोदकको शीशपर चढ़ाया था, इससे उसको योगिगम्य परमपदकी प्राप्ति हुई। तुमने अन्तकालमें वेश्याका चिन्तन करते हुए शरीर त्याग किया था, इसलिये इस घोर व्याधके शरीरमें आये हो और हिंसामें आसक्त हो सबको उद्वेगमें डाला करते हो। तुमने वैशाखमासमें मुनिको शर्बत देनेके लिये ब्राह्मणीको अनुमति दी थी, उसी पुण्यसे आज व्याध होनेपर भी तुम्हें सब सुखोंके एकमात्र साधन धर्मविषयक प्रश्न पूछनेके लिये

उत्तम बुद्धि प्राप्त हुई है। तुमने जो सब पापोंको हरनेवाले मुनिके चरणोदकको सिरपर धारण किया था, उसीका यह फल है कि वनमें तुम्हें मेरा सङ्ग मिला है।

## भगवान् विष्णुके स्वरूपका विवेचन, प्राणकी श्रेष्ठता, जीवोंके विभिन्न स्वभावों और कर्मोंका कारण तथा भागवतधर्म

**व्याधने पूछा**—ब्रह्मन्! आपने पहले कहा था कि भगवान् विष्णुकी प्रीतिके लिये कल्याणकारी भागवतधर्मोंका और उनमें भी वैशाखमासमें कर्तव्यरूपसे बताये हुए नियमोंका विशेषरूपसे पालन करना चाहिये। वे भगवान् विष्णु कैसे हैं? उनका क्या लक्षण है? उनकी सत्तामें क्या प्रमाण है तथा वे सर्वव्यापी भगवान् किनके द्वारा जानने योग्य हैं? वैष्णव-धर्म कैसे हैं? और किससे भगवान् श्रीहरि प्रसन्न होते हैं? महामते! मैं आपका किङ्कर, हूँ, मुझे ये सब बातें बताइये।

**व्याधके इस प्रकार पूछनेपर शङ्खने रोग-शोकसे रहित सम्पूर्ण जगत्‌के स्वामी भगवान् नारायणको प्रणाम करके कहा**—व्याध! भगवान् विष्णुका स्वरूप कैसा है, यह सुनो। भगवान् समस्त शक्तियोंके आश्रय, सम्पूर्ण गुणोंकी निधि तथा सबके ईश्वर बताये गये हैं। वे निर्गुण, निष्कल तथा अनन्त हैं। सत्-चित् और आनन्द—यही उनका स्वरूप है। यह जो अखिल चराचर जगत् है, अपने अधीश्वर और आश्रयके साथ नियत रूपसे जिसके वशमें स्थित है, जिससे इसकी उत्पत्ति, पालन, संहार, पुनरावृत्ति तथा नियमन आदि होते हैं, प्रकाश, बन्धन, मोक्ष और जीविका—इन सबकी प्रवृत्ति जहाँसे होती है, वे ही ब्रह्म नामसे प्रसिद्ध भगवान् विष्णु हैं। वे ही विद्वानोंके सम्मान्य सर्वव्यापी परमेश्वर हैं। ज्ञानी पुरुषोंने उन्हींको साक्षात् परब्रह्म कहा है।

वेद, शास्त्र, स्मृति, पुराण, इतिहास, पाञ्चरात्र और महाभारत—सब विष्णुस्वरूप हैं—विष्णुके ही प्रतिपादक हैं। इन्हींके द्वारा महाविष्णु जानने योग्य हैं। वेदवेद्य, सनातनदेव भगवान् नारायणको कोई इन्द्रियोंसे (प्रत्यक्ष प्रमाणद्वारा), अनुमानसे और तर्कसे भी नहीं जान सकता है। उन्हींके दिव्य जन्म-कर्म तथा गुणोंको अपनी बुद्धिके अनुसार जानकर उनके अधीन रहनेवाले जीव-समूह सदा मुक्त होते हैं। यह सम्पूर्ण जगत् प्राणसे उत्पन्न हुआ है, प्राणस्वरूप है, प्राणरूपी सूत्रमें पिरोया हुआ है तथा प्राणसे ही चेष्टा करता है। सबका आधारभूत यह सूत्रात्मा प्राण ही विष्णु है—ऐसा विद्वान् पुरुष कहते हैं।

**व्याधने पूछा**—ब्रह्मन्! जीवोंमें यह सूत्रात्मा प्राण सबसे श्रेष्ठ किस प्रकार है?

**शङ्खने कहा**—व्याध! पूर्वकालमें सनातनदेव भगवान् नारायणने ब्रह्मा आदि देवताओंकी सृष्टि करके कहा—'देवताओ! मैं तुम्हारे सम्राट्के पदपर ब्रह्माजीकी स्थापना करता हूँ, यही तुम सबके स्वामी हैं। अब तुम लोगोंमें जो सबसे अधिक शक्तिशाली हो, उसे तुम स्वयं ही युवराजके पदपर प्रतिष्ठित करो।' भगवान्के इस प्रकार कहनेपर इन्द्र आदि सब देवता आपसमें विवाद करते हुए कहने लगे—'मैं युवराज होऊँगा, मैं होऊँगा।' किसीने सूर्यको श्रेष्ठ बताया और किसीने इन्द्रको। किन्हींकी दृष्टिमें कामदेव ही सबसे श्रेष्ठ थे। कुछ लोग मौन ही खड़े रहे। आपसमें कोई निर्णय होता न देखकर वे भगवान् नारायणके पास पूछनेके लिये गये और प्रणाम करके हाथ जोड़कर बोले—'महाविष्णो! हम सबने अच्छी तरह विचार कर लिया, किंतु हम सबमें श्रेष्ठ कौन है, यह हम अभीतक किसी प्रकार निश्चय न कर सके। अब आप ही निर्णय कीजिये।' तब भगवान् विष्णुने हँसते हुए कहा—'इस विराट् ब्रह्माण्डरूपी शरीरसे

जिसके निकल जानेपर यह गिर जायगा और जिसके प्रवेश करनेपर पुनः उठकर खड़ा हो जायगा, वही देवता सबसे श्रेष्ठ है।'

भगवान्‌के ऐसा कहनेपर सब देवताओंने कहा—'अच्छा ऐसा ही हो।' तब सबसे पहले देवेश्वर जयन्त विराट् शरीरके पैरसे बाहर निकला। उसके निकलनेसे उस शरीरको लोग पङ्गु कहने लगे; परंतु शरीर गिर न सका। यद्यपि वह चल नहीं पाता था तो भी सुनता, पीता, बोलता, सूँघता और देखता हुआ पूर्ववत् स्थिर रहा। तत्पश्चात् गुह्यदेशसे दक्ष प्रजापति निकलकर अलग हो गये। तब लोगोंने उसे नपुंसक कहा; किंतु उस समय भी वह शरीर गिर न सका। उसके बाद विराट् शरीरके हाथसे सब देवताओंके राजा इन्द्र बाहर निकले। उस समय भी शरीरपात नहीं हुआ। विराट् पुरुषको सब लोग हस्तहीन (लूला) कहने लगे। इसी प्रकार नेत्रोंसे सूर्य निकले। तब लोगोंने उसे अंधा और काना कहा। उस समय भी शरीरका पतन नहीं हुआ। तदनन्तर नासिकासे अश्विनीकुमार निकले, किंतु शरीर नहीं गिर सका। केवल इतना ही कहा जाने लगा कि यह सूँघ नहीं सकता। कानसे अधिष्ठातृ देवियाँ दिशाएँ निकलीं। उस समय लोग उसे बधिर कहने लगे; परंतु उसकी मृत्यु नहीं हुई। तत्पश्चात् जिह्वासे वरुणदेव निकले। तब लोगोंने यही कहा कि यह पुरुष रसका अनुभव नहीं कर सकता; किंतु देहपात नहीं हुआ। तदनन्तर वाक्-इन्द्रियसे उसके स्वामी अग्निदेव निकले। उस समय उसे गूँगा कहा गया; किंतु शरीर नहीं गिरा। फिर अन्तःकरणसे बोधस्वरूप रुद्र देवता अलग हो गये। उस दशामें लोगोंने उसे जड कहा; किंतु शरीरपात नहीं हुआ। सबके अन्तमें उस शरीरसे प्राण निकला; तब लोगोंने उसे मरा हुआ बतलाया। इससे देवताओंके मनमें बड़ा विस्मय हुआ। वे बोले—'हम लोगोंमेंसे जो भी इस शरीरमें प्रवेश करके इसे पूर्ववत्

उठा देगा—जीवित कर देगा, वही युवराज होगा।' ऐसी प्रतिज्ञा करके सब क्रमशः उस शरीरमें प्रवेश करने लगे। जयन्तने पैरोंमें प्रवेश किया; किंतु वह शरीर नहीं उठा। प्रजापति दक्षने गुह्य इन्द्रियोंमें प्रवेश किया; फिर भी शरीर नहीं उठा। इन्द्रने हाथमें, सूर्यने नेत्रोंमें, दिशाओंने कानमें, वरुणदेवने जिह्वामें, अश्विनीकुमारने नासिकामें, अग्निने वाक्-इन्द्रियमें तथा रुद्रने अन्तःकरणमें प्रवेश किया; किंतु वह शरीर नहीं उठा, नहीं उठा। सबके अन्तमें प्राणने प्रवेश किया, तब वह शरीर उठकर खड़ा हो गया। तब देवताओंने प्राणको ही सब देवताओंमें श्रेष्ठ निश्चित किया। बल, ज्ञान, धैर्य, वैराग्य और जीवनशक्तिमें प्राणको ही सर्वाधिक मानकर देवताओंने उसीको युवराज पदपर अभिषिक्त किया। इस उत्कृष्ट स्थितिके कारण प्राणको उक्थ कहा गया है। अतः समस्त चराचर जगत् प्राणात्मक है। जगदीश्वर प्राण अपने पूर्ण एवं बलशाली अंशोंद्वारा सर्वत्र परिपूर्ण है। प्राणहीन जगत्का अस्तित्व नहीं है। प्राणहीन कोई भी वस्तु वृद्धिको नहीं प्राप्त होती। इस जगत्में किसी भी प्राणहीन वस्तुकी स्थिति नहीं है; इस कारण प्राण सब जीवोंमें श्रेष्ठ, सबका अन्तरात्मा और सर्वाधिक बलशाली सिद्ध हुआ। इसलिये प्राणोपासक प्राणको ही सर्वश्रेष्ठ कहते हैं। प्राण सर्वदेवात्मक है, सब देवता प्राणमय हैं। वह भगवान् वासुदेवका अनुगामी तथा सदा उन्हींमें स्थित है। मनीषी पुरुष प्राणको महाविष्णुका बल बतलाते हैं। महाविष्णुके माहात्म्य और लक्षणको इस प्रकार जानकर मनुष्य पूर्वबन्धनका अनुसरण करनेवाले अज्ञानमय लिङ्गको उसी प्रकार त्याग देता है, जैसे सर्प पुरानी केंचुलको। लिङ्गदेहका त्याग करके वह परम पुरुष अनामय भगवान् नारायणको प्राप्त होता है।

**शङ्ख मुनिकी कही हुई यह बात सुनकर व्याधने पुनः पूछा—** ब्रह्मन्! यह प्राण जब इतना महान् प्रभावशाली और इस सम्पूर्ण जगत्का

गुरु एवं ईश्वर है, तब लोकमें इसकी महिमा क्यों नहीं प्रसिद्ध हुई?

**शङ्खने कहा**—पहलेकी बात है। प्राण अश्वमेध यज्ञोंद्वारा अनामय भगवान् नारायणका यजन करनेके लिये गङ्गाके तटपर प्रसन्नतापूर्वक गया। अनेक मुनिगणोंके साथ उसने फलोंके द्वारा पृथ्वीका शोधन किया। उस समय वहाँ समाधिमें स्थित हुए महात्मा कण्व बाँबीकी मिट्टीमें छिपे हुए बैठे थे। हल जोतनेपर बाँबी गिर जानेसे वे बाहर निकल आये और क्रोधपूर्वक देखकर सामने खड़े हुए महाप्रभु प्राणको शाप देते हुए बोले—'देवेश्वर! आजसे लेकर आपकी महिमा तीनों लोकोंमें—विशेषतः भूलोकमें प्रसिद्ध न होगी। हाँ, आपके अवतार तीनों लोकोंमें विख्यात होंगे।'

व्याध! तभीसे संसारमें महाप्रभु प्राणकी महिमा प्रसिद्ध नहीं हुई। भूलोकमें तो उसकी ख्याति विशेष रूपसे नहीं।

**व्याधने पूछा**—महामते! भगवान् विष्णुके रचे हुए करोड़ों एवं सहस्रों सनातन जीव नाना मार्गपर चलने और भिन्न-भिन्न कर्म करनेवाले क्यों दिखायी देते हैं? इन सबका एक-सा स्वभाव क्यों नहीं है? यह सब विस्तारपूर्वक बतलाइये?

**शङ्खने कहा**—रजोगुण, तमोगुण और सत्त्वगुणके भेदसे तीन प्रकारके जीवसमुदाय होते हैं। उनमें राजस स्वभाववाले जीव राजस, कर्म, तमोगुणी जीव तामस कर्म तथा सात्त्विक स्वभाववाले जीव सात्त्विक कर्म करते हैं। कभी-कभी संसारमें इनके गुणोंमें विषमता भी होती है, उसीसे वे ऊँच और नीच कर्म करते हुए तदनुसार फलके भागी होते हैं। कभी सुख, कभी दुःख और कभी दोनोंको ही ये मनुष्य गुणोंकी विषमतासे प्राप्त करते हैं। प्रकृतिमें स्थित होनेपर जीव इन तीनों गुणोंसे बँधते हैं। गुण और कर्मोंके अनुसार उनके कर्मोंका भिन्न-भिन्न फल होता है। ये जीव फिर गुणोंके अनुसार ही प्रकृतिको

प्राप्त होते हैं। प्रकृतिमें स्थित हुए प्राकृतिक प्राणी गुण और कर्मसे व्याप्त होकर प्राकृतिक गतिको प्राप्त होते हैं। तमोगुणी जीव तामसी वृत्तिसे ही जीवननिर्वाह करते और सदा महान् दुःखमें डूबे रहते हैं। उनमें दया नहीं होती, वे बड़े क्रूर होते हैं और लोकमें सदा द्वेषसे ही उनका जीवन चलता है। राक्षस और पिशाच आदि तमोगुणी जीव हैं, जो तामसी गतिको प्राप्त होते हैं। राजसी लोगोंकी बुद्धि मिश्रित होती है। वे पुण्य तथा पाप दोनों करते हैं; पुण्यसे स्वर्ग पाते और पापसे यातना भोगते हैं। इसी कारण ये मन्दभाग्य पुरुष बार-बार इस संसारमें आते-जाते रहते हैं। जो सात्त्विक स्वभावके मनुष्य हैं, वे धर्मशील, दयालु, श्रद्धालु, दूसरोंके दोष न देखनेवाले तथा सात्त्विक वृत्तिसे जीवननिर्वाह करनेवाले होते हैं। इसीलिये भिन्न-भिन्न कर्म करनेवाले जीवोंके एक-दूसरेसे पृथक् अनेक प्रकारके भाव हैं; उनके गुण और कर्मके अनुसार महाप्रभु विष्णु अपने स्वरूपकी प्राप्ति करानेके लिये उनसे कर्मोंका अनुष्ठान करवाते हैं। भगवान् विष्णु पूर्णकाम हैं, उनमें विषमता और निर्दयता आदि दोष नहीं हैं। वे समभावसे ही सृष्टि, पालन और संहार करते हैं। सब जीव अपने गुणसे ही कर्मफलके भागी होते हैं। जैसे माली बगीचेमें लगे हुए सब वृक्षोंको समानरूपसे सींचता है और एक ही कूआँके जलसे सभी वृक्ष पलते हैं तथापि वे पृथक्-पृथक् स्वभावको प्राप्त होते हैं। बगीचा लगानेवालेमें किसी प्रकार विषमता और निर्दयताका दोष नहीं होता।

देवाधिदेव भगवान् विष्णुका एक निमेष ब्रह्माजीके एक कल्पके समान माना गया है। ब्रह्मकल्पके अन्तमें देवाधिदेवशिरोमणि भगवान् विष्णुका उन्मेष होता है अर्थात् वे आँख खोलकर देखते हैं। जबतक निमेष रहता है तबतक प्रलय है। निमेषके अन्तमें भगवान् अपने उदरमें स्थित सम्पूर्ण लोकोंकी सृष्टि करनेकी इच्छा करते हैं। सृष्टिकी

इच्छा होनेपर भगवान् अपने उदरमें स्थित हुए अनेक प्रकारके जीवसमूहोंको देखते हैं। उनकी कुक्षिमें रहते हुए भी सम्पूर्ण जीव उनके ध्यानमें स्थित होते हैं। अर्थात् कौन जीव कहाँ किस रूपमें है, इसकी स्मृति भगवान्को सदा बनी रहती है। भगवान् विष्णु चतुर्व्यूहस्वरूप हैं। वे उन्मेषकालके प्रथम भागमें ही चतुर्व्यूह रूपमें प्रकट हो व्यूहगामी वासुदेवस्वरूपसे महात्माओंमेंसे किसीको सायुज्य-साधक तत्त्वज्ञान, किसीको सारूप्य, किसीको सामीप्य और किसीको सालोक्य प्रदान करते हैं। फिर अनिरुद्ध-मूर्तिके वशमें स्थित हुए सम्पूर्ण लोकोंको वे देखते हैं, देखकर उन्हें प्रद्युम्न-मूर्तिके वशमें देते हैं और सृष्टि करनेका सङ्कल्प करते हैं। भगवान् श्रीहरिने पूर्ण गुणवाले वासुदेव आदि चार व्यूहोंके द्वारा क्रमशः माया, जया, कृति और शान्तिको स्वयं स्वीकार किया है। उनसे संयुक्त चतुर्व्यूहात्मक महाविष्णुने पूर्णकाम होकर भी भिन्न-भिन्न कर्म और वासनावाले लोकोंकी सृष्टि की है। उन्मेषकालका अन्त होनेपर भगवान् विष्णु पुनः योगमायाका आश्रय लेकर व्यूहगामी सङ्कर्षण स्वरूपसे इस चराचर जगत्का संहार करते हैं। इस प्रकार महात्मा विष्णुका यह सब चिन्तन करनेयोग्य कार्य बतलाया गया, जो ब्रह्मा आदि योगसे सम्पन्न पुरुषोंके लिये भी अचिन्त्य एवं दुर्विभाव्य है।

**व्याधने पूछा**—मुने! भागवतधर्म कौन-कौन-से हैं और किनके द्वारा भगवान् विष्णु प्रसन्न होते हैं?

**शङ्खने कहा**—जिससे अन्तःकरणकी शुद्धि होती है, जो साधुपुरुषोंका उपकार करनेवाला है तथा जिसकी किसीने भी निन्दा नहीं की है, उसे तुम सात्त्विक धर्म समझो। वेदों और स्मृतियोंमें बताये हुए धर्मका यदि निष्कामभावसे पालन किया जाय तथा वह लोकसे विरुद्ध न हो, तो उसे भी सात्त्विक धर्म जानना चाहिये।

वर्ण और आश्रम विभागके अनुसार जो चार-चार प्रकारके धर्म हैं, वे सभी नित्य, नैमित्तिक और काम्य भेदसे तीन प्रकारके माने गये हैं। वे सभी अपने-अपने वर्ण और आश्रमके धर्म जब भगवान् विष्णुको समर्पित कर दिये जाते हैं, तब उन्हें सात्त्विक धर्म जानना चाहिये। वे सात्त्विक धर्म ही मङ्गलमय भागवतधर्म हैं। अन्यान्य देवताओंकी प्रीतिके लिये सकामभावसे किये जानेवाले धर्म राजस माने गये हैं। यक्ष, राक्षस, पिशाच आदिके उद्देश्यसे किये जानेवाले लोकनिष्ठुर, हिंसात्मक निन्दित कर्मोंको तामस धर्म कहा गया है। जो सत्त्वगुणमें स्थित हो भगवान् विष्णुको प्रसन्न करनेवाले शुभकारक सात्त्विक धर्मोंका सदा निष्कामभावसे अनुष्ठान करते हैं, वे भागवत (विष्णुभक्त) माने गये हैं। जिनका चित्त सदा भगवान् विष्णुमें लगा रहता है, जिनकी जिह्वापर भगवान्‌का नाम है और जिनके हृदयमें भगवान्‌के चरण विराजमान हैं, वे भागवत कहे गये हैं। जो सदाचारपरायण, सबका उपकार करनेवाले और सदैव ममतासे रहित हैं, वे भागवत माने गये हैं। जिनका शास्त्रमें, गुरुमें और सत्कर्मोंमें विश्वास है तथा जो सदा भगवान् विष्णुके भजनमें लगे रहते हैं, उन्हें भागवत कहा गया है। उन भगवद्भक्त महात्माओंको जो धर्म नित्य मान्य हैं, जो भगवान् विष्णुको प्रिय हैं तथा वेदों और स्मृतियोंमें जिनका प्रतिपादन किया गया है, वे ही सनातनधर्म माने गये हैं*। जिनका चित्त विषयोंमें आसक्त है, उनका सब देशोंमें घूमना, सब कर्मोंको देखना और सब धर्मोंको सुनना कुछ भी लाभकारक नहीं है। साधु-पुरुषोंका मन साधु-महात्माओंके दर्शनसे पिघल जाता है। निष्काम पुरुषोंद्वारा श्रद्धापूर्वक जिसका सेवन किया जाता है तथा जो भगवान् विष्णुको सदा ही

* तेषां हि संमता धर्माः शाश्वता विष्णुवल्लभाः।
श्रुतिस्मृत्युदिता ये च ते धर्माः शाश्वता मताः॥ (स्क० पु० वै० वै० मा० २०। ६३)

प्रिय है, वह भागवतधर्म माना गया है।

भगवान् विष्णुने क्षीरसागरमें सबके हितकी कामनासे भगवती लक्ष्मीजीको दहीसे निकाले हुए मक्खनकी भाँति सब शास्त्रोंके सारभूत वैशाख-धर्मका उपदेश किया है। जो दम्भरहित होकर वैशाखमासके व्रतका अनुष्ठान करता है, वह सब पापोंसे रहित हो सूर्यमण्डलको भेदकर भगवान् विष्णुके योगिदुर्लभ परम धाममें जाता है।

इस प्रकार द्विजश्रेष्ठ शङ्खके द्वारा भगवान् विष्णुके प्रिय वैशाखमासके धर्मोंका वर्णन होते समय वह पाँच शाखाओंवाला वटवृक्ष तुरंत ही भूमिपर गिर पड़ा। उसके खोखलेमें एक विकराल अजगर रहता था, वह भी पापयोनिमय शरीरको त्यागकर तत्काल दिव्यस्वरूप हो मस्तक झुकाये शङ्खके सामने हाथ जोड़कर खड़ा हो गया।

## वैशाखमासके माहात्म्य-श्रवणसे एक सर्पका उद्धार और वैशाख-धर्मके पालन तथा रामनाम-जपसे व्याधका वाल्मीकि होना

**श्रुतदेव कहते हैं**—तदनन्तर व्याधसहित शङ्ख मुनिने विस्मित होकर पूछा—'तुम कौन हो? और तुम्हें यह दशा कैसे प्राप्त हुई थी?'

**सर्पने कहा**—पूर्वजन्ममें मैं प्रयागका एक ब्राह्मण था। मेरे पिताका नाम कुशीद मुनि और मेरा नाम रोचन था। मैं धनाढ्य, अनेक पुत्रोंका पिता और सदैव अभिमानसे दूषित था। बैठे-बैठे बहुत बकवाद किया करता था। बैठना, सोना, नींद लेना, मैथुन करना, जुआ खेलना, लोगोंकी बातें करना और सूद लेना, यही मेरे व्यापार थे। मैं लोकनिन्दासे डरकर नाममात्रके शुभ कर्म करता था; सो भी दम्भके साथ। उन कर्मोंमें मेरी श्रद्धा नहीं थी। इस प्रकार मुझ दुष्ट और दुर्बुद्धिके कितने ही वर्ष बीत गये। तदनन्तर इसी वैशाखमासमें जयन्त नामक

ब्राह्मण प्रयागक्षेत्रमें निवास करनेवाले पुण्यात्मा द्विजोंको वैशाखमासके धर्म सुनाने लगे। स्त्री, पुरुष, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र—सहस्रों श्रोता प्रात:काल स्नान करके अविनाशी भगवान् विष्णुकी पूजाके पश्चात् प्रतिदिन जयन्तकी कही हुई कथा सुनते थे। वे सभी पवित्र एवं मौन होकर उस भगवत्कथामें अनुरक्त रहते थे। एक दिन मैं भी कौतूहलवश देखनेकी इच्छासे श्रोताओंकी उस मण्डलीमें जा बैठा। मेरे मस्तकपर पगड़ी बँधी थी। इसलिये मैंने नमस्कारतक नहीं किया और संसारी वार्तालापमें अनुरक्त हो कथामें विघ्न डालने लगा। कभी मैं कपड़े फैलाता, कभी किसीकी निन्दा करता और कभी जोरसे हँस पड़ता था। जबतक कथा समाप्त हुई, तबतक मैंने इसी प्रकार समय बिताया। तत्पश्चात् दूसरे दिन सन्निपात रोगसे मेरी मृत्यु हो गयी। मैं तपाये हुए शीशेके जलसे भरे हुए हलाहल नरकमें डाल दिया गया और चौदह मन्वन्तरोंतक वहाँ यातना भोगता रहा। उसके बाद चौरासी लाख योनियोंमें क्रमश: जन्म लेता और मरता हुआ मैं इस समय क्रूर तमोगुणी सर्प होकर इस वृक्षके खोखलेमें निवास करता था। मुने! सौभाग्यवश आपके मुखारविन्दसे निकली हुई अमृतमयी कथाको मैंने अपने दोनों नेत्रोंसे सुना, जिससे तत्काल मेरे सारे पाप नष्ट हो गये। मुनिश्रेष्ठ! मैं नहीं जानता कि आप किस जन्मके मेरे बन्धु हैं; क्योंकि मैंने कभी किसीका उपकार नहीं किया है तो भी मुझपर आपकी कृपा हुई। जिनका चित्त समान है, जो सब प्राणियोंपर दया करनेवाले साधुपुरुष हैं, उनमें परोपकारकी स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है। उनकी कभी किसीके प्रति विपरीत बुद्धि नहीं होती। आज आप मुझपर कृपा कीजिये, जिससे मेरी बुद्धि धर्ममें लगे। देवाधिदेव भगवान् विष्णुकी मुझे कभी विस्मृति न हो और साधु चरित्रवाले महापुरुषोंका सदा ही सङ्ग प्राप्त हो। जो लोग मदसे अंधे हो रहे हों, उनके लिये एकमात्र

दरिद्रता ही उत्तम अञ्जन है। इस प्रकार नाना भाँतिसे स्तुति करके रोचनने बार-बार शङ्खको प्रणाम किया और हाथ जोड़कर चुपचाप उनके आगे खड़ा हो गया।

**तब शङ्खने कहा**—ब्रह्मन्! तुमने वैशाखमास और भगवान् विष्णुका माहात्म्य सुना है, इससे उसी क्षण तुम्हारा सारा बन्धन नष्ट हो गया। द्विजश्रेष्ठ! परिहास, भय, क्रोध, द्वेष, कामना अथवा स्नेहसे भी एक बार भगवान् विष्णुके पापहारी नामका उच्चारण करके बड़े भारी पापी भी रोग-शोकरहित वैकुण्ठधाममें चले जाते हैं। फिर जो श्रद्धासे युक्त हो क्रोध और इन्द्रियोंको जीतकर सबके प्रति दयाभाव रखते हुए भगवान्‌की कथा सुनते हैं, वे उनके लोकमें जाते हैं, इस विषयमें तो कहना ही क्या है*। कितने ही मनुष्य केवल भक्तिके बलसे एकमात्र भगवान्‌की कथा-वार्तामें तत्पर हो अन्य सब धर्मोंका त्याग कर देनेपर भी भगवान् विष्णुके परमपदको पा लेते हैं। भक्तिसे अथवा द्वेष आदिसे भी जो कोई भगवान्‌की भक्ति करते हैं, वे भी प्राणहारिणी पूतनाकी भाँति परमपदको प्राप्त होते हैं। सदा महात्मा पुरुषोंका सङ्ग और उन्हींके विषयमें वार्तालाप करना चाहिये। रचना शिथिल होनेपर भी जिसके प्रत्येक श्लोकमें भगवान्‌के सुयशसूचक नाम हैं, वही वाणी जनसमुदायकी पापराशिका नाश करनेवाली होती है; क्योंकि साधुपुरुष उसीको सुनते, गाते और कहते हैं। जो भगवान् किसीसे कष्टसाध्य सेवा नहीं चाहते, आसन आदि विशेष उपकरणोंकी इच्छा नहीं रखते तथा सुन्दर रूप और जवानी नहीं चाहते, अपितु एक बार भी स्मरण कर लेनेपर अपना परम प्रकाशमय वैकुण्ठधाम

---

* हास्याद्भयात्तथा क्रोधाद्द्वेषात्कामादथापि वा। स्नेहाद्वा सकृदुच्चार्य विष्णोर्नामाघहारि च॥ पापिष्ठा अपि गच्छन्ति विष्णोर्धाम निरामयम्। किमु तच्छ्रद्धया युक्ता जितक्रोधा जितेन्द्रियाः॥ दयावन्तः कथां श्रुत्वा गच्छन्तीति द्विजोत्तम। (स्क० पु० वै० वै० मा० २१। ३६—३८)

दे डालते हैं, उन दयालु भगवान्‌को छोड़कर मनुष्य किसकी शरणमें जाय। उन्हीं रोग-शोकसे रहित, चित्तद्वारा चिन्तन करनेयोग्य, अव्यक्त, दयानिधान, भक्तवत्सल भगवान् नारायणकी शरणमें जाओ। महामते! वैशाखमासमें कहे हुए इन सब धर्मोंका पालन करो, उससे प्रसन्न होकर भगवान् जगन्नाथ तुम्हारा कल्याण करेंगे।

ऐसा कहकर शङ्ख मुनि व्याधकी ओर देखकर चुप हो रहे। तब उस दिव्य पुरुषने पुनः इस प्रकार कहा—'मुने! मैं धन्य हूँ, आप-जैसे दयालु महात्माने मुझपर अनुग्रह किया है। मेरी कुत्सित योनि दूर हो गयी और अब मैं परमगतिको प्राप्त हो रहा हूँ, यह मेरे लिये सौभाग्यकी बात है।' यों कहकर दिव्य पुरुषने शङ्ख मुनिकी परिक्रमा की तथा उनकी आज्ञा लेकर वह दिव्यलोकको चला गया। तदनन्तर सन्ध्या हो गयी। व्याधने शङ्खको अपनी सेवासे सन्तुष्ट किया और उन्होंने सायंकालकी सन्ध्योपासना करके शेष रात्रि व्यतीत की। भगवान्‌के लीलावतारोंकी कथा-वार्ताद्वारा रात व्यतीत करके शङ्ख मुनि ब्राह्ममुहूर्तमें उठे और दोनों पैर धोकर मौनभावसे तारक ब्रह्मका ध्यान करने लगे। तत्पश्चात् शौचादि क्रियासे निवृत्त होकर वैशाखमासमें सूर्योदयसे पहले स्नान किया और सन्ध्या-तर्पण आदि सब कर्म समाप्त करके उन्होंने हर्षयुक्त हृदयसे व्याधको बुलाया। बुलाकर उसे 'राम' इस दो अक्षरवाले नामका उपदेश दिया, जो वेदसे भी अधिक शुभकारक है। उपदेश देकर इस प्रकार कहा—'भगवान् विष्णुका एक-एक नाम भी सम्पूर्ण वेदोंसे अधिक महत्त्वशाली माना गया है। ऐसे अनन्त नामोंसे अधिक है भगवान् विष्णुका सहस्रनाम। उस सहस्रनामके समान राम-नाम माना गया है*। इसलिये व्याध! तुम निरन्तर

---

* विष्णोरेकैकनामापि सर्ववेदाधिकं मतम्। तेभ्यश्चानन्तनामभ्योऽधिकं नाम्नां सहस्रकम्॥
तादृङ्नामसहस्रेण रामनामसमं मतम्। (स्क० पु० वै० वै० मा० २१। ५३-५४)

रामनामका जप करो और मृत्युपर्यन्त मेरे बताये हुए धर्मोंका पालन करते रहो। इस धर्मके प्रभावसे तुम्हारा वाल्मीकि ऋषिके घर जन्म होगा और तुम इस पृथ्वीपर वल्मीकि नामसे प्रसिद्ध होओगे।'

व्याधको ऐसा आदेश देकर मुनिवर शङ्खने दक्षिण दिशाको प्रस्थान किया। व्याधने भी शङ्ख मुनिकी परिक्रमा करके बार-बार उनके चरणोंमें प्रणाम किया और जबतक वे दिखायी दिये, तबतक उन्हींकी ओर देखता रहा। फिर उसने अति योग्य वैशाखोक्त धर्मोंका पालन किया। जंगली कैथ, कटहल, जामुन और आम आदिके फलोंसे राह चलनेवाले थके-माँदे पथिकोंको वह भोजन कराता था। जूता, चन्दन, छाता, पंखा आदिके द्वारा तथा बालूके बिछावन और छाया आदिकी व्यवस्थासे पथिकोंके परिश्रम और पसीनेका निवारण करता था। प्रातःकाल स्नान करके दिन-रात राम-नामका जप करता था। इस प्रकार धर्मानुष्ठान करके वह दूसरे जन्ममें वल्मीकका पुत्र हुआ। उस समय वह महायशस्वी वाल्मीकिके नामसे विख्यात हुआ। उन्हीं वाल्मीकिजीने अपनी मनोहर प्रबन्ध-रचनाद्वारा संसारमें दिव्य राम-कथाको प्रकाशित किया, जो समस्त कर्म-बन्धनोंका उच्छेद करनेवाली है।

मिथिलापते! देखो, वैशाखका माहात्म्य कैसा ऐश्वर्य प्रदान करनेवाला है, जिससे एक व्याध भी परम दुर्लभ ऋषिभावको प्राप्त हो गया। यह रोमाञ्चकारी उपाख्यान सब पापोंका नाश करनेवाला है। जो इसे सुनता और सुनाता है, वह पुनः माताके स्तनका दूध पीनेवाला नहीं होता।
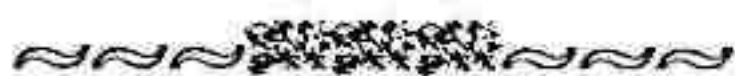
## धर्मवर्णकी कथा, कलिकी अवस्थाका वर्णन, धर्मवर्ण और पितरोंका संवाद एवं वैशाखकी अमावास्याकी श्रेष्ठता

**मिथिलापतिने पूछा**—ब्रह्मन्! इस वैशाखमासमें कौन-कौन-सी तिथियाँ पुण्यदायिनी हैं?

**श्रुतदेवजी बोले**—सूर्यके मेष राशिपर स्थित होनेपर वैशाखमासमें तीसों तिथियाँ पुण्यदायिनी मानी गयी हैं। एकादशीमें किया हुआ पुण्य कोटिगुना होता है। उसमें स्नान, दान, तपस्या, होम, देवपूजा, पुण्यकर्म एवं कथाका श्रवण किया जाय, तो वह तत्काल मुक्ति देनेवाला है। जो रोग आदिसे ग्रस्त और दरिद्रतासे पीड़ित हो, वह मनुष्य इस पुण्यमयी कथाको सुनकर कृतकृत्य होता है। वैशाखमास मनसे सेवन करने योग्य है; क्योंकि वह समय उत्तम गुणोंसे युक्त है। दरिद्र, धनाढ्य, पङ्गु, अन्धा, नपुंसक, विधवा, साधारण स्त्री, पुरुष, बालक, युवा, वृद्ध तथा रोगसे पीड़ित मनुष्य ही क्यों न हो, वैशाखमासका धर्म सबके लिये अत्यन्त सुखसाध्य है। परम पुण्यमय वैशाखमासमें जब सूर्य मेश राशिमें स्थित हों, तब पापनाशिनी अमावास्या कोटि गयाके समान फल देनेवाली होती है। राजन्! जब पृथ्वीपर राजर्षि सावर्णिका शासन था, उस समय तीसवें कलियुगके अन्तमें सभी धर्मोंका लोप हो चुका था। उसी समय आनर्त देशमें धर्मवर्ण नामसे विख्यात एक ब्राह्मण थे। मुनिवर धर्मवर्णने उस कलियुगमें ही किसी समय महात्मा मुनियोंके सत्रयागमें सम्मिलित होनेके लिये पुष्कर क्षेत्रकी यात्रा की। वहाँ कुछ व्रतधारी महर्षियोंने कलियुगकी प्रशंसा करते हुए इस प्रकार कहा था—'सत्ययुगमें भगवान् विष्णुको सन्तुष्ट करनेवाला जो पुण्य एक वर्षमें साध्य है, वही त्रेतामें

एक मासमें और द्वापरमें पन्द्रह दिनोंमें साध्य होता है; परंतु कलियुगमें भगवान् विष्णुका स्मरण कर लेनेसे ही उससे दसगुना पुण्य होता है*। कलिमें बहुत थोड़ा पुण्य भी कोटिगुना होता है। जो एक बार भी भगवान्‌का नाम लेकर दयादान करता है और दुर्भिक्षमें अन्न देता है, वह निश्चय ही ऊर्ध्वलोकमें गमन करता है।'

यह सुनकर देवर्षि नारद हँसते हुए उन्मत्तके समान नृत्य करने लगे। सभासदोंने पूछा—'नारदजी! यह क्या बात है?' तब बुद्धिमान् नारदजीने हँसते हुए उन सबको उत्तर दिया—'आप लोगोंका कथन सत्य है। इसमें सन्देह नहीं कि कलियुगमें स्वल्प कर्मसे भी महान् पुण्यका साधन किया जाता है तथा क्लेशोंका नाश करनेवाले भगवान् केशव स्मरणमात्रसे ही प्रसन्न हो जाते हैं। तथापि मैं आप लोगोंसे यह कहता हूँ कि कलियुगमें ये दो बातें दुर्घट हैं—शिश्नेन्द्रियका निग्रह और जिह्वाको वशमें रखना। ये दोनों कार्य जो सिद्ध कर ले, वही नारायणस्वरूप है। अतः कलियुगमें आपको यहाँ नहीं ठहरना चाहिये।'

नारदजीकी यह बात सुनकर उत्तम व्रतका पालन करनेवाले महर्षि सहसा यज्ञको समाप्त करके सुखपूर्वक चले गये। धर्मवर्णने भी वह बात सुनकर भूलोकको त्याग देनेका विचार किया। उन्होंने ब्रह्मचर्य-व्रत धारण करके दण्ड और कमण्डलु हाथमें लिया और जटा-वल्कलधारी होकर वे कलियुगके अनाचारी पुरुषोंको देखनेके लिये घर छोड़कर चल दिये। उनके मनमें बड़ा विस्मय हो रहा था। उन्होंने देखा, प्रायः मनुष्य पापाचारमें प्रवृत्त हो बड़े भयङ्कर एवं दुष्ट हो गये हैं। ब्राह्मण पाखण्डी हो चले हैं। शूद्र संन्यास धारण करते हैं। पत्नी अपने पतिसे द्वेष रखती है। शिष्य गुरुसे वैर करता

* कृते यद् वत्सरात्साध्यं पुण्यं माधवतोषणम्। त्रेतायां मासतः साध्यं द्वापरे पक्षतो नृप॥
तस्माद्दशगुणं पुण्यं कलौ विष्णुस्मृतेर्भवेत्। (स्क० पु० वै० वै० मा० २२। २०-२१)

है। सेवक स्वामीके और पुत्र पिताके घातमें लगा हुआ है। ब्राह्मण शूद्रवत् और गौएँ बकरियोंके समान हो गयी हैं। वेदोंमें गाथाकी ही प्रधानता रह गयी है। शुभ कर्म साधारण लौकिक कृत्योंके ही समान रह गये हैं, इनके प्रति किसीकी महत्त्व बुद्धि नहीं है। भूत, प्रेत और पिशाच आदिकी उपासना चल पड़ी है। सब लोग मैथुनमें आसक्त हैं और उसके लिये अपने प्राण भी खो बैठते हैं। सब लोग झूठी गवाही देते हैं। मनमें सदा छल और कपट भरा रहता है। कलियुगमें सदा लोगोंके मनमें कुछ और, वाणीमें कुछ और तथा क्रियामें कुछ और ही देखा जाता है। सबकी विद्या किसी-न-किसी स्वार्थको लेकर ही होती है और केवल राजभवनमें उसका आदर होता है। सङ्गीत आदि कलात्मक विद्याएँ भी राजाओंको प्रिय हैं। कलिमें अधम मनुष्य पूजे जाते हैं और श्रेष्ठ पुरुषोंकी अवहेलना होती है। कलिमें वेदोंके विद्वान् ब्राह्मण दरिद्र होते हैं। लोगोंमें प्रायः भगवान्‌की भक्ति नहीं होती। पुण्यक्षेत्रमें पाखण्ड अधिक बढ़ जाता है। शूद्रलोग जटाधारी तपस्वी बनकर धर्मकी व्याख्या करते हैं। सभी मनुष्य अल्पायु, दयाहीन और शठ होते हैं। कलिमें प्रायः सभी धर्मके व्याख्याता बन जाते हैं और दूसरोंसे कुछ लेनेमें ही उत्सव मानते हैं। अपनी पूजा कराना चाहते हैं और व्यर्थ ही दूसरोंकी निन्दा करते हैं। अपने घर आनेपर सभी अपने स्वामीके दोषोंकी चर्चामें तत्पर रहते हैं। कलिमें लोग साधुओंको नहीं जानते। पापियोंको ही बहुत आदर देते हैं। दुराग्रही लोग इतने दुराग्रही होते हैं कि साधुपुरुषोंके एक दोषका भी ढिंढोरा पीटते हैं और पापात्माओंके दोषसमूहोंको भी गुण बतलाते हैं। कलिमें गुणहीन मनुष्य दूसरोंके गुण न देखकर उनके दोष ही ग्रहण करते हैं। जैसे पानीमें रहनेवाली जोंक प्राणियोंके रक्त पीती है, जल नहीं पीती, उसी प्रकार जोंकके धर्मसे संयुक्त

हो मनुष्य दूसरेका रक्त चूसते हैं। ओषधियाँ शक्तिहीन होती हैं। ऋतुओंमें उलट-फेर हो जाता है। सब राष्ट्रोंमें अकाल पड़ता है। कन्या योग्य समयमें सन्तानोत्पत्ति नहीं करती। लोग नट और नर्तकोंकी विद्याओंसे विशेष प्रेम करते हैं। जो वेद-वेदान्तकी विद्याओंमें तत्पर और अधिक गुणवान् हैं, उन्हें अज्ञानी मनुष्य सेवककी दृष्टिसे देखते हैं, वे सब-के-सब भ्रष्ट होते हैं। कलिमें प्राय: लोग श्राद्धकर्मका त्याग करते हैं। वैदिक कर्मोंको छोड़ बैठते हैं। प्राय: जिह्वापर भगवान् विष्णुके नाम कभी नहीं आते। लोग शृङ्गार रसमें आनन्दका अनुभव करते हैं और उसीके गीत गाते हैं। कलियुगके मनुष्योंमें न कभी भगवान् विष्णुकी सेवा देखी जाती है, न शास्त्रीय चर्चा होती है, न कहीं यज्ञकी दीक्षा है, न विचारका लेश है, न तीर्थयात्रा है और न दान-धर्म ही होते देखे जाते हैं। यह कितने आश्चर्यकी बात है?

उन सबको देखकर धर्मवर्णको बड़ा भय लगा। पापसे कुलकी हानि होती देख, अत्यन्त आश्चर्यसे चकित हो वे दूसरे द्वीपमें चले गये। सब द्वीपों और लोकोंमें विचरते हुए बुद्धिमान् धर्मवर्ण किसी समय कौतूहलवश पितृलोकमें गये। वहाँ उन्होंने कर्मसे कष्ट पाते हुए पितरोंको बड़ी भयङ्कर दशामें देखा। वे दौड़ते, रोते और गिरते-पड़ते थे। उन्होंने अपने पितरोंको भी नीचे अन्धकूपमें पड़े हुए देखा। उनको देखकर आश्चर्यचकित हो दयालु धर्मवर्णने पूछा—'आप लोग कौन हैं, किस दुस्तर कर्मके प्रभावसे इस अन्धकूपमें पड़े हैं?'

**पितरोंने कहा**—हम श्रीवत्स गोत्रवाले हैं। पृथ्वीपर हमारी कोई सन्तान नहीं रह गयी है, अत: हम श्राद्ध और पिण्डसे वञ्चित हैं, इसीलिये यहाँ हमें नरकका कष्ट भोगना पड़ता है। सन्तानहीन दुरात्माओंका अन्धकूपमें पतन होता है। हमारे वंशमें एक ही महायशस्वी पुरुष है, जो धर्मवर्णके नामसे विख्यात है। किंतु वह विरक्त

होकर अकेला घूमता-फिरता है। उसने गृहस्थ-धर्मको नहीं स्वीकार किया है। वह एक ही तन्तु हमारे कुलमें अवशिष्ट है। उसकी भी आयु क्षीण हो जानेपर हम लोग घोर अन्धकूपमें गिर पड़ेंगे, जहाँसे फिर निकलना कठिन होगा। इसलिये तुम पृथ्वीपर जाकर धर्मवर्णको समझाओ। हम लोग दयाके पात्र हैं, हमारे वचनोंसे उसको यह बताओ कि 'हमारी वंशरूपा दूर्वाको कालरूपी चूहा प्रतिदिन खा रहा है। क्रमशः सारे वंशका नाश हो गया है, एक तुम्हीं बचे हो। जब तुम भी मर जाओगे तब सन्तान-परम्परा न होनेके कारण तुम्हें भी अन्धकूपमें गिरना पड़ेगा। इसलिये गृहस्थ-धर्मको स्वीकार करके सन्तानकी वृद्धि करो। इससे हमारी और तुम्हारी दोनोंकी ऊर्ध्वगति होगी। यदि एक भी पुत्र वैशाख, माघ अथवा कार्तिकमासमें हमारे उद्देश्यसे स्नान, श्राद्ध और दान करेगा तो उससे हम लोगोंकी ऊर्ध्वगति होगी और नरकसे उद्धार हो जायगा। यदि एक पुत्र भी भगवान् विष्णुका भक्त हो जाय, एक भी एकादशीका व्रत रहने लगे अथवा यदि एक भी भगवान् विष्णुकी पापनाशक कथा श्रवण करे तो उसकी सौ बीती हुई पीढ़ियोंका तथा सौ भावी पीढ़ियोंका उद्धार होता है। वे पीढ़ियाँ पापसे आवृत होनेपर भी नरकका दर्शन नहीं करतीं। दया और धर्मसे रहित उन बहुत-से पुत्रोंके जन्मसे क्या लाभ, जो कुलमें उत्पन्न होकर सर्वव्यापी भगवान् नारायणकी पूजा नहीं करते*।' इस प्रकार प्रिय वचनोंद्वारा धर्मवर्णको समझाकर तुम उसे विरक्तिपूर्ण ब्रह्मचर्य-आश्रमसे गृहस्थ-आश्रममें प्रवेश करनेकी सलाह दो।

पितरोंकी यह बात सुनकर धर्मवर्ण अत्यन्त विस्मित हुआ और हाथ जोड़कर बोला—'मैं ही धर्मवर्ण नामसे विख्यात आपके वंशका

---

* किमन्यैर्बहुभिः पुत्रैर्दयाधर्मविवर्जितैः। ये जाता नार्चयन्त्यद्धा विष्णुं नारायणं कुले॥
(स्क० पु० वै० वै० मा० २२। ८१)

दुराग्रही बालक हूँ। यज्ञमें महात्मा नारदजीका यह वचन सुनकर कि 'कलियुगमें प्रायः कोई भी रसनेन्द्रिय और शिश्नेन्द्रियको दृढ़तापूर्वक संयममें नहीं रखता'—मैं दुर्जनोंकी संगतिसे भयभीत हो अबतक दूसरे-दूसरे द्वीपोंमें घूमता रहा। इस कलियुगके तीन चरण बीत गये, अन्तिम चरणमें भी साढ़े तीन भाग व्यतीत हो चुके हैं। मेरा जन्म व्यर्थ बीता है; क्योंकि जिस कुलमें मैंने जन्म लिया, उसमें माता-पिताके ऋणको भी मैंने नहीं चुकाया। पृथ्वीके भारभूत उस शत्रुतुल्य पुत्रके उत्पन्न होनेसे क्या लाभ जो पैदा होकर भगवान् विष्णु और देवताओं तथा पितरोंकी पूजा न करे। मैं आप लोगोंकी आज्ञाका पालन करूँगा। बताइये, पृथ्वीपर किस प्रकार मुझे कलियुगसे और संसारसे भी बाधा नहीं प्राप्त होगी?'

**धर्मवर्णकी बात सुनकर पितरोंके मनको कुछ आश्वासन मिला, वे बोले**—बेटा! तुम गृहस्थ-आश्रम स्वीकार करके सन्तानोत्पत्तिके द्वारा हमारा उद्धार करो। जो भगवान् विष्णुकी कथामें अनुरक्त होते, निरन्तर श्रीहरिका स्मरण करते और सदाचारके पालनमें तत्पर रहते हैं, उन्हें कलियुग बाधा नहीं पहुँचाता। मानद! जिसके घरमें शालग्राम शिला अथवा महाभारतकी पुस्तक हो, उसे भी कलियुग बाधा नहीं दे सकता। जो वैशाखमासके धर्मोंका पालन करता, माघ-स्नानमें तत्पर होता और कार्तिकमें दीप देता है, उसे भी कलिकी बाधा नहीं प्राप्त होती। जो प्रतिदिन महात्मा भगवान् विष्णुकी पापनाशक एवं मोक्षदायिनी दिव्य कथा सुनता है, जिसके घरमें बलिवैश्वदेव होता है, शुभकारिणी तुलसी स्थित होती हैं तथा जिसके आँगनमें उत्तम गौ रहती हैं, उसे भी कलियुग बाधा नहीं देता। अतः इस पापात्मक युगमें भी तुम्हें कोई भय नहीं है। बेटा! शीघ्र पृथ्वीपर जाओ। इस समय वैशाखमास चल रहा है, यह सबका उपकार करनेवाला मास है। सूर्यके मेष राशिमें स्थित होनेपर तीसों तिथियाँ पुण्यदायिनी मानी

गयी हैं। एक-एक तिथिमें किया हुआ पुण्य कोटि-कोटि गुना अधिक होता है। उनमें भी जो वैशाखकी अमावास्या तिथि है, वह मनुष्योंको मोक्ष देनेवाली है, देवताओं और पितरोंको वह बहुत प्रिय है, शीघ्र ही मोक्षकी प्राप्ति करानेवाली है। जो उस दिन पितरोंके उद्देश्यसे श्राद्ध करते और जलसे भरा हुआ घड़ा एवं पिण्ड देते हैं, उन्हें अक्षय फलकी प्राप्ति होती है। अतः महामते! तुम शीघ्र जाओ और जब अमावास्या हो, तब कुम्भसहित श्राद्ध एवं पिण्डदान करो। सबका उपकार करनेके लिये गृहस्थ-धर्मका आश्रय लो। धर्म, अर्थ और कामसे सन्तुष्ट हो, उत्तम सन्तान पाकर फिर मुनिवृत्तिसे रहते हुए सुखपूर्वक द्वीप-द्वीपान्तरोंमें विचरण करो।

पितरोंके इस प्रकार आदेश देनेपर धर्मवर्ण मुनि शीघ्रतापूर्वक भूलोकमें गये। वहाँ मेष राशिमें सूर्यके स्थित रहते हुए वैशाखमासमें प्रातःकाल स्नान करके देवताओं, ऋषियों तथा पितरोंका तर्पण किया; फिर कुम्भदानसहित पापविनाशक श्राद्ध करके उसके द्वारा पितरोंको पुनरावृत्तिरहित मुक्ति प्रदान की। तत्पश्चात् उन्होंने स्वयं विवाह करके उत्तम सन्तानको जन्म दिया और लोकमें उस पापनाशिनी अमावास्या तिथिको प्रसिद्ध किया। तदनन्तर वे भक्तिपूर्वक भगवान्‌की आराधना करनेके लिये हर्षके साथ गन्धमादन पर्वतपर चले गये। इसलिये वैशाखमासकी यह अमावास्या तिथि परम पवित्र मानी गयी है।

## वैशाखकी अक्षय तृतीया और द्वादशीकी महत्ता, द्वादशीके पुण्यदानसे एक कुतियाका उद्धार

**श्रुतदेवजी कहते हैं**—जो मनुष्य अक्षय तृतीयाको सूर्योदयकालमें प्रातःस्नान करते हैं और भगवान् विष्णुकी पूजा करके कथा सुनते हैं,

वे मोक्षके भागी होते हैं। जो उस दिन श्रीमधुसूदनकी प्रसन्नताके लिये दान करते हैं, उनका वह पुण्यकर्म भगवान्‌की आज्ञासे अक्षय फल देता है। वैशाखमासकी पवित्र तिथियोंमें शुक्लपक्षकी द्वादशी समस्त पापराशिका विनाश करनेवाली है। शुक्ला द्वादशीको योग्य पात्रके लिये जो अन्न दिया जाता है, उसके एक-एक दानेमें कोटि-कोटि ब्राह्मण-भोजनका पुण्य होता है। शुक्लपक्षकी एकादशी तिथिमें जो भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताके लिये जागरण करता है, वह जीवन्मुक्त होता है। जो वैशाखकी द्वादशी तिथिको तुलसीके कोमलदलोंसे भगवान् विष्णुकी पूजा करता है, वह समूचे कुलका उद्धार करके वैकुण्ठलोकका अधिपति होता है। जो मनुष्य त्रयोदशी तिथिको दूध, दही, शक्कर, घी और शुद्ध मधु—इन पाँच द्रव्योंसे भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताके लिये उनकी पूजा करता है तथा जो पञ्चामृतसे भक्तिपूर्वक श्रीहरिको स्नान कराता है, वह सम्पूर्ण कुलका उद्धार करके भगवान् विष्णुके लोकमें प्रतिष्ठित होता है। जो सायङ्कालमें भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताके लिये शर्बत देता है, वह अपने पुराने पापको शीघ्र ही त्याग देता है। वैशाख शुक्ला द्वादशीमें मनुष्य जो कुछ पुण्य करता है, वह अक्षय फल देनेवाला होता है।

प्राचीनकालमें काश्मीरदेशमें देवव्रत नामक एक ब्राह्मण थे। उनके सुन्दर रूपवाली एक कन्या थी, जो मालिनीके नामसे प्रसिद्ध थी। ब्राह्मणने उस कन्याका विवाह सत्यशील नामक बुद्धिमान् द्विजके साथ कर दिया। मालिनी कुमार्गपर चलनेवाली पुंश्चली होकर स्वच्छन्दतापूर्वक इधर-उधर रहने लगी। वह केवल आभूषण धारण करनेके लिये पतिका जीवन चाहती थी, उसकी हितैषिणी नहीं थी। उसके घरमें काम-काज करनेके बहाने उपपति रहा करता था। सभी जातिके मनुष्य जारके रूपमें उसके यहाँ ठहरते थे। वह कभी पतिकी आज्ञाका पालन करनेमें तत्पर नहीं हुई। इसी दोषसे उसके सब अङ्गोंमें कीड़े पड़

गये, जो काल, अन्तक और यमकी भाँति उसकी हड्डियोंको भी छेदे डालते थे। उन कीड़ोंसे उसकी नाक, जिह्वा और कानोंका उच्छेद हो गया, स्तन तथा अङ्गुलियाँ गल गयीं, उसमें पङ्गुता भी आ गयी। इन सब क्लेशोंसे मृत्युको प्राप्त होकर वह नरककी यातनाएँ भोगने लगी। एक लाख पचास हजार वर्षोंतक वह ताँबेके भाण्डमें रखकर जलायी गयी, सौ बार उसे कुत्तेकी योनिमें जन्म लेना पड़ा। तत्पश्चात् सौवीर देशमें पद्मबन्धु नामक ब्राह्मणके घरमें वह अनेक दुःखोंसे घिरी हुई कुतिया हुई। उस समय भी उसके कान, नाक, पूँछ और पैर कटे हुए थे, उसके सिरमें कीड़े पड़ गये थे और योनिमें भी कीड़े भरे रहते थे। राजन्! इस प्रकार तीस वर्ष बीत गये। एक दिन वैशाखके शुक्लपक्षकी द्वादशी तिथिको पद्मबन्धुका पुत्र नदीमें स्नान करके पवित्र हो भीगे वस्त्रसे घर आया। उसने तुलसीकी वेदीके पास जाकर अपने पैर धोये। दैवयोगसे वह कुतिया वेदीके नीचे सोयी हुई थी। सूर्योदयसे पहलेका समय था, ब्राह्मणकुमारके चरणोदकसे वह नहा गयी और तत्काल उसके सारे पाप नष्ट हो गये। फिर तो उसी क्षण उसे अपने पूर्वजन्मोंका स्मरण हो आया। पहलेके कर्मोंकी याद आनेसे वह कुतिया तपस्वीके पास जाकर दीनतापूर्वक पुकारने लगी—'हे मुने! आप हमारी रक्षा करें।' उसने पद्मबन्धु मुनिके पुत्रसे अपने पूर्वजन्मके दुराचारपूर्ण वृत्तान्त सुनाये और यह भी कहा—'ब्रह्मन्! जो कोई भी दूसरी युवती पतिके ऊपर वशीकरणका प्रयोग करती है, वह दुराचारिणी मेरी ही तरह ताँबेके पात्रमें पकायी जाती है। पति स्वामी है, पति गुरु है और पति उत्तम देवता है। साध्वी स्त्री उस पतिका अपराध करके कैसे सुख पा सकती है?* पतिका अपराध करनेवाली स्त्री सैकड़ों

* भर्ता नाथो गुरुर्भर्ता भर्ता दैवतमुत्तमम्। विक्रियां कृत्य साध्वी सा कथं सुखमवाप्नुयात्॥
(स्क० पु० वै० वै० मा० २४। ६२)

बार तिर्यग्योनि (पशु-पक्षियोंकी योनि) में और अरबों बार कीड़ेकी योनिमें जन्म लेती है। इसलिये स्त्रियोंको सदैव अपने पतिकी आज्ञा पालन करनी चाहिये। ब्रह्मन्! आज मैं आपकी दृष्टिके सम्मुख आयी हूँ। यदि आप मेरा उद्धार नहीं करेंगे, तो मुझे पुनः इसी यातनापूर्ण घृणित योनिका दर्शन करना पड़ेगा। अतः विप्रवर! मुझ पापाचारिणीको वैशाख शुक्लपक्षमें अपना पुण्य प्रदान करके उबार लीजिये। आपने जो पुण्यकी वृद्धि करनेवाली द्वादशी की है, उसमें स्नान, दान और अन्नभोजन करानेसे जो पुण्य हुआ है, उससे मुझ दुराचारिणीका भी उद्धार हो जायगा। महाभाग! दीनवत्सल! मुझ दुखियाके प्रति दया कीजिये। आपके स्वामी जगदीश्वर जनार्दन दीनोंके रक्षक हैं। उनके भक्त भी उन्हींके समान होते हैं। दीनवत्सल! मैं आपके दरवाजेपर रहनेवाली कुतिया हूँ। मुझ दीनाके प्रति दया कीजिये, मेरा उद्धार कीजिये। अन्तमें मैं आप द्विजेन्द्रको नमस्कार करती हूँ।'

**उसका वचन सुनकर मुनिके पुत्रने कहा**—कुतिया! सब प्राणी अपने किये हुए कर्मोंके ही सुख-दुःखरूप फल भोगते हैं। जैसे साँपको दिया हुआ शर्करामिश्रित दूध केवल विषकी वृद्धि करता है, उसी प्रकार पापीको दिया हुआ पुण्य उसके पापमें सहायक होता है।

मुनिकुमारके ऐसा कहनेपर कुतिया दुःखमें डूब गयी और उसके पिताके पास जाकर आर्तस्वरसे क्रन्दन करती हुई बोली—'पद्मबन्धु बाबा! मैं तुम्हारे दरवाजेकी कुतिया हूँ। मैंने सदा तुम्हारी जूठन खायी है। मेरी रक्षा करो, मुझे बचाओ। गृहस्थ महात्माके घरपर जो पालतू जीव रहते हैं, उनका उद्धार करना चाहिये, यह वेदवेत्ताओंका मत है। चाण्डाल, कौवे, कुत्ते—ये प्रतिदिन गृहस्थोंके दिये हुए टुकड़े खाते हैं; अतः उनकी दयाके पात्र हैं। जो अपने ही पाले हुए रोगादिसे ग्रस्त एवं असमर्थ प्राणीका उद्धार नहीं करता, वह नरकमें पड़ता है, यह

विद्वानोंका मत है। संसारकी सृष्टि करनेवाले भगवान् विष्णु एकको कर्ता बनाकर स्वयं ही पत्नी, पुत्र आदिके व्याजसे समस्त जन्तुओंका पालन करते हैं; अतः अपने पोष्यवर्गकी रक्षा करनी चाहिये, यह भगवान्‌की आज्ञा है। दयालु होनेके कारण आप मेरा उद्धार कीजिये।'

दुःखसे आतुर हुई कुतियाकी यह बात सुनकर घरमें बैठा हुआ मुनिपुत्र तुरंत घरसे बाहर निकला। इसी समय दयानिधान पद्मबन्धुने कुतियासे पूछा—'यह क्या वृत्तान्त है?' तब पुत्रने सब समाचार कह सुनाया। उसे सुनकर पद्मबन्धु बोले—'बेटा! तुमने कुतियासे ऐसा वचन क्यों कहा? साधुपुरुषोंके मुँहसे ऐसी बात नहीं निकलती। वत्स! देखो तो, सब लोग दूसरोंका उपकार करनेके लिये उद्यत रहते हैं। चन्द्रमा, सूर्य, वायु, रात्रि, अग्नि, जल, चन्दन, वृक्ष और साधुपुरुष सदा दूसरोंकी भलाईमें लगे रहते हैं। दैत्योंको महाबली जानकर महर्षि दधीचिने देवताओंका उपकार करनेके लिये दयापूर्वक उन्हें अपने शरीरकी हड्डी दे दी थी। महाभाग! पूर्वकालमें राजा शिबिने कबूतरके प्राण बचानेके लिये भूखे बाजको अपने शरीरका मांस दे दिया था। पहले इस पृथ्वीपर जीमूतवाहन नामक राजा हो गये हैं। उन्होंने एक सर्पका प्राण बचानेके लिये महात्मा गरुड़को अपना जीवन समर्पित कर दिया था। इसलिये विद्वान् ब्राह्मणको दयालु होना चाहिये; क्या इन्द्रदेव शुद्ध स्थानमें ही वर्षा करते हैं, अशुद्ध स्थानमें जल नहीं बरसाते? क्या चन्द्रमा चाण्डालोंके घरमें प्रकाश नहीं करते? अतः बार-बार प्रार्थना करनेवाली इस कुतियाका मैं अपने पुण्योंसे उद्धार करूँगा।'

इस प्रकार पुत्रकी मान्यताका निराकरण करके परम बुद्धिमान् पद्मबन्धुने सङ्कल्प किया—'कुतिया! ले, मैंने द्वादशीका महापुण्य तुझे दे दिया।' ब्राह्मणके इतना कहते ही कुतियाने सहसा अपने प्राचीन शरीरका त्याग कर दिया और दिव्य देह धारणकर दिव्य वस्त्र-

आभूषणोंसे विभूषित हो, दसों दिशाओंको प्रकाशित करती हुई ब्राह्मणकी आज्ञा ले स्वर्गलोकको चली गयी। वहाँ महान् सुखोंका उपभोग करके इस पृथ्वीपर भगवान् नर-नारायणके अंशसे 'उर्वशी' नामसे प्रकट हुई।

## वैशाखमासकी अन्तिम तीन तिथियोंकी महत्ता तथा ग्रन्थका उपसंहार

**श्रुतदेवजी कहते हैं**—राजेन्द्र! वैशाखके शुक्लपक्षमें जो अन्तिम तीन त्रयोदशीसे लेकर पूर्णिमातककी तिथियाँ हैं, वे बड़ी पवित्र और शुभकारक हैं। उनका नाम 'पुष्करिणी' है, वे सब पापोंका क्षय करनेवाली हैं। जो सम्पूर्ण वैशाखमासमें स्नान करनेमें असमर्थ हो, वह यदि इन तीन तिथियोंमें भी स्नान करे, तो वैशाखमासका पूरा फल पा लेता है। पूर्वकालमें वैशाखमासकी एकादशी तिथिको शुभ अमृत प्रकट हुआ। द्वादशीको भगवान् विष्णुने उसकी रक्षा की। त्रयोदशीको उन श्रीहरिने देवताओंको सुधा-पान कराया। चतुर्दशीको देवविरोधी दैत्योंका संहार किया और पूर्णिमाके दिन समस्त देवताओंको उनका साम्राज्य प्राप्त हो गया। इसलिये देवताओंने सन्तुष्ट होकर इन तीन तिथियोंको वर दिया—'वैशाखमासकी ये तीन शुभ तिथियाँ मनुष्योंके पापोंका नाश करनेवाली तथा उन्हें पुत्र-पौत्रादि फल देनेवाली हों। जो मनुष्य इस सम्पूर्ण मासमें स्नान न कर सका हो, वह इन तिथियोंमें स्नान कर लेनेपर पूर्ण फलको ही पाता है। वैशाखमासमें लौकिक कामनाओंका नियमन करनेपर मनुष्य निश्चय ही भगवान् विष्णुका सायुज्य प्राप्त कर लेता है। महीनेभर नियम निभानेमें असमर्थ मानव यदि उक्त तीन दिन भी कामनाओंका संयम कर सके तो उतनेसे ही पूर्ण फलको पाकर भगवान् विष्णुके धाममें आनन्दका अनुभव करता है।'

इस प्रकार वर देकर देवता अपने धामको चले गये। अतः पुष्करिणी नामसे प्रसिद्ध अन्तिम तीन तिथियाँ पुण्यदायिनी, समस्त पापराशिका नाश करनेवाली तथा पुत्र-पौत्रको बढ़ानेवाली हैं। जो वैशाखमासमें अन्तिम तीन दिन गीताका पाठ करता है, उसे प्रतिदिन अश्वमेधयज्ञका फल मिलता है। जो उक्त तीनों दिन विष्णुसहस्त्रनामका पाठ करता है, उसके पुण्यफलका वर्णन करनेमें इस भूलोक तथा स्वर्गलोकमें कौन समर्थ है? पूर्णिमाको सहस्रनामोंके द्वारा भगवान् मधुसूदनको दूधसे नहलाकर मनुष्य पापहीन वैकुण्ठधाममें जाता है। वैशाखमासमें प्रतिदिन भागवतके आधे या चौथाई श्लोकका पाठ करनेवाला मनुष्य ब्रह्मभावको प्राप्त होता है। जो वैशाखके अन्तिम तीन दिनोंमें भागवतशास्त्रका श्रवण करता है, वह जलसे कमलके पत्तेकी भाँति कभी पापोंसे लिप्त नहीं होता। उक्त तीनों दिनोंके सेवनसे कितने ही मनुष्योंने देवत्व प्राप्त कर लिया, कितने ही सिद्ध हो गये और कितनोंने ब्रह्मत्व पा लिया। ब्रह्मज्ञानसे मुक्ति होती है। अथवा प्रयागमें मृत्यु होनेसे या वैशाखमासमें नियमपूर्वक प्रातःकाल जलमें स्नान करनेसे मोक्षकी प्राप्ति होती है। इसलिये वैशाखके अन्तिम तीन दिनोंमें स्नान, दान और भगवत्पूजन आदि अवश्य करना चाहिये। वैशाखमासके उत्तम माहात्म्यका पूरा-पूरा वर्णन रोग-शोकसे रहित जगदीश्वर भगवान् नारायणके सिवा दूसरा कौन कर सकता है। तुम भी वैशाखमासमें दान आदि उत्तम कर्मका अनुष्ठान करो। इससे निश्चय ही तुम्हें भोग और मोक्षकी प्राप्ति होगी।

इस प्रकार मिथिलापति जनकको उपदेश देकर श्रुतदेवजीने उनकी अनुमति ले वहाँसे जानेका विचार किया। तब राजर्षि जनकने अपने अभ्युदयके लिये उत्तम उत्सव कराया और श्रुतदेवजीको पालकीपर बिठाकर विदा किया। वस्त्र, आभूषण, गौ, भूमि, तिल और सुवर्ण

आदिसे उनकी पूजा और वन्दना करके राजाने उनकी परिक्रमा की। तत्पश्चात् उनसे विदा हो महातेजस्वी एवं परम यशस्वी श्रुतदेवजी सन्तुष्ट हो प्रसन्नतापूर्वक वहाँसे अपने स्थानको गये। राजाने वैशाख-धर्मका पालन करके मोक्ष प्राप्त किया।

**नारदजी कहते हैं**—अम्बरीष! यह उत्तम उपाख्यान मैंने तुम्हें सुनाया है, जो कि सब पापोंका नाशक तथा सम्पूर्ण सम्पत्तियोंको देनेवाला है। इससे मनुष्य भुक्ति, मुक्ति, ज्ञान एवं मोक्ष पाता है।

नारदजीका यह वचन सुनकर महायशस्वी राजा अम्बरीष मन-ही-मन बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने बाह्य जगत्के व्यापारोंसे निवृत्त होकर मुनिको साष्टाङ्ग प्रणाम किया और अपने सम्पूर्ण वैभवोंसे उनकी पूजा की। तत्पश्चात् उनसे विदा लेकर देवर्षि नारदजी दूसरे लोकमें चले गये; क्योंकि दक्ष प्रजापतिके शापसे वे एक स्थानपर नहीं ठहर सकते। राजर्षि अम्बरीष भी नारदजीके बताये हुए सब धर्मोंका अनुष्ठान करके निर्गुण परब्रह्म परमात्मामें विलीन हो गये। जो इस पापनाशक एवं पुण्यवर्द्धक उपाख्यानको सुनता अथवा पढ़ता है, वह परम गतिको प्राप्त होता है। जिनके घरमें यह लिखी हुई पुस्तक रहती है, उनके हाथमें मुक्ति आ जाती है। फिर जो सदा इसके श्रवणमें मन लगाते हैं, उनके लिये तो कहना ही क्या है।
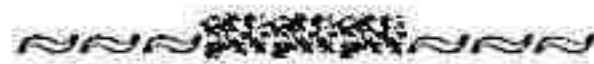
**स्कन्दपुराणान्तर्गत वैशाखमास-माहात्म्य सम्पूर्ण**
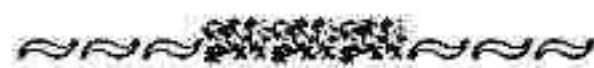
# कार्तिक-माहात्म्य

## कार्तिकमासकी श्रेष्ठता तथा उसमें करनेयोग्य स्नान, दान, भगवत्पूजन आदि धर्मोंका महत्त्व

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।
देवीं सरस्वतीं चैव ततो जयमुदीरयेत्॥

'भगवान् नारायण, नरश्रेष्ठ नर तथा सरस्वतीदेवीको नमस्कार करके जयस्वरूप इतिहास-पुराणका पाठ करना चाहिये।'

**ऋषि बोले**—सूतजी! हमलोग कार्तिकमासका माहात्म्य सुनना चाहते हैं।

**सूतजी बोले**—ऋषियो! तुमने मुझसे जो प्रश्न किया है, उसीको ब्रह्मपुत्र नारदजीने जगद्गुरु ब्रह्मासे इस प्रकार पूछा था—'पितामह! मासोंमें सबसे श्रेष्ठ मास, देवताओंमें सर्वोत्तम देवता और तीर्थोंमें विशिष्ट तीर्थ कौन हैं, यह बताइये।'

**ब्रह्माजी बोले**—मासोंमें कार्तिक, देवताओंमें भगवान् विष्णु और तीर्थोंमें नारायणतीर्थ (बदरिकाश्रम) श्रेष्ठ है। ये तीनों कलियुगमें अत्यन्त दुर्लभ हैं।

**इतना कहकर ब्रह्माजीने भगवान् राधाकृष्णका स्मरण किया और पुनः नारदजीसे कहा**—बेटा! तुमने समस्त लोकोंका उद्धार करनेके लिये यह बहुत अच्छा प्रश्न किया। मैं कार्तिकका माहात्म्य कहता हूँ। कार्तिकमास भगवान् विष्णुको सदा ही प्रिय है। कार्तिकमें भगवान् विष्णुके उद्देश्यसे जो कुछ पुण्य किया जाता है, उसका नाश

मैं नहीं देखता। नारद! यह मनुष्ययोनि दुर्लभ है। इसे पाकर मनुष्य अपनेको इस प्रकार रखे कि उसे पुनः नीचे न गिरना पड़े। कार्तिक सब मासोंमें उत्तम है। यह पुण्यमय वस्तुओंमें सबसे अधिक पुण्यतम और पावन पदार्थोंमें सबसे अधिक पावन है। इस महीनेमें तैंतीसों देवता मनुष्यके सन्निकट हो जाते हैं और इसमें किये हुए स्नान, दान, भोजन, व्रत, तिल, धेनु, सुवर्ण, रजत, भूमि, वस्त्र आदिके दानोंको विधिपूर्वक ग्रहण करते हैं। कार्तिकमें जो कुछ दिया जाता है, जो भी तप किया जाता है, उसे सर्वशक्तिमान् भगवान् विष्णुने अक्षय फल देनेवाला बतलाया है। भगवान् विष्णुके उद्देश्यसे मनुष्य कार्तिकमें जो कुछ दान देता है, उसे वह अक्षयरूपमें प्राप्त करता है। उस समय अन्नदानका महत्त्व अधिक है। उससे पापोंका सर्वथा नाश हो जाता है। जो कार्तिकमास प्राप्त हुआ देख पराये अन्नको सर्वथा त्याग देता है, वह अतिकृच्छ्र यज्ञका फल प्राप्त करता है। कार्तिकमासके समान कोई मास नहीं, सत्ययुगके समान कोई युग नहीं, वेदोंके समान कोई शास्त्र नहीं और गङ्गाजीके समान दूसरा कोई तीर्थ नहीं है*। इसी प्रकार अन्नदानके सदृश दूसरा कोई दान नहीं है। दान करनेवाले पुरुषोंके लिये न्यायोपार्जित द्रव्यके दानका सुअवसर दुर्लभ है, उसका भी तीर्थमें दान किया जाना तो और भी दुर्लभ है। मुनिश्रेष्ठ! पापसे डरनेवाले मनुष्यको कार्तिकमासमें शालग्रामशिलाका पूजन और भगवान् वासुदेवका स्मरण अवश्य करना चाहिये। दान आदि करनेमें असमर्थ मनुष्य प्रतिदिन प्रसन्नतापूर्वक नियमसे भगवन्नामोंका स्मरण करे। कार्तिकमें भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताके लिये विष्णु-मन्दिर अथवा शिव-मन्दिरमें रातको जागरण

* न कार्तिकसमो मासो न कृतेन समं युगम् । न वेदसदृशं शास्त्रं न तीर्थं गङ्गया समम्॥
(स्क० पु० वै० का० मा० १। ३६-३७)

करे। शिव और विष्णुके मन्दिर न हों तो किसी भी देवताके मन्दिरमें जागरण करे। यदि दुर्गम वनमें स्थित हो या विपत्तिमें पड़ा हो तो पीपलके वृक्षकी जड़में अथवा तुलसीके वनोंमें जागरण करे। भगवान् विष्णुके समीप उन्हींके नामों और लीला-कथाओंका गायन करे। यदि आपत्तिमें पड़ा हुआ मनुष्य कहीं अधिक जल न पावे अथवा रोगी होनेके कारण जलसे स्नान न कर सके तो भगवान्‌के नामसे मार्जनमात्र कर ले। व्रतमें स्थित हुआ पुरुष यदि उद्यापनकी विधि करनेमें असमर्थ हो तो व्रतकी समाप्तिके बाद उसकी पूर्णताके लिये केवल ब्राह्मणोंको भोजन करावे। जो स्वयं दीपदान करनेमें असमर्थ हो, वह दूसरेके बुझे हुए दीपको जला दे अथवा हवा आदिसे यत्नपूर्वक उसकी रक्षा करे। भगवान् विष्णुकी पूजा न हो सकनेपर तुलसी अथवा आँवलेका भगवद्बुद्धिसे पूजन करे। मन-ही-मन भगवान् विष्णुके नामोंका निरन्तर कीर्तन करता रहे।

गुरुके आदेश देनेपर उनके वचनका कभी उल्लङ्घन न करे। यदि अपने ऊपर दुःख आदि आ पड़े तो गुरुकी शरणमें जाय। गुरुकी प्रसन्नतासे मनुष्य सब कुछ प्राप्त कर लेता है। परम बुद्धिमान् कपिल और महातपस्वी सुमति भी अपने गुरु गौतमकी सेवासे अमरत्वको प्राप्त हुए हैं। इसलिये विष्णु-भक्त पुरुष कार्तिकमें सब प्रकारसे प्रयत्न करके गुरुकी सेवा करे। ऐसा करनेसे उसे मोक्षकी प्राप्ति होती है। सब दानोंसे बढ़कर कन्यादान है, उससे अधिक विद्यादान है, विद्यादानसे भी गोदानका महत्त्व अधिक है और गोदानसे भी बढ़कर अन्नदान है; क्योंकि यह समस्त संसार अन्नके आधारपर ही जीवित रहता है। इसलिये कार्तिकमें अन्नदान अवश्य करना चाहिये। कार्तिकमें नियमका पालन करनेपर अवश्य ही भगवान् विष्णुका सारूप्य एवं मोक्षदायक पद प्राप्त होता है। कार्तिकमें ब्राह्मण पति-पत्नीको भोजन

कराना चाहिये, चन्दनसे उनका पूजन करना चाहिये, अनेक प्रकारके वस्त्र, रत्न और कम्बल देने चाहिये। ओढ़नेके साथ ही रूईदार बिछावन, जूता और छाता भी दान करने चाहिये। कार्तिकमें भूमिपर शयन करनेवाला मनुष्य युग-युगके पापोंका नाश कर डालता है। जो कार्तिकमासमें भगवान् विष्णुके आगे अरुणोदयकालमें जागरण करता है और नदीमें स्नान, भगवान् विष्णुकी कथाका श्रवण, वैष्णवोंका दर्शन तथा नित्यप्रति भगवान् विष्णुका पूजन करता है, उसके पितरोंका नरकसे उद्धार हो जाता है। अहो! जिन लोगोंने भक्तिपूर्वक भगवान् विष्णुका पूजन नहीं किया, वे इस कलियुगकी कन्दरामें गिरकर नष्ट हो गये, लुट गये। जो मनुष्य कमलके एक फूलसे देवताओंके स्वामी भगवान् कमलापतिकी पूजा करता है, वह करोड़ों जन्मोंके पापोंका नाश कर डालता है। मुनिश्रेष्ठ! जो कार्तिकमें एक लाख तुलसीदल चढ़ाकर भगवान् विष्णुकी पूजा करता है, वह एक-एक दलपर मुक्तादान करनेका फल प्राप्त करता है। जो भगवान्‌के श्रीअङ्गोंसे उतारी हुई प्रसादस्वरूपा तुलसीको मुखमें, मस्तकपर और शरीरमें धारण करता है तथा भगवान्‌के निर्माल्योंसे अपने अङ्गोंका मार्जन करता है, वह मनुष्य सम्पूर्ण रोगों और पापोंसे मुक्त हो जाता है। भगवत्पूजनसम्बन्धी प्रसादस्वरूप शङ्खका जल, भगवान्‌की भक्ति, निर्माल्य पुष्प आदि, चरणोदक, चन्दन और धूप ब्रह्महत्याका नाश करनेवाले हैं। नारद! कार्तिकमासमें प्रातःकाल स्नान करे और प्रतिदिन अपनी शक्तिके अनुसार ब्राह्मणोंको अन्न-दान दे; क्योंकि सब दानोंमें अन्न-दान ही सबसे बढ़कर है। अन्नसे ही मनुष्य जन्म लेता और अन्नसे ही बढ़ता है। अन्नको समस्त प्राणियोंका प्राण माना गया है। अन्न-दान करनेवाला पुरुष संसारमें सब कुछ देनेवाला और सम्पूर्ण यज्ञोंका अनुष्ठान करनेवाला है। पूर्वकालमें सत्यकेतु ब्राह्मणने केवल

अन्न-दानसे सब पुण्योंका फल पाकर परम दुर्लभ मोक्षको भी प्राप्त कर लिया था। कार्तिकमासमें अनेक प्रकारके दान देकर भी यदि मनुष्य भगवान्‌का चिन्तन नहीं करता तो वे दान उसे कभी पवित्र नहीं करते। भगवन्नाम-स्मरणकी महिमाका वर्णन मैं भी नहीं कर सकता। *'गोविन्द गोविन्द हरे मुरारे गोविन्द गोविन्द मुकुन्द कृष्ण। गोविन्द गोविन्द रथाङ्गपाणे गोविन्द दामोदर माधवेति।'* इस प्रकार प्रतिदिन कीर्तन करे। नित्यप्रति भागवतके आधे श्लोक या चौथाई श्लोकका भी कार्तिकमें श्रद्धा और भक्तिके साथ अवश्य पाठ करे। जिन्होंने भागवतपुराणका श्रवण नहीं किया, पुराणपुरुष भगवान् नारायणकी आराधना नहीं की और ब्राह्मणोंके मुखरूपी अग्निमें अन्नकी आहुति नहीं दी, उन मनुष्योंका जन्म व्यर्थ ही गया। देवर्षे! जो मनुष्य कार्तिकमासमें प्रतिदिन गीताका पाठ करता है, उसके पुण्यफलका वर्णन करनेकी शक्ति मुझमें नहीं है। गीताके समान कोई शास्त्र न तो हुआ है और न होगा। एकमात्र गीता ही सदा सब पापोंको हरनेवाली और मोक्ष देनेवाली है*। गीताके एक अध्यायका पाठ करनेसे मनुष्य घोर नरकसे मुक्त हो जाते हैं, जैसे जड़ ब्राह्मण मुक्त हो गया था। सात समुद्रोंतककी पृथ्वीका दान करनेसे जो फल प्राप्त होता है, शालग्रामशिलाके दान करनेसे मनुष्य उसी फलको पा लेता है। अतः कार्तिकमासमें स्नान तथा दानपूर्वक शालग्रामशिलाका दान अवश्य करना चाहिये।

---

* कार्तिके मासि विप्रेन्द्र यस्तु गीतां पठेन्नरः। तस्य पुण्यफलं वक्तुं मम शक्तिर्न विद्यते॥
गीतायास्तु समं शास्त्रं न भूतं न भविष्यति। सर्वपापहरा नित्यं गीतैका मोक्षदायिनी॥
(स्क० पु० वै० का० मा० २। ४९-५०)

## विभिन्न देवताओंके संतोषके लिये कार्तिकस्नानकी विधि तथा स्नानके लिये श्रेष्ठ तीर्थोंका वर्णन

**ब्रह्माजी कहते हैं**—कार्तिकका व्रत आश्विन शुक्लपक्षकी दशमीसे आरम्भ करके कार्तिक शुक्ला दशमीको समाप्त करे, अथवा आश्विनकी पूर्णिमाको आरम्भ करके कार्तिककी पूर्णिमाको पूरा करे। भक्तिमान् पुरुष आश्विन शुक्लपक्षकी एकादशी आनेपर भगवान् विष्णुको नमस्कार करके उनसे कार्तिकव्रत करनेकी आज्ञा प्राप्त करे और विधिसे कार्तिकव्रतका पालन करे। बारहों महीनोंमें मार्गशीर्षमास अत्यन्त पुण्यप्रद है, उससे अधिक पुण्यफल देनेवाला नर्मदातटपर वैशाखमास बताया गया है। उससे लाखगुना अधिक प्रयागमें माघमासका महत्त्व है। उससे भी महान् फल देनेवाला कार्तिकमास है। इसका महत्त्व सर्वत्र जलमें एक-सा ही है। एक ओर सब दान, व्रत और नियम तथा दूसरी ओर कार्तिकका स्नान तराजूपर रखकर ब्रह्माजीने तौला तो कार्तिकका ही पलड़ा भारी रहा। स्नान, दीपदान, तुलसीके पौधोंको लगाना और सींचना, पृथ्वीपर शयन, ब्रह्मचर्यका पालन, भगवान् विष्णुके नामोंका सङ्कीर्तन तथा पुराणोंका श्रवण—इन सब नियमोंका जो कार्तिकमासमें (निष्कामभावसे) पालन करते हैं, वे ही जीवन्मुक्त हैं। यह व्रत भगवान् श्रीकृष्णको बहुत प्रिय है। सूर्यभक्त, गणेशभक्त, शक्ति-उपासक, शिवोपासक और वैष्णव—सभीको सब पापोंका निवारण करनेके लिये कार्तिकस्नान करना चाहिये। सूर्यकी प्रीतिके लिये जबतक सूर्यनारायण तुला राशिपर स्थित हों तबतक व्रत करना चाहिये। आश्विनकी पूर्णिमासे लेकर कार्तिककी पूर्णिमातक भगवान् शङ्करकी प्रसन्नताके लिये स्नान करना चाहिये। देवीपक्ष अर्थात् आश्विन शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे लेकर कार्तिक कृष्ण चतुर्दशीकी महारात्रिके आनेतक भगवती दुर्गाकी

प्रसन्नताके लिये स्नान करना चाहिये। गणेशजीकी प्रसन्नताके लिये आश्विन कृष्ण चतुर्थीसे लेकर कार्तिक कृष्ण चतुर्थीतक नियमपूर्वक स्नान करना चाहिये। जो आश्विन शुक्लपक्षकी एकादशीसे लेकर कार्तिक शुक्ल एकादशीतक कार्तिकव्रतकी समाप्ति करता है, उसके ऊपर भगवान् जनार्दन प्रसन्न होते हैं। जो दूसरोंके सङ्गवश या बलात् जानकर अथवा बिना जाने ही कार्तिकमासमें प्रात:स्नानका नियम पूरा कर लेता है, वह कभी यम-यातनाको नहीं देखता। अथवा जो ब्राह्मण कार्तिकमें प्रात:स्नान करते हैं, उन्हें ओढ़नेके लिये कम्बल या रजाई देकर स्नानजनित पुण्यफलको प्राप्त करे। कार्तिकमासमें विशेषत: श्रीराधा और श्रीकृष्णकी पूजा करनी चाहिये। जो कार्तिकमें तुलसीवृक्षके नीचे श्रीराधा और श्रीकृष्णकी मूर्तिका (निष्कामभावसे) पूजन करते हैं, उन्हें जीवन्मुक्त समझना चाहिये। हजारों पापोंसे युक्त मनुष्य क्यों न हो, वह कार्तिकस्नानसे अवश्य पापमुक्त हो जाता है। तुलसीके अभावमें आँवलेके नीचे पूजा करनी चाहिये। मुख्य पूजाकी विधि सूर्यमण्डलमें करनी चाहिये अर्थात् सूर्यमण्डलकी ओर देखकर सूर्यरूपी नारायणके लिये पूजनोपचार समर्पित करना चाहिये। सब देवता अप्रत्यक्ष हैं, केवल ये भगवान् सूर्य ही प्रत्यक्ष हैं। अन्य सब देवता कालके अधीन हैं, परंतु भगवान् सूर्य कालके भी काल हैं। जो दरिद्र है वही दानका पात्र है। उसकी अपेक्षा भी विद्वान् पुरुष दानका विशेष पात्र है। भगवान् विष्णुकी चल मूर्तिसे अचल मूर्ति श्रेष्ठ मानी गयी है। मूर्तिके अभावमें भगवद्बुद्धिसे पीपल अथवा वटकी पूजा करनी चाहिये। पीपल भगवान् विष्णुका और वट भगवान् शङ्करका स्वरूप है। शालग्रामशिलाके चक्रमें सदा भगवान् विष्णुका निवास है, इसलिये प्रयत्नपूर्वक शालग्रामकी पूजा करनी चाहिये। पलाश ब्रह्माजीके अंशसे उत्पन्न हुआ है। जो कार्तिकमासमें उसके पत्तलमें भोजन करता है, वह भगवान् विष्णुके

लोकमें जाता है। पीपलके रूपमें साक्षात् भगवान् विष्णु विराजमान हैं, इसलिये कार्तिकमें प्रयत्नपूर्वक उसका पूजन करना चाहिये। जो लोग कार्तिकमासमें स्नान, जागरण, दीपदान और तुलसीवनकी रक्षा करते हैं, वे भगवान् विष्णुके स्वरूप हैं। जो भगवान् विष्णुके मन्दिरमें झाड़ू देकर स्वस्तिक आदिका (निष्कामभावसे) मङ्गल चिह्न बनाते और भगवान् विष्णुकी पूजा करते हैं, वे जीवन्मुक्त हैं।

जब दो घड़ी रात बाकी रहे, तब तुलसीकी मृत्तिका, वस्त्र और कलश लेकर जलाशयके समीप जाय। पैर धोकर गङ्गा आदि नदियों तथा विष्णु और शिव आदि देवताओंका स्मरण करे। फिर नाभिके बराबर जलमें खड़ा होकर इस मन्त्रको पढ़े।

**कार्तिकेऽहं करिष्यामि प्रातःस्नानं जनार्दन।**
**प्रीत्यर्थं तव देवेश दामोदर मया सह॥**

'जनार्दन! देवेश्वर दामोदर! लक्ष्मीसहित आपकी प्रसन्नताके लिये मैं कार्तिकमें प्रातःस्नान करूँगा।'

तत्पश्चात्—

**गृहाणार्घ्यं मया दत्तं राधया सहितो हरे।**
**नमः कमलनाभाय नमस्ते जलशायिने॥**
**नमस्तेऽस्तु हृषीकेश गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तु ते।**

'भगवन्! आप श्रीराधाके साथ मेरे दिये हुए इस अर्घ्यको स्वीकार करें। हरे! आप कमलनाभको नमस्कार है। जलमें शयन करनेवाले आप नारायणको नमस्कार है। हृषीकेश! यह अर्घ्य ग्रहण कीजिये, आपको बार-बार नमस्कार है।'

मनुष्य किसी भी तीर्थमें स्नान करे, उसे गङ्गाका स्मरण अवश्य करना चाहिये। पहले मृत्तिका आदिसे स्नान करके पावमानी ऋचाओंद्वारा अपने मस्तकपर अभिषेक करे। अघमर्षण और स्नानाङ्गतर्पण करके

पुरुषसूक्तसे सिरपर जल छिड़के। उसके बाद बाहर आकर पुनः मस्तकपर तीर्थका जल सींचे। फिर हाथमें तुलसी लेकर तीन बार आचमन करके पानीसे बाहर धोती निचोड़े। वस्त्र निचोड़नेके पश्चात् तिलक आदि करे। कार्तिकमें जहाँ कहीं भी प्रत्येक जलाशयके जलमें स्नान करना चाहिये। गरम जलकी अपेक्षा ठण्डे जलमें स्नान करनेसे दसगुना पुण्य होता है। उससे सौगुना पुण्य बाहरी कुएँके जलमें स्नान करनेसे होता है। उससे अधिक पुण्य बावड़ीमें और उससे भी अधिक पुण्य पोखरेमें स्नान करनेसे होता है। उससे दसगुना झरनोंमें और उससे भी अधिक पुण्य कार्तिकमें नदीस्नान करनेसे होता है। उससे भी दसगुना तीर्थस्थानमें बताया गया है। तीर्थसे दसगुना पुण्य वहाँ होता है, जहाँ दो नदियोंका सङ्गम हो और यदि कहीं तीन नदियोंका सङ्गम हो, तब तो पुण्यकी कोई सीमा ही नहीं है। सिन्धु, कृष्णा, वेणी, यमुना, सरस्वती, गोदावरी, विपासा (व्यास), नर्मदा, तमसा, मही, कावेरी, सरयू, क्षिप्रा, चर्मण्वती (चम्बल), बितस्ता (झेलम), वेदिका, शोणभद्र, वेत्रवती (बेतवा), अपराजिता, गण्डकी, गोमती, पूर्णा, ब्रह्मपुत्रा, मानसरोवर, वाग्मती[१], शतद्रु (शतलज)—ये तीर्थ कार्तिकमें दुर्लभ हैं। सब स्थलोंसे अधिक आर्यावर्त (विन्ध्याचल और हिमालयके भीतरका प्रदेश—उत्तर भारत) पुण्यदायक है, उससे भी कोल्हापुरी श्रेष्ठ है, कोल्हापुरीसे श्रेष्ठ विष्णुकाञ्ची और शिवकाञ्ची हैं। उससे श्रेष्ठ है अनन्तसेनका निवासस्थान वराहक्षेत्र, वराहक्षेत्रसे चक्रकक्षेत्र और चक्रकक्षेत्रसे अधिक पुण्यमय मुक्तिक्कक्षेत्र है। उससे श्रेष्ठ अवन्तीपुरी और अवन्तीपुरीसे श्रेष्ठ बदरिकाश्रम है। बदरिकाश्रमसे अयोध्या, अयोध्यासे गङ्गाद्वारा, गङ्गाद्वारसे कनखल और कनखलसे भी श्रेष्ठ मथुरा

१. नेपालकी एक पुण्यमयी नदी जो सरस्वतीका स्वरूप समझी जाती है और जिसका महत्त्व गङ्गाके समान है।

है; क्योंकि कार्तिकमें वहाँ स्वयं भगवान् राधाकृष्ण स्नान करते हैं। मथुरासे भी श्रेष्ठ द्वारका है। जिन्होंने भगवान् गोविन्दमें अपने चित्तको लगा रखा है, उनके लिये द्वारका सूर्यके समान पुण्यका प्रकाश करनेवाली है। द्वारकासे भी श्रेष्ठ भागीरथी हैं। वह भी जहाँ विन्ध्यपर्वतसे मिलती हैं, वहाँ अधिक श्रेष्ठ हैं। उससे दसगुना पुण्य तीर्थराज प्रयागमें होता है। उससे श्रेष्ठ काशी है, जिसके आश्रयसे गङ्गाजी भी मनुष्योंके सब पापोंका नाश करती हैं। काशीमें पञ्चनद (पञ्चगङ्गा) तीर्थ है, जो तीनों लोकोंमें विख्यात है। कार्तिकमास आनेपर रौरव नरकमें पड़े हुए पितर भी चिल्लाते हैं कि क्या हमारे वंशमें कोई ऐसा भाग्यवान् पैदा होगा, जो पञ्चगङ्गामें जाकर हमारे लिये नरकसे उद्धार करनेवाला तर्पण करेगा। लाखों पाप करके भी मनुष्य यदि पञ्चगङ्गामें नहाकर विन्दुमाधवजीकी पूजा करे तो उसके सभी पाप तत्काल नष्ट हो जाते हैं।

कुछ रात बाकी रहे तभी स्नान किया जाय तो वह उत्तम और भगवान् विष्णुको सन्तुष्ट करनेवाला है। सूर्योदयकालमें किया हुआ स्नान मध्यम श्रेणीका है, जबतक कृत्तिका अस्त न हो, तभीतक स्नानका उत्तम समय है, अन्यथा बहुत विलम्ब करके किया हुआ स्नान कार्तिकस्नानकी श्रेणीमें नहीं आता। स्त्रियोंको पतिकी आज्ञा लेकर कार्तिकस्नान करना चाहिये; क्योंकि पतिसे बिना पूछे जो धर्मकार्य किया जाता है, वह पतिकी आयुको क्षीण कर देता है। स्त्रियोंके लिये पतिकी सेवा छोड़कर दूसरा कोई धर्म नहीं है*। जो पतिकी आज्ञाका पालन करे, वही इस संसारमें धर्मवती है; केवल व्रत आदिसे धर्मवती नहीं होती। पति यदि दरिद्र, पतित, मूर्ख अथवा दीन भी हो तो वह वैसा होता हुआ भी स्त्रीका आश्रय है। उसके

* अपृष्ट्वा यत्कृतं धर्म्यं भर्तारं तत्क्षयं नयेत्। स्त्रीणां नास्त्यपरो धर्मो भर्तारं प्रोज्झ्य कश्चन॥

त्यागसे स्त्री नरकमें गिरती है। जिसके दोनों हाथ, दोनों पैर, वाणी और मन—ये काबूमें रहें तथा जिसमें विद्या, तप एवं कीर्ति हो, वही मनुष्य तीर्थके फलका भागी होता है। जिसकी तीर्थमें श्रद्धा न हो, जो तीर्थमें भी पापकी ही बात सोचता हो, नास्तिक हो, जिसका मन दुविधामें पड़ा हो तथा जो कोरा तर्कवादी हो—ये पाँच प्रकारके मनुष्य तीर्थफलके भागी नहीं होते*। जो ब्राह्मण प्रतिदिन प्रातःकाल उठकर तीर्थमें स्नान करता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो परब्रह्म परमात्माको प्राप्त होता है।

स्नानका तत्त्व जाननेवाले मनीषी पुरुषोंने चार प्रकारके स्नान बतलाये हैं—वायव्य, वारुण, ब्राह्म और दिव्य। गोधूलिसे किया हुआ स्नान वायव्य कहलाता है। समुद्र आदिके जलमें जो स्नान किया जाता है, उसे वारुण कहते हैं। वेदमन्त्रोंके उच्चारणपूर्वक जो स्नान होता है, उसका नाम ब्राह्म है तथा मेघों अथवा सूर्यकी किरणोंद्वारा जो जल अपने शरीरपर गिरता है, उसे दिव्य स्नान कहा गया है। इन सभी स्नानोंमें वारुण स्नान सबसे उत्तम है। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यको मन्त्रोच्चारणपूर्वक स्नान करना चाहिये। स्त्री और शूद्रके लिये बिना मन्त्रके ही स्नानका विधान है। प्राचीन समयमें श्रेष्ठ तीर्थ पुष्करमें जहाँ नन्दा-सङ्गम है, वहीं नन्दाके कहनेसे राजा प्रभञ्जन कार्तिकमासमें पुष्करस्नान करके व्याघ्रयोनिसे मुक्त हुए थे और नन्दा भी कार्तिकमें पुष्करका स्पर्श पाकर परम धामको प्राप्त हुई थी।

---

* दरिद्रः पतितो मूर्खो दीनोऽपि यदि चेत्पतिः। तादृशः शरणं स्त्रीणां तत्त्यागान्निरयं व्रजेत्॥
यस्य हस्तौ च पादौ च वाङ्मनश्च सुसंयतम्। विद्या तपश्च कीर्तिश्च स तीर्थफलभाङ्नरः॥
अश्रद्दधानः पापात्मा नास्तिकश्छिन्नमानसः। हेतुवादी च पञ्चैते न तीर्थफलभागिनः॥
(स्क० पु० वै० का० मा० ४। ७२। ७४, ७६, ७७)

## कार्तिकव्रत करनेवाले मनुष्यके लिये पालनीय नियम

**ब्रह्माजी कहते हैं**—व्रत करनेवाले पुरुषको उचित है कि वह सदा एक पहर रात बाकी रहते ही सोकर उठ जाय। फिर नाना प्रकारके स्तोत्रोंद्वारा भगवान् विष्णुकी स्तुति करके दिनके कार्यका विचार करे। गाँवसे नैर्ऋत्य कोणमें जाकर विधिपूर्वक मल-मूत्रका त्याग करे। यज्ञोपवीतको दाहिने कानपर रखकर उत्तराभिमुख होकर बैठे। पृथ्वीपर तिनका बिछा दे और अपने मस्तकको वस्त्रसे भलीभाँति ढक ले, मुखपर भी वस्त्र लपेट ले, अकेला रहे तथा साथ जलसे भरा हुआ पात्र रखे। इस प्रकार दिनमें मल-मूत्रका त्याग करे। यदि रातमें करना हो तो दक्षिण दिशाकी ओर मुँह करके बैठे। मलत्यागके पश्चात् गुदामें पाँच या सात बार मिट्टी लगाकर धोवे, बायें हाथमें दस बार मिट्टी लगावे, फिर दोनों हाथोंमें सात बार और दोनों पैरोंमें तीन बार मिट्टी लगानी चाहिये। यह गृहस्थके लिये शौचका नियम बताया गया है। ब्रह्मचारीके लिये इससे दूना, वानप्रस्थके लिये तीन-गुना और संन्यासीके लिये चौगुना शौच कहा गया है। यह दिनमें शौचका नियम है। रातमें इससे आधा ही पालन करे। यात्रामें गये हुए मनुष्यके लिये उससे भी आधे शौचका विधान है तथा स्त्रियों और शूद्रोंके लिये उससे भी आधा शौच बताया गया है। शौचकर्मसे हीन पुरुषकी समस्त क्रियाएँ निष्फल होती हैं।

तदनन्तर दाँत और जिह्वाकी शुद्धिके लिये वृक्षके पास जाकर यह मन्त्र पढ़े—

**आयुर्बलं यशो वर्चः प्रजाः पशुवसूनि च।**
**ब्रह्म प्रज्ञां च मेधां च त्वं नो देहि वनस्पते॥**

'हे वनस्पते! आप मुझे आयु, बल, यश, तेज, सन्तति, पशु, धन, वैदिक ज्ञान, प्रज्ञा और धारणाशक्ति प्रदान करें।'

ऐसा कहकर वृक्षसे बारह अंगुलकी दाँतन ले, दूधवाले वृक्षोंसे दाँतन नहीं लेनी चाहिये। इसी प्रकार कपास, काँटेदार वृक्ष तथा जले हुए पेड़से भी दाँतन लेना मना है। जिससे उत्तम गन्ध आती हो और जिसकी टहनी कोमल हो, ऐसे ही वृक्षसे दन्तधावन ग्रहण करना चाहिये। उपवासके दिन, नवमी और षष्ठी तिथिको, श्राद्धके दिन, रविवारको, ग्रहणमें, प्रतिपदाको तथा अमावास्याको भी काष्ठसे दाँतन नहीं करनी चाहिये*। जिस दिन दाँतनका विधान नहीं है, उस दिन बारह कुल्ले कर लेने चाहिये। विधिपूर्वक दाँतोंको शुद्ध करके मुँहको जलसे धो डाले और भगवान् विष्णुके नामोंका उच्चारण करते हुए दो घड़ी रात रहते ही स्नानके लिये जलाशयपर जाय। कार्तिकके व्रतका पालन करनेवाला पुरुष विधिसे स्नान करे। फिर धोती निचोड़कर अपनी रुचिके अनुसार तिलक करे। तत्पश्चात् अपनी शाखाके अनुकूल आह्निकसूत्रकी बतायी हुई पद्धतिसे सन्ध्योपासन करे। जबतक सूर्योदय न हो जाय तबतक गायत्रीमन्त्रका जप करता रहे। यह रात्रिके अन्तका कृत्य बताया गया है। अब दिनका कार्य बताया जाता है। सन्ध्योपासनाके अन्तमें विष्णुसहस्रनाम आदिका पाठ करे, फिर देवालयमें आकर पूजन प्रारम्भ करे। भगवत्सम्बन्धी पदोंके गान, कीर्तन और नृत्य आदि कार्योंमें दिनका प्रथम प्रहर व्यतीत करे। तत्पश्चात् आधे पहरतक भलीभाँति पुराण-कथाका श्रवण करे। उसके बाद पुराण बाँचनेवाले विद्वान्‌की और तुलसीकी पूजा करके मध्याह्नका कर्म करनेके पश्चात् दालके सिवा शेष अन्नका भोजन करे। बलिवैश्वदेव करके अतिथियोंको भोजन कराकर जो मनुष्य स्वयं भोजन करता है, उसका वह भोजन केवल अमृत है। मुखशुद्धिके लिये तीर्थ-

* उपवासे नवम्यां च षष्ठ्यां श्राद्धदिने रवौ । ग्रहणे प्रतिपद्दर्शे न कुर्याद्दन्तधावनम्॥
(स्क० पु० वै० का० मा० ५। १५)

जल (भगवच्चरणामृत) से तुलसी-भक्षण करे। फिर शेष दिन सांसारिक व्यवहारमें व्यतीत करे। सायंकालमें पुनः भगवान् विष्णुके मन्दिरमें जाय और सन्ध्या करके शक्तिके अनुसार दीपदान करे। भगवान् विष्णुको प्रणाम करके उनकी आरती उतारे और स्तोत्रपाठ आदि करते हुए प्रथम प्रहरमें जागरण करे। प्रथम प्रहर बीत जानेपर शयन करे। ब्रह्मचर्यव्रतका पालन करे। इस प्रकार एक मासतक प्रतिदिन शास्त्रोक्त विधिका पालन करे। जो कार्तिकमासमें उत्तम व्रतका पालन करता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो भगवान् विष्णुके सालोक्यको प्राप्त होता है।

कार्तिकमास आनेपर निषिद्ध वस्तुओंका त्याग करना चाहिये। तेल लगाना, परान्न भोजन करना, तेल खाना, जिसमें बहुत-से बीज हों ऐसे फलोंका सेवन तथा चावल और दाल—ये सभी कार्तिकमासमें त्याज्य हैं। लौकी, गाजर, बैगन, वनभंटा (ऊंटकटारा), बासी अन्न, भँसीड़, मसूर, दुबारा भोजन, मदिरा, पराया अन्न, काँसीके पात्रमें भोजन, छत्राक, काँजी, दुर्गन्धित पदार्थ, समुदाय (संस्था आदि)-का अन्न, वेश्याका अन्न, ग्रामपुरोहित और शूद्रका अन्न और सूतकका अन्न—ये सभी त्याग देने योग्य हैं। श्राद्धका अन्न, रजस्वलाका दिया हुआ अन्न, जननाशौचका अन्न और लसोड़ेका फल—इन्हें कार्तिकव्रतका पालन करनेवाला पुरुष अवश्य त्याग दे। निषिद्ध पत्तलोंमें भोजन न करे। महुआ, केला, जामुन और पकड़ी—इनके पत्तोंमें भोजन करना चाहिये। कमलके पत्तेपर कदापि भोजन न करे। कार्तिकमास आनेपर जो वनवासी मुनियोंके अनुसार नियमित भोजन करता है, वह चक्रपाणि भगवान् विष्णुके परम धाममें जाता है। कार्तिकमें प्रातःकाल स्नान और भगवान्‌की पूजा करनी चाहिये। उस समय कथाश्रवण उत्तम माना गया है। कार्तिकमें केला और आँवलेके फलका

दान करे और शीतसे कष्ट पानेवाले ब्राह्मणको कपड़ा दे। जो कार्तिकमें भक्तिपूर्वक भगवान् विष्णुको तुलसीदल समर्पित करता है, वह संसारसे मुक्त हो भगवान् विष्णुके परम पदको प्राप्त होता है। श्रीहरिके परम प्रिय कार्तिकमासमें जो नित्य गीतापाठ करता है, उसके पुण्यफलका वर्णन सैकड़ों वर्षोंमें भी नहीं किया जा सकता। जो श्रीमद्भागवतका भी श्रवण करता है वह सब पापोंसे मुक्त हो परम शान्तिको प्राप्त होता है*। जो कार्तिककी एकादशीको निराहार रहकर व्रत करता है, वह निःसन्देह पूर्वजन्मके पापोंसे मुक्त हो जाता है। जो कार्तिकमें भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताके लिये दूसरेके अन्नका त्याग करता है, वह भगवान् विष्णुके प्रेमको भलीभाँति प्राप्त करता है। जो राह चलकर थके-माँदे और भोजनके समयपर घरपर आये हुए अतिथिका भक्तिपूर्वक पूजन करता है वह सहस्रों जन्मोंके पापका नाश कर डालता है। जो मूढ़ मानव वैष्णव महात्माओंकी निन्दा करते हैं, वे अपने पितरोंके साथ महारौरव नरकमें गिरते हैं। जो भगवान्की और भगवद्भक्तोंकी निन्दा सुनते हुए भी वहाँसे दूर नहीं हट जाता वह भगवान्का प्रिय भक्त नहीं है। जो कार्तिकमासमें भगवान् विष्णुकी परिक्रमा करता है उसे पग-पगपर अश्वमेध-यज्ञका फल प्राप्त होता है। जो कार्तिकमासमें परायी स्त्रीके साथ सङ्गम करता है, उसके पापकी शान्ति कैसे होगी, यह बताना असम्भव है। जिसके ललाटमें तुलसीकी मृत्तिकाका तिलक दिखायी देता है, उसकी ओर देखनेमें यमराज भी समर्थ नहीं हैं; फिर उनके भयानक दूतोंकी तो बात ही क्या? कार्तिकमें भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताके लिये धर्मका अनुष्ठान

---

* गीतापाठं तु यः कुर्यात् कार्तिके विष्णुवल्लभे । तस्य पुण्यफलं वक्तुं नालं वर्षशतैरपि ॥
श्रीमद्भागवतस्यापि श्रवणं यः समाचरेत् । सर्वपापविनिर्मुक्तः परं निर्वाणमृच्छति ॥
(स्क० पु० वै० का० मा० ६। १९-२०)

करना चाहिये। मासव्रतकी समाप्ति होनेपर उस व्रतकी पूर्णताके लिये श्रेष्ठ ब्राह्मणको दान देना चाहिये। जो कार्तिकमें भगवान् विष्णुके मन्दिरमें चूना आदिका लेप कराता है या तसवीर आदि लिखता है, वह भगवान् विष्णुके समीप आनन्दका अनुभव करता है। जो ब्राह्मण कार्तिकमासमें गभस्तीश्वरके समीप शतरुद्रीका जप करता है, उसके मन्त्रकी सिद्धि होती है। जिन्होंने तीन वर्षोंतक काशीमें रहकर भक्तिपूर्वक साङ्गोपाङ्ग कार्तिकव्रतका अनुष्ठान किया है, उन्हें सम्पत्ति, सन्तति, यश तथा धर्मबुद्धिकी प्राप्तिके द्वारा इस लोकमें ही उस व्रतका प्रत्यक्ष फल दिखायी देता है। कार्तिकमें प्याज, शृंग (सिंघाड़ा), सेज, बेर, राई, नशीली वस्तु, चिउड़ा—इन सबका उपयोग न करे। कार्तिकका व्रत करनेवाला मनुष्य देवता, वेद, ब्राह्मण, गुरु, गौ, व्रती, स्त्री, राजा और महात्माओंकी निन्दा न करे। कार्तिकमें केवल नरकचतुर्दशी (दिवालीके एक रोज पहले) को शरीरमें तेल लगाना चाहिये। उसके सिवा और किसी दिन व्रती मनुष्य तेल न लगावे। नालिका, मूली, कुम्हड़ा, कैथ इनका भी त्याग करे। रजस्वला, चाण्डाल, म्लेच्छ, पतित, व्रतहीन, ब्राह्मणद्वेषी और वेद-बहिष्कृत लोगोंसे व्रती मनुष्य बातचीत न करे।

## कार्तिकव्रतसे एक पतित ब्राह्मणीका उद्धार तथा दीपदान एवं आकाशदीपकी महिमा

**ब्रह्माजी कहते हैं**—स्त्रियों और पुरुषोंने जन्मसे लेकर जो पाप किया है, वह सब कार्तिकमें दीपदानसे नष्ट हो जाता है। इस विषयमें मैं तुमसे एक प्राचीन इतिहासका वर्णन करता हूँ। पूर्वकालमें द्रविड़देशमें एक बुद्ध नामक ब्राह्मण रहता था। उसकी स्त्री बड़ी

दुष्टा और दुराचारपरायणा थी। उसके संसर्गदोषसे पतिकी आयु क्षीण हो गयी और वह मृत्युको प्राप्त हुआ। पतिके मर जानेपर भी वह विशेषरूपसे व्यभिचारमें लग गयी। उसको लोकनिन्दासे तनिक भी लज्जा नहीं होती थी। उसके न तो कोई पुत्र था और न भाई ही। वह सदा भिक्षाके अन्नका भोजन करती थी। अपने हाथसे बनाये हुए शुद्ध और स्वल्प अन्नको कभी न खाकर माँगकर लाये हुए बासी अन्नको ही खाती थी। दूसरेके घर रसोई बनाया करती और तीर्थयात्रा आदिसे दूर रहती थी। उसने कभी कथा भी नहीं सुनी थी। एक दिन तीर्थयात्रामें लगा हुआ कोई विद्वान् ब्राह्मण उसके घरपर आया। उसका नाम कुत्स था। उसको व्यभिचारमें आसक्त देखकर उस ब्रह्मर्षिश्रेष्ठ कुत्सने कहा—'ओ मूढ़ नारी! तू मेरी बातको ध्यान देकर सुन। पृथ्वी आदि पाँच भूतोंसे बने हुए और पीब एवं रक्तसे भरे हुए इस शरीरको, जो केवल दुःखका ही कारण है, तू क्यों पोसती है? अरी! यह देह पानीके बुलबुलेके समान है, एक दिन इसका नाश होना निश्चित है। इस अनित्य शरीरको यदि तू नित्य मानती है तो अपने मनमें बैठे हुए इस मोहको विचारपूर्वक त्याग दे। सबसे श्रेष्ठ देवता भगवान् विष्णुका चिन्तन कर और उन्हींकी लीला-कथाको आदरपूर्वक सुन और जब कार्तिकमास आवे, तब भगवान् दामोदरकी प्रीतिके लिये स्नान, दान आदि कर, दीपदान दे, भगवान् विष्णुकी परिक्रमा करके उन्हें प्रणाम कर। यह व्रत विधवा और सौभाग्यवती सभी स्त्रियोंके करनेयोग्य है, यह सब पापोंकी शान्ति और समस्त उपद्रवोंका नाश करनेवाला है। कार्तिकमासमें निश्चय ही दीपदान भगवान् विष्णुकी प्रसन्नता बढ़ानेवाला है।'

ऐसा कहकर कुत्स ब्राह्मण दूसरेके घर चला गया और वह

ब्राह्मणी भी कुत्सकी बात सुनकर पश्चात्ताप करती हुई इस निश्चयपर पहुँची कि मैं कार्तिकमासमें अवश्य व्रत करूँगी। तत्पश्चात् कार्तिकमास आनेपर उसने पूरे महीनेभर प्रातः सूर्योदयकालमें स्नान और दीपदान किया। तदनन्तर कुछ कालके बाद आयु समाप्त होनेपर उसकी मृत्यु हो गयी। वह स्वर्गलोकमें गयी और समयानुसार उसकी मुक्ति भी हो गयी। कार्तिकके व्रतमें तत्पर हो दीपदान आदि करनेवाला जो इस दीपदानका इतिहास सुनता है, वह मोक्षको प्राप्त होता है।

नारद! अब आकाशदीपका माहात्म्य सुनो। कार्तिकमास आनेपर जो प्रातःस्नानमें तत्पर हो आकाशदीपका दान करता है, वह सब लोकोंका स्वामी और सब सम्पत्तियोंसे सम्पन्न होकर इस लोकमें सुख भोगता और अन्तमें मोक्षको प्राप्त होता है। इसलिये कार्तिकमें स्नान-दान आदि कर्म करते हुए भगवान् विष्णुके मन्दिरके कँगूरेपर एक मासतक अवश्य दीपदान करना चाहिये। महाराज सुनन्दने चन्द्रशर्मा ब्राह्मणके बताये अनुसार एक मासतक विधिपूर्वक व्रत किया। वे कार्तिकमें प्रतिदिन प्रातःकाल स्नान करके पवित्र होते और कोमल तुलसीदलोंसे भगवान् विष्णुकी पूजा करके रातमें उनके लिये आकाशदीप देते थे। दीप देनेके समय वे इस मन्त्रका उच्चारण करते थे—

**दामोदराय विश्वाय विश्वरूपधराय च।**
**नमस्कृत्वा प्रदास्यामि व्योमदीपं हरिप्रियम्॥**

'मैं सर्वस्वरूप एवं विश्वरूपधारी भगवान् दामोदरको नमस्कार करके यह आकाशदीप देता हूँ, जो भगवान्‌को परम प्रिय है।'

'देवेश्वर! इस व्रतसे आपमें मेरी भक्ति बढ़े' इस भावसे प्रार्थना करके राजा सुनन्द दीपदान करते थे। ब्राह्ममुहूर्तमें उठकर वे पुनः आकाशदीप देते थे। उनका प्रातःकाल स्नान और भगवान् विष्णुकी पूजाका क्रम नियमपूर्वक चलता रहा। मासकी समाप्तिपर उन्होंने व्रतका

उद्यापन करके आकाशदीपके नियमको भी समाप्त किया और ब्राह्मणोंको भोजन कराकर इस विष्णुव्रतकी पूर्ति की। इस पुण्यके प्रभावसे राजाने इस लोकमें स्त्री, पुत्र, पौत्र और स्वजनोंके साथ लाख वर्षोंतक पार्थिव भोगोंका उपभोग किया और अन्तमें स्त्रियोंसहित सुन्दर विमानपर आरूढ़ हो चार भुजाधारी, शङ्ख, चक्र, गदा आदि आयुधोंसे सुशोभित, पीताम्बरधारी विष्णुका-सा दिव्य शरीर पाकर मोक्षका आश्रय लिया। वे विष्णुलोकमें भगवान् विष्णुके ही समान सुखपूर्वक रहने लगे। अत: कार्तिकमासमें दुर्लभ मनुष्य-जन्मको पाकर भगवान् विष्णुको प्रिय लगनेवाले आकाशदीपका विधिपूर्वक दान देना चाहिये। जो संसारमें भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताके लिये आकाशदीप देते हैं, वे कभी अत्यन्त क्रूर मुखवाले यमराजका दर्शन नहीं करते।

एकादशीसे, तुलाराशिके सूर्यसे अथवा पूर्णिमासे लक्ष्मीसहित भगवान् विष्णुकी प्रसन्नताके लिये आकाशदीप प्रारम्भ करना चाहिये।

**नम: पितृभ्य: प्रेतेभ्यो नमो धर्माय विष्णवे।**
**नमो यमाय रुद्राय कान्तारपतये नम:॥**

'पितरोंको नमस्कार है, प्रेतोंको नमस्कार है, धर्मस्वरूप विष्णुको नमस्कार है, यमराजको नमस्कार है तथा दुर्गम पथमें रक्षा करनेवाले भगवान् रुद्रको नमस्कार है।'

—इस मन्त्रसे जो मनुष्य पितरोंके लिये आकाशमें दीपदान करते हैं, उनके वे पितर नरकमें हों तो भी उत्तम गतिको प्राप्त होते हैं। जो देवालयमें, नदीके किनारे, सड़कपर तथा नींद लेनेके स्थानमें दीप देता है, उसे सर्वतोमुखी लक्ष्मी प्राप्त होती हैं। जो ब्राह्मण या अन्य जातिके मन्दिरमें दीपक जलाता है, वह विष्णुलोकमें प्रतिष्ठित होता है। जो कीट और काँटोंसे भरी हुई दुर्गम एवं ऊँची-नीची भूमिपर दीप-दान करता है, वह नरकमें नहीं पड़ता है। पूर्वकालमें

राजा धर्मनन्दनने आकाशदीप-दानके प्रभावसे श्रेष्ठ विमानपर आरूढ़ हो विष्णुलोकको प्रस्थान किया। जो कार्तिकमासमें हरिबोधिनी एकादशीको भगवान् विष्णुके आगे कपूरका दीपक जलाता है, उसके कुलमें उत्पन्न हुए सभी मनुष्य भगवान् विष्णुके प्रिय भक्त होते और अन्तमें मोक्ष प्राप्त करते हैं। पूर्वकालमें कोई गोप अमावास्या तिथिको भगवान् विष्णुके मन्दिरमें दीपक जलाकर तथा बार-बार जय-जयका उच्चारण करके राजराजेश्वर हो गया था।

## कार्तिकमें तुलसी-वृक्षके आरोपण और पूजन आदिकी महिमा

**ब्रह्माजी कहते हैं**—कार्तिकमासमें जो विष्णुभक्त पुरुष प्रातःकाल स्नान करके पवित्र हो कोमल तुलसीदलसे भगवान् दामोदरकी पूजा करता है, वह निश्चय ही मोक्ष प्राप्त कर लेता है। जो भक्तिसे रहित है, वह यदि सुवर्ण आदिसे भगवान्की पूजा करे तो भी वे उसकी पूजा ग्रहण नहीं करते। सभी वर्णोंके लिये भक्ति ही सबसे उत्कृष्ट मानी गयी है। भक्तिहीन कर्म भगवान् विष्णुको प्रसन्न करनेवाला नहीं होता। यदि तुलसीके आधे पत्तेसे भी प्रतिदिन भक्तिपूर्वक भगवान्की पूजा की जाय तो भी वे स्वयं आकर दर्शन देते हैं। पूर्वकालमें भक्त विष्णुदास भक्तिपूर्वक तुलसी-पूजनसे शीघ्र ही विष्णुधामको चला गया और राजा चोल उसकी तुलनामें गौण हो गये। अब तुलसीका माहात्म्य सुनो—वह पापका नाश और पुण्यकी वृद्धि करनेवाली है। अपनी लगायी हुई तुलसी जितना ही अपने मूलका विस्तार करती है, उतने ही सहस्र युगोंतक मनुष्य ब्रह्मलोकमें प्रतिष्ठित होता है। यदि कोई तुलसीसंयुक्त जलमें स्नान करता है तो वह सब पापोंसे मुक्त हो भगवान्

विष्णुके लोकमें आनन्दका अनुभव करता है। महामुने! जो लगानेके लिये तुलसीका संग्रह करता और लगाकर तुलसीका वन तैयार कर देता है, वह उतनेसे ही पापमुक्त हो ब्रह्मभावको प्राप्त होता है। जिसके घरमें तुलसीका बगीचा विद्यमान है, उसका वह घर तीर्थके समान है, वहाँ यमराजके दूत नहीं जाते। तुलसीवन सब पापोंको नष्ट करनेवाला, पुण्यमय तथा अभीष्ट कामनाओंको देनेवाला है। जो श्रेष्ठ मानव तुलसीका बगीचा लगाते हैं, वे यमराजको नहीं देखते। जो मनुष्य तुलसीकाष्ठसंयुक्त गन्ध धारण करता है, क्रियमाण पाप उसके शरीरका स्पर्श नहीं करता। जहाँ तुलसीवनकी छाया होती है, वहीं पितरोंकी तृप्तिके लिये श्राद्ध करना चाहिये। जिसके मुखमें, कानमें और मस्तकपर तुलसीका पत्ता दिखायी देता है, उसके ऊपर यमराज भी दृष्टि नहीं डाल सकते; फिर दूतोंकी तो बात ही क्या है। जो प्रतिदिन आदरपूर्वक तुलसीकी महिमा सुनता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो ब्रह्मलोकको जाता है।

पूर्वकालकी बात है, काश्मीर देशमें हरिमेधा और सुमेधा नामक दो ब्राह्मण थे, जो भगवान् विष्णुकी भक्तिमें संलग्न रहते थे। उनके हृदयमें सम्पूर्ण प्राणियोंके प्रति दया थी। वे सब तत्त्वोंका यथार्थ मर्म समझनेवाले थे। किसी समय वे दोनों श्रेष्ठ ब्राह्मण तीर्थयात्राके लिये चले। जाते-जाते किसी दुर्गम वनमें वे परिश्रमसे व्याकुल हो गये; वहाँ उन्होंने एक स्थानपर तुलसीका वन देखा। उनमेंसे सुमेधाने वह तुलसीका महान् वन देखकर उसकी परिक्रमा की और भक्तिपूर्वक प्रणाम किया। यह देख हरिमेधाने तुलसीका माहात्म्य और फल जाननेके लिये बड़ी प्रसन्नताके साथ बार-बार पूछा—'ब्रह्मन्! अन्य देवताओं, तीर्थों, व्रतों और मुख्य-मुख्य ब्राह्मणोंके रहते हुए तुमने तुलसीवनको क्यों प्रणाम किया है?'

**सुमेधा बोला**—महाभाग! सुनो। यहाँ धूप सता रही है, इसलिये हमलोग उस बरगदके समीप चलें। उसकी छायामें बैठकर मैं यथार्थरूपसे सब बात बताऊँगा।

**वहाँ विश्राम करके सुमेधाने हरिमेधासे कहा**—विप्रवर! पूर्वकालमें दुर्वासाके शापसे जब इन्द्रका ऐश्वर्य छिन गया था, उस समय ब्रह्मा आदि देवताओं और असुरोंने मिलकर क्षीरसागरका मन्थन किया। उससे ऐरावत हाथी, कल्पवृक्ष, चन्द्रमा, लक्ष्मी, उच्चैःश्रवा घोड़ा, कौस्तुभमणि तथा धन्वन्तरिरूप भगवान् श्रीहरि और दिव्य ओषधियाँ प्रकट हुईं। तदनन्तर अजरता और अमरता प्रदान करनेवाले उस अमृतकलशको दोनों हाथोंमें लिये हुए श्रीविष्णु बड़े हर्षको प्राप्त हुए। उनके नेत्रोंसे आनन्दाश्रुकी कुछ बूँदें उस अमृतके ऊपर गिरीं। उनसे तत्काल ही मण्डलाकार तुलसी उत्पन्न हुईं। इस प्रकार वहाँ प्रकट हुई लक्ष्मी तथा तुलसीको ब्रह्मा आदि देवताओंने श्रीहरिकी सेवामें समर्पित किया और भगवान्‌ने उन्हें ग्रहण कर लिया। तबसे तुलसीजी जगदीश्वर श्रीविष्णुकी अत्यन्त प्रिय करनेवाली हो गयीं। सम्पूर्ण देवता भगवत्प्रिया तुलसीकी श्रीविष्णुके समान ही पूजा करते हैं। भगवान् नारायण संसारके रक्षक हैं और तुलसी उनकी प्रियतमा हैं; इसलिये मैंने उन्हें प्रणाम किया है।

सुमेधा इस प्रकार कह ही रहे थे कि सूर्यके समान अत्यन्त तेजस्वी एक विशाल विमान उनके निकट ही दिखायी दिया। उन दोनोंके आगे ही वह बरगदका वृक्ष गिर पड़ा और उससे दो दिव्य पुरुष निकले जो अपने तेजसे सूर्यके समान सम्पूर्ण दिशाओंको प्रकाशित कर रहे थे। उन दोनोंने हरिमेधा और सुमेधाको प्रणाम किया। उन्हें देखकर वे दोनों ब्राह्मण भयसे विह्वल हो गये और आश्चर्यचकित होकर बोले—आप दोनों कौन हैं? देवताओंके समान आपका

सर्वमङ्गलमय स्वरूप है। आप नूतन मन्दारकी माला धारण किये कोई देवता प्रतीत हो रहे हैं।' उन दोनोंके इस प्रकार पूछनेपर वृक्षसे निकले हुए पुरुष बोले—'विप्रवरो! आप दोनों ही हमारे माता-पिता और गुरु हैं, बन्धु आदि भी आप ही दोनों हैं।'

इतना कहकर उनमेंसे जो ज्येष्ठ था, वह बोला—'मेरा नाम आस्तीक है, मैं देवलोकका निवासी हूँ। एक दिन मैं नन्दनवनमें एक पर्वतपर क्रीडा करनेके लिये गया। वहाँ देवाङ्गनाओंने मेरे साथ इच्छानुसार विहार किया। उस समय युवतियोंके मोती और बेलाके हार तपस्या करते हुए लोमश मुनिके ऊपर गिर पड़े। वह सब देखकर मुनिको बड़ा क्रोध हुआ। उन्होंने सोचा स्त्रियाँ तो परतन्त्र होती हैं, अतः यह उनका अपराध नहीं है। यह दुराचारी आस्तीक ही शाप पानेयोग्य है। ऐसा निश्चय करके उन्होंने मुझे शाप दिया—'अरे, तू ब्रह्मराक्षस होकर बरगदके वृक्षपर निवास कर।' फिर मैंने विनयपूर्वक जब उन्हें प्रसन्न किया तब उन्होंने इस शापसे मुक्त होनेकी अवधि भी निश्चित कर दी। 'जब तू किसी ब्राह्मणके मुखसे भगवान् विष्णुका नाम और तुलसीदलकी महिमा सुनेगा तब तत्काल तुझे उत्तम मोक्ष प्राप्त होगा।' इस प्रकार मुनिका शाप पाकर मैं चिरकालसे अत्यन्त दुःखी हो इस वटवृक्षपर निवास करता था। आज दैववश आप दोनोंके दर्शनसे मुझे निश्चय ही ब्राह्मणके शापसे छुटकारा मिल गया। अब मेरे इस दूसरे साथीकी कथा सुनिये—ये पहले एक श्रेष्ठ मुनि थे और सदा गुरुकी सेवामें ही लगे रहते थे। एक समय गुरुकी आज्ञाका उल्लङ्घन करके ये ब्रह्मराक्षसभावको प्राप्त हो गये, किंतु आपके प्रसादसे इस समय इनकी भी ब्राह्मणके शापसे मुक्ति हो गयी। आप दोनोंने तीर्थयात्राका फल तो यहीं साध लिया।

ऐसा कहकर वे दोनों उन श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको बार-बार प्रणाम करके

उनकी आज्ञा ले प्रसन्नतापूर्वक दिव्य धामको गये। तत्पश्चात् वे दोनों श्रेष्ठ मुनि परस्पर पुण्यमयी तुलसीकी प्रशंसा करते हुए तीर्थयात्राके लिये चल दिये। इसलिये भगवान् विष्णुको प्रसन्नता देनेवाले इस कार्तिकमासमें तुलसीकी पूजा अवश्य करनी चाहिये।

## त्रयोदशीसे लेकर दीपावलीतकके उत्सवकृत्यका वर्णन

**ब्रह्माजी कहते हैं**—कार्तिक कृष्णा त्रयोदशीको प्रातःकाल दन्तधावन करके स्नान करे और त्रिरात्रिव्रतका नियम लेकर भगवान् गोविन्दके भजनमें तत्पर रहे तथा इस व्रतके अन्तमें गोवर्द्धनोत्सव मनावे। त्रयोदशी तीन मुहूर्तसे अधिक हो तो वह इस व्रतमें ग्राह्य है; परतिथिसे वेध होना दोषकी बात नहीं है। कार्तिकके कृष्णपक्षमें त्रयोदशीके प्रदोषकालमें यमराजके लिये दीप और नैवेद्य समर्पित करे तो अपमृत्यु (अकालमृत्यु या दुर्मरण) का नाश होता है।

**एक दिन यमदूतोंने यमराजसे कहा**—प्रभो! ऐसे महोत्सवके अवसरपर जिस प्रकार जीव अपने जीवनसे वियुक्त न हो, वह उपाय हमारे आगे वर्णन कीजिये।

**यमराजने कहा**—कार्तिक कृष्णा त्रयोदशीको प्रतिवर्ष प्रदोषकालमें जो अपने घरके दरवाजेपर निम्राङ्कित मन्त्रसे उत्तम दीप देता है, वह अपमृत्युको प्राप्त होनेपर भी यहाँ ले आने योग्य नहीं है। वह मन्त्र इस प्रकार है—

**मृत्युना पाशदण्डाभ्यां कालेन च मया सह।**
**त्रयोदश्यां दीपदानात् सूर्यजः प्रीयतामिति॥**

'त्रयोदशीको दीपदान करनेसे मृत्यु, पाश, दण्ड, काल और लक्ष्मीके साथ सूर्यनन्दन यम प्रसन्न हों।'

इस मन्त्रसे जो अपने द्वारपर उत्सवमें दीपदान करता है, उसे अपमृत्युका भय नहीं होता। दीपावलीके पहलेकी चतुर्दशीको तेलमात्रमें लक्ष्मी और जलमात्रमें गङ्गा निवास करती हैं। जो उस दिन प्रातःकाल स्नान करता है, वह यमलोक नहीं देखता। नरकभयका नाश करनेके लिये स्नानके बीचमें अपामार्ग (चिच्चिड़ा) को मस्तकपर घुमावे। तीन बार मन्त्र पढ़कर तीन ही बार घुमाना चाहिये। मन्त्र इस प्रकार है—

**सीतालोष्ठसमायुक्त सकण्टकदलान्वित।**
**हर पापमपामार्ग भ्राम्यमाणः पुनः पुनः॥**

'जोते हुए खेतके ढेलेसे युक्त और कण्टकविशिष्ट पत्तोंसे सुशोभित अपामार्ग! तुम बार-बार घुमाये जानेपर मेरे पापोंको हर लो।'

ऐसा कहकर अपने सिरपर अपामार्ग घुमावे। स्नान करके भीगे वस्त्रसे मृत्युके पुत्ररूप दो कुत्तोंको दीपदान दे। उस समय यह मन्त्र पढ़े—

**शुनकौ श्यामशवलौ भ्रातरौ यमसेवकौ।**
**तुष्टौ स्यातां चतुर्दश्यां दीपदानेन मृत्युजौ॥**

'काले और चितकबरे रंगके दो श्वान जो मृत्युके पुत्र, यमराजके सेवक तथा परस्पर भाई हैं, चतुर्दशीको दीपदान करनेसे मुझपर प्रसन्न हों।'

फिर स्नानाङ्गतर्पण करनेके पश्चात् चौदह यमोंका तर्पण करे, जिनके नाम-मन्त्र इस प्रकार हैं—

**यमाय धर्मराजाय मृत्यवे चान्तकाय च।**
**वैवस्वताय कालाय सर्वभूतक्षयाय च॥**
**औदुम्बराय दध्नाय नीलाय परमेष्ठिने।**
**वृकोदराय चित्राय चित्रगुप्ताय ते नमः॥**

ये चौदह नाम-मन्त्र हैं। इनमेंसे प्रत्येकके अन्तमें नमः पद जोड़कर बोले और एक-एक मन्त्रको तीन-तीन बार कहकर तिलमिश्रित

जलकी तीन-तीन अञ्जलियाँ दे। यमराजका तर्पण यज्ञोपवीती होकर अर्थात् यज्ञोपवीतको बायें कन्धेपर रखकर अथवा प्राचीनावीती होकर (जनेऊको दाहिने कन्धेपर करके) भी किया जा सकता है। क्योंकि यमराज देवता और पितर दोनों ही पदोंपर स्थित हैं। अतः उनमें उभयरूपता है। जिसके पिता जीवित हों वह भी यम और भीष्मके लिये तर्पण कर सकता है। कार्तिक कृष्णा चतुर्दशीको यदि अमावास्या भी हो और उसमें स्वाती नक्षत्रका योग हो तो उसी दिन दीपावली होती है। उस दिनसे आरम्भ करके तीन दिनोंतक दीपोत्सव करना चाहिये। क्योंकि एक समय राजा बलिने भगवान्से यह वर माँगा था कि 'मैंने छद्मसे वामनरूप धारण करनेवाले आपको भूमिदान दी है और आपने उसे तीन दिनोंमें तीन पगोंद्वारा नाप लिया है, अतः आजसे लेकर तीन दिनोंतक प्रतिवर्ष पृथ्वीपर मेरा राज्य रहे। उस समय जो मनुष्य पृथ्वीपर दीपदान करें, उनके घरमें आपकी पत्नी लक्ष्मी स्थिरभावसे निवास करें।'

दैत्यराज बलिको भगवान् विष्णुने चतुर्दशीसे लेकर तीन दिनोंतकका राज्य दिया है। इसलिये इन तीन दिनोंमें यहाँ सर्वथा महोत्सव करना चाहिये। चतुर्दशीकी रात्रिमें देवी महारात्रिका प्रादुर्भाव हुआ है, अतः शक्तिपूजापरायण पुरुषोंको चतुर्दशीका उत्सव अवश्य करना चाहिये। भगवान् सूर्यके तुलाराशिमें स्थित होनेपर चतुर्दशी और अमावास्याकी सन्ध्याके समय मनुष्य हाथमें उल्का लेकर पितरोंको मार्ग-प्रदर्शन करावें। कार्तिकमासमें चतुर्दशी आदि तीन तिथियाँ दीपदान आदिके कार्योंमें ग्रहण करनेयोग्य हैं। यदि ये तीन तिथियाँ सङ्गवकालसे पहले ही समाप्त हो जाती हों तो दीपदान आदिके कार्योंमें इन्हें पूर्वतिथिसे युक्त ही ग्रहण करना चाहिये*।

* यदि त्रयोदशी तीन मुहूर्तसे कम हो तो द्वादशी ले लेनी चाहिये।

तदनन्तर अमावास्याके प्रातःकाल स्नान करके भक्तिपूर्वक देवताओं और पितरोंकी पूजा और उन्हें प्रणाम करे। फिर दही, दूध तथा घी आदिसे पार्वण श्राद्ध करे। इस दिन बालकों और रोगियोंके सिवा और किसीको दिनमें भोजन नहीं करना चाहिये। प्रदोषके समय कल्याणमयी लक्ष्मीदेवीका पूजन करे। उस दिन लक्ष्मीजीका सुख बढ़ानेके लिये जो उनके लिये कमलके फूलोंकी शय्या बनाता है, उसके घरको छोड़कर भगवती लक्ष्मी कहीं नहीं जातीं। जावित्री, लवङ्ग, इलायची और कपूरके साथ गायके दूधको अच्छी तरह पकाकर उसमें आवश्यकताके अनुसार शक्कर देकर लड्डू बना ले तथा उन्हें महालक्ष्मीजीको अर्पण करे। पूजाके पश्चात् लक्ष्मीजीकी स्तुति इस प्रकार करनी चाहिये—'दीपककी ज्योतिमें विराजमान महालक्ष्मी! तुम ज्योतिर्मयी हो। सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि, सुवर्ण और तारा आदि सभी ज्योतियोंकी ज्योति हो; तुम्हें नमस्कार है। कार्तिककी दीपावलीके पवित्र दिनको इस भूतलपर और गौओंके गोष्ठमें जो लक्ष्मी शोभा पाती हैं, वे सदा मेरे लिये वरदायिनी हों।'

इस प्रकार स्तुति करनेके पश्चात् प्रदोषकालमें दीपदान करे। अपनी शक्तिके अनुसार देवमन्दिर आदिमें दीपकोंका वृक्ष बनावे। चौराहेपर, श्मशान-भूमिमें, नदीके किनारे, पर्वतपर, घरोंमें, वृक्षोंकी जड़ोंमें, गोशालाओंमें, चबूतरोंपर तथा प्रत्येक गृहमें दीपक जलाकर रखने चाहिये। पहले ब्राह्मणों और भूखे मनुष्योंको भोजन कराकर पीछे स्वयं नूतन वस्त्र और आभूषणसे विभूषित होकर भोजन करना चाहिये। जीवहिंसा, मदिरापान, अगम्यागमन, चोरी और विश्वासघात—ये पाँच नरकके द्वार कहे गये हैं। इनका सदैव त्याग करना चाहिये। तदनन्तर आधी रातके समय नगरकी शोभा देखनेके लिये धीरे-धीरे पैदल चले और उस समयका आनन्दोत्सव देखकर अपने घर लौट आवे।

## कार्तिक शुक्ला प्रतिपदा और यमद्वितीयाके कृत्य तथा बहिनके घरमें भोजनका महत्त्व

**ब्रह्माजी कहते हैं**—तत्पश्चात् प्रतिपद्‌को आरती करके स्वयं वस्त्राभूषणोंसे सुशोभित हो कथा, गायन, कीर्तन और दान आदिके द्वारा दिनको व्यतीत करे। इस दिन स्त्री और पुरुष सभीको तिलका तेल लगाकर स्नान करना चाहिये। इस प्रतिपदाको जो लोग तैल, स्नान आदि पूर्वक पूजन करेंगे, उनका वह सब कुछ अक्षय होगा। संसारमें प्रतिपद् तिथि प्रसिद्ध है, उसे पूर्वविद्धा होनेपर नहीं ग्रहण करना चाहिये। अमावास्याविद्ध प्रतिपदामें तैलाभ्यङ्ग नहीं करना चाहिये, अन्यथा मनुष्य मृत्युको प्राप्त होता है। यदि दूसरे दिन एक घड़ी भी अविद्धा (अमावास्याके वेधसे रहित) प्रतिपदा हो तो उत्सव आदि कार्योंमें मनीषी पुरुषोंको उसे ही ग्रहण करना चाहिये। दूसरे दिन यदि थोड़ी भी प्रतिपदा न हो तो पूर्वविद्धा तिथि ही ग्रहण करनी चाहिये, उस दशामें वह दोषकारक नहीं होती है। जो मनुष्य उस तिथिमें या उस शुभ दिनमें जिस रूपसे स्थित होता है उसी स्थितिमें वह एक वर्षतक रहता है। इसलिये यदि सुन्दर, दिव्य एवं उत्तम भोगोंको भोगनेकी इच्छा हो तो उस दिन मङ्गलमय उत्सव अवश्य करे। प्रात:काल गोवर्द्धनकी पूजा करे। उस समय गौओंको विभूषित करना चाहिये और उनसे बोझ ढोने या दूहनेका काम नहीं लेना चाहिये। गोवर्द्धनपूजनके समय इस प्रकार प्रार्थना करनी चाहिये।

**गोवर्द्धनधराधार गोकुलत्राणकारक।**
**विष्णुबाहुकृतोच्छ्राय गवां कोटिप्रदो भव॥**
**या लक्ष्मीर्लोकपालानां धेनुरूपेण संस्थिता।**
**घृतं वहति यज्ञार्थे मम पापं व्यपोहतु॥**

अग्रतः सन्तु मे गावो गावो मे सन्तु पृष्ठतः।
गावो मे हृदये सन्तु गवां मध्ये वसाम्यहम्॥

'पृथ्वीको धारण करनेवाले गोवर्द्धन! आप गोकुलकी रक्षा करनेवाले हैं। भगवान् विष्णुने अपनी भुजाओंसे आपको ऊँचे उठाया था। आप मुझे कोटि गोदान देनेवाले हों। लोकपालोंकी जो लक्ष्मी यहाँ धेनुरूपसे विराज रही है और यज्ञके लिये घृतका भार वहन करती है, वह मेरे पापोंको दूर करे। गायें मेरे आगे हों, गायें मेरे पीछे हों, गायें मेरे हृदयमें हों और मैं सदा गौओंके मध्यमें निवास करूँ।'

इस प्रकार गोवर्द्धन-पूजा करके उत्तमभावसे देवताओं, सत्पुरुषों तथा साधारण मनुष्योंको सन्तुष्ट करे। अन्य लोगोंको अन्न-पान देकर और विद्वानोंको सङ्कल्पपूर्वक वस्त्र, ताम्बूल आदिके द्वारा प्रसन्न करे। कार्तिक शुक्लपक्षकी यह प्रतिपदा तिथि वैष्णवी कही गयी है। जो लोग सब प्रकारसे सब मनुष्योंको आनन्द देनेवाले दीपोत्सव तथा शुभके हेतुभूत बलिराजका पूजन करते हैं, वे दान, उपभोग, सुख और बुद्धिसे सम्पन्न कुलोंका हर्ष प्राप्त करते हैं और उनका सम्पूर्ण वर्ष आनन्दसे व्यतीत होता है। प्रतिपदा और अमावास्याके योगमें गौओंकी क्रीड़ा उत्तम मानी गयी है। उस दिन गौओंको भोजन आदिसे भलीभाँति पूजित करके अलङ्कारोंसे विभूषित करे और गाने-बजाने आदिके साथ सबको नगरसे बाहर ले जाय। वहाँ ले जाकर सबकी आरती उतारे। ऐसा करनेसे मनुष्य सब पापोंसे मुक्त हो जाता है।

अब तुम मृत्युनाशक यमद्वितीयाव्रतका वर्णन सुनो। द्वितीया तिथिको ब्राह्ममुहूर्तमें उठकर मन-ही-मन अपने हितकी बातोंका चिन्तन करे। तदनन्तर शौच आदिसे निवृत्त हो दन्तधावनपूर्वक प्रातःकाल स्नान करे। फिर श्वेत वस्त्र, श्वेत पुष्पोंकी माला और श्वेत चन्दन धारण करे। नित्यकर्म पूरा करके प्रसन्नतापूर्वक औदुम्बर